RELEVANCE OF SWAMI VIVEKANANDA'S THOUGHTS IN TODAY'S PERSPECTIVE

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में स्वामी विवेकानन्द के चिन्तन की प्रासंगिकता

SEMINAR PAPERS

19 MARCH 2015

SWAMI VIVEKANAND STUDY CENTRE

Km. MAYAWATI GOVT. GIRLS POST GRADUATE COLLEGE

BADALPUR (GAUTAMBUDH NAGAR) U.P. - 203207

RELEVANCE OF SWAMI VIVEKANANDA'S THOUGHTS IN TODAY'S PERSPECTIVE

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में स्वामी विवेकानन्द के चिन्तन की प्रासंगिकता

PROCEEDINGS
NATIONAL SEMINAR

19th MARCH 2015

Sponsored By

UNIVERSITY GRANTS COMMISSION, NEW DELHI

(UNDER THE SCHEME OF EPOCH MAKING SOCIAL THINKERS OF INDIA)

EDITOR-IN-CHIEF

Dr. KISHOR KUMAR

EDITORIAL BOARD

Dr. Divya Nath, Dr. Anita Rani Rathore

Dr. Deepti Bajpai, Dr. Vineeta Singh

SWAMI VIVEKANAND STUDY CENTRE

Km. MAYAWATI GOVT. GIRLS POST GRADUATE COLLEGE

BADALPUR (GAUTAMBUDH NAGAR) U.P.

RELEVANCE OF SWAMI VIVEKANANDA'S THOUGHTS IN TODAY'S PERSPECTIVE

ISBN : 978-93-80216-07-2

© S.V.S. Centre
K.M.G.G.P.G. College, Badalpur

EDITOR-IN-CHIEF
Dr. KISHOR KUMAR

Published by :
Swami Vivekanand Study Centre
Km. Mayawati Govt. Girls Post Graduate College Badalpur
(Gautambudh Nagar) U.P. - 203207

Note : *Views expressed in the articles belong to the authors; the organizers and publisher are not responsible for them. Also, it is assumed that the articles have not been published earlier and are not being considered for any other journal.*

Printed by :
Paras Parkashan, Delhi

वेणु राजामणि
राष्ट्रपति के प्रेस सचिव
Venu Rajamony
Press Secretary to the President

सत्यमेव जयते

राष्ट्रपति सचिवालय,
राष्ट्रपति भवन,
नई दिल्ली–110004

President's Secretariat,
Rashtrapati Bhavan,
New Delhi-110004

संदेश

भारत के राष्ट्रपति, श्री प्रणब मुखर्जी को यह जानकर प्रसन्न्ता हो रही है कि कु. मायावती राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बादलपुर (गौतमबुद्धनगर) द्वारा दिनांक 19 मार्च, 2015 को **'वर्तमान परिप्रेक्ष्य में स्वामी विवेकानंद के चिंतन की प्रासंगिकता'** विषय पर राष्ट्रीय सेमिनार का आयोजन किया गया तथा इस सेमिनार की कार्यवाही रिपोर्ट के रूप में प्रकाशित की जा रही है। आशा है इस रिपोर्ट में प्रकाशित सामग्री संकाय सदस्यों और विद्यार्थियों के लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

राष्ट्रपति जी सेमिनार की कार्यवाही रिपोर्ट के प्रकाशन के लिए अपनी शुभकामनाएँ प्रेषित करते हैं।

वेणु राजामणि
राष्ट्रपति के प्रेस सचिव

SHIV SHANKAR SINGH
Consultant
NCGG
National Centre of Good Governance
(Department of Personnel & Training)
Government of India.

सत्यमेव जयते

Head Office :
Blcok IV, Old JNU Campus,
New Mehrauli Road,
New Delhi-110067 (INDIA)
Tel: 011-26169136/7/9

Message

It is a matter of great delight that Km. Mayawati Govt. Girls Post Graduate College, Badalpur organised a seminar on 'Relevance of Swami Vivekananda's Thoughts in Today's Perspective.'

Swami Vivekananda is the Chief Architect of Indian morality. He was the first spiritual leader who brought name and fame to our country aborad and by addressing the people of USA as brothers and sisters, he at once reached the soul of multitude of Americans and earned prestige, honour and affection for our country.

We all contributed as much as we could when Vivekananda's rock memorial was constructed at the place where he achieved enlightenment. It is a place of pilgrimage.

Swami Vivekananda was very firm in his beliefs and values and he, through Ram Krishna Mission has laid the foundation for selfless service of the humanity by establishing hospitals and schools through which people of all faith and religion are being benefitted. Swami Vivekananda in particular laid great stress on character and determination.

I wish that all the students, faculty and their family members will benefit from the thought sharing seminar and also read think and act upon the ideas generated therein. This Smarika will be a treasure not only for participants but for others also.

With all good wishes

S. S. Singh

Shiv Shankar Singh

 ISBN : 978-93-80216-07-2

DR. ARUN MOHAN SHERRY
Chief Academic Officer
BRIDGE School of Management

Joint Venture of HT Media Ltd.
India & Apollo Global Inc.-USA
NOIDA, India

Message

I am delighted to learn that Swami Vivekananda Study Centre of Km. Mayawati Govt. Girls P. G. College, Badalpur, Gautam Budh Nagar, is organizing a National Seminar on the "Relevance of Swami Vivekananda's Thoughts in Today's Perspective"

Swami Vivekananda was an ineffable personality and was also far ahead of his times. Swami ji understood the problems facing humanity. Through the cause and effect method, he traced the problems and provided solutions not only for immediate relief but also for the future. A social reformer, philosopher and thinker, Swami Vivekananda is regarded as a patriotic saint. His concern was to elevate mankind and subsequently conquer all environments and circumstances. These unique qualities made him a leader of the supreme kind.

As the country celebrates 151st birth anniversary of Swami Vivekananda we remember his teaching on education as quoted. We want that education by which character is formed strength of mind is increased, the intellect is expended, and by which one can stand on one' own feet."

My heartfelt good wishes for the success of the seminar. I also extend my warmest wishes to all members of the college. I am sure that it will continue to maintain its excellence and character with great distinction.

Dr. Arun Mohan Sherry

Dr. Ashwani Kumar Goyal
Joint Secretary
Dept. of Higher Education
U.P. Govt. Lucknow
Mobile : 9868862160
9411089969

Message

It gives me immense pleasure to know that the one day National Seminar on " Relevance of Swami Vivekananda's Thoughts in Today's Perspective" organized by the U.G.C. sponsored Swami Vivekananda Study Centre at Km. Mayawati Government Girls Post Graduate College, Badalpur, Gautam Budha Nagar on 19th March 2015 was a great success. Swami Vivekananda was a man of the millennium, whose views are so relevant even today, that if put in practice, can solve several ills facing society.

It is really praiseworthy that the college is bringing out a compilation of all the papers presented at the seminar. May it get all the success it deserves and prove to be a source of inspiration to all concerned.

Dr. Ashwani Kumar Goyal

 ISBN : 978-93-80216-07-2

चौ॰ चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ
CH. CHARAN SINGH UNIVERSITY, MEERUT

विक्रम चन्द्र गोयल
कुलपति
Vikram Chandra Goel
Vice-Chancellor

Office 0121-2760554, 0121-2760551
Fax 0121-2762838, 0121-2760577
Mobile 09412780999

संदेश

जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि कु. मायावती राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बादलपुर (गौतमबुद्ध नगर) में **''वर्तमान परिप्रेक्ष्य में स्वामी विवेकानन्द के चिन्तन की प्रासंगिकता''** विषय पर विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा अनुदानित एक राष्ट्रीय सेमीनार का आयोजन एवं कार्यवाही ग्रन्थ का प्रकाशन किया जा रहा है।

मैं महाविद्यालय की प्राचार्या, शिक्षकों, कर्मचारियों और छात्राओं को इस अवसर पर शुभकामनाएँ देता हूँ और आशा करता हूँ कि राष्ट्रीय सेमीनार में आमंत्रित प्रतिभागियों के विचार-विमर्श से इस महत्वपूर्ण विषय पर नये शोध के अवसर उदय होंगे।

डॉ. ज्योत्स्ना गर्ग
प्राचार्या
कु. मायावती रा. म. स्ना. महाविद्यालय
बादलपुर, गौतमबुद्धनगर

(विक्रम चन्द्र गोयल)
कुलपति

प्राचार्या की कलम से.....

विवेकानन्द एक ऐसा नाम, एक ऐसा व्यक्तित्व जो सम्मोहन आकर्षण और लोकप्रियता का पर्याय है। विवेकानन्द एक ऐसे यायावर सन्यासी थे, जो ईश्वर के सानिध्य को मानव मात्र में भी महसूस करते थे। आपके ओजस्वी भाषणों को सुनने के लिये देश के ही नहीं अपितु विदेश के लोग भी लालायित रहते थे क्योंकि विवेकानन्द की नैतिक स्वाधीनता, तेजस्वी आदर्शवाद और निर्भय निष्ठा उनके भाषण में परिलक्षित होती थी। विवेकानन्द ने धर्म का पहला कर्त्तव्य निश्चित किया **"दरिद्रजन की सेवा और उनका उत्थान"** विवेकानन्द समस्त मानवीय ऊर्जा के सम्बन्ध के मूर्तिमान आदर्श है। उनका चिंतन सार्वभौम है, जिसमे मानव कल्याण की भावना निहित है। अत: विवेनकानन्द के चिन्तन की प्रासंगिकता कालजयी है।

मैं, विवेकानन्द अध्ययन केन्द्र समन्वयक डॉ. किशोर कुमार को राष्ट्रीय सेमिनार के सफल आयोजन के लिये बधाई देती हूँ साथ ही उन्हें **"वर्तमान परिप्रेक्ष्य में स्वामी विवेकानन्द के चिन्तन की प्रासंगिकता"** जैसे समसामयिक विषय को वैचारिक मंच प्रदान करने तथा सारगर्भित पत्रों को स्मारिका के माध्यम से चिर संचित के लिये भी साधुवाद देती हूँ। स्मारिका के सफल प्रकाशन हेतु मेरी शत्-शत् शुभकामनाऐं।

–डॉ. ज्योत्स्ना गर्ग

प्राचार्या

ISBN : 978-93-80216-07-2

संपादकीय

भारत की सामाजिक संरचना युगों से विविधताओं से समृद्ध किंतु जटिल रही है। भारतीय समाज में विविधता और एकता एक साथ दिखाई देती हैं। यहाँ अनेक धर्म और जातियों के लोग अपनी प्रथाओं, विश्वास एवं धर्म परम्पराओं के साथ अपना-अपना सांस्कृतिक अस्तित्व स्थापित करते रहे हैं। भारतीय विविधताओं का अध्ययन अवधारणागत एकान्तिक मतों को त्यागकर समग्र अनेकान्तवादी संकल्पना से ही संभव है। यह एक वैश्विक सत्य है कि किसी समाज की गतिशीलता उस समाज के व्यक्तियों की मनोदशा, उनकी तार्किकता, वैज्ञानिक अभिरूचि एवं औचित्य की अवधारणा में निहित होती है, जिससे आधुनिक समाज का निर्माण होता है, परन्तु उत्तर आधुनिक सामाजिक संकल्पना उपर्युक्त अवधारणाओं के विभिन्न अवयवों को समग्रता से परीक्षण करने में निहित है। हमारा वर्तमान उत्तर आधुनिक समाज आज भी प्रायः राष्ट्र के समक्ष उपस्थित विभिन्न चुनौतियों, विचारधाराओं, दार्शनिकों और दर्शनों आदि को तर्क रहित अवधारणाओं पर आधारित पूर्वाग्रहों से ग्रस्त अभिव्यक्ति प्रदान करता है। विषयों-मुद्दों, व्यक्तियों एवं दर्शनों के गहन एवं व्यापक अध्ययन के बिना निष्कर्षों पर पहुँचना अकादमिक जगत के लिए ही नहीं वरन् जनसामान्य के लिए भी घातक परिदृश्य है। विभिन्न युग प्रवर्तक महान विभूतियों के व्यक्तित्व एवं कृतित्व से अकादमिक जगत तथा जनसामान्य को अवगत कराने हेतु और उनके सम्बन्ध में तर्क रहित अवधारणाओं के समूल शमन हेतु विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, नई दिल्ली द्वारा ''भारतीय युग प्रवर्तक सामाजिक विचारक'' (Epoch Making Social Thinkers of India) योजना के अन्तर्गत विभिन्न अध्ययन केन्द्रों की स्थापना की गई, जो निःसंदेह एक सराहनीय प्रयास है।

दार्शनिकों का दर्शन, परिकल्पना और प्रतिभा सदैव वैश्विक होती है और साथ ही उनकी दृष्टि किसी एक क्षेत्र तक सीमित न रहकर जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को समृद्ध करती है। स्वामी विवेकानन्द एक युग प्रवर्तक विचारक के रूप में अपने जन्म के 151 वर्ष पश्चात् एवं अपने शरीर त्याग के 112 वर्ष पश्चात् मानवतावाद, धर्म-आध्यात्म, योग कर्म, समाज एवं राष्ट्र आदि समस्त विषयों पर पूर्ण प्रासंगिक हैं। वर्तमान भारत में विभिन्न सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, नैतिक, आर्थिक एवं राजनैतिक चुनौतियाँ विद्यमान हैं यथा धर्म के सम्बन्ध में एकान्तिक दृष्टिकोण ने साम्प्रादियकता के प्रसार में योग दिया है। सामान्यतः धर्म जीवन की अलौकिक आस्था एवं सर्वोच्च सत्य को जानने की अभीप्सा है। जब से मानव ने शब्द संरचना का ज्ञान अर्जित करना प्रारम्भ किया, सभ्यता और संस्कृति के नये-नये सोपान रचना और आचरण संहिता का सृजन कर समाज को सभ्य तरीके से संचालित करने का क्रम आरम्भ हुआ। भौतिक उपलब्धियों का सुख मानव को लम्बे समय तक बांधे नहीं रख सका, फलतः भौतिकता के इतर परमार्थ के धरातल पर कुछ आध्यात्मिक चिंतन की धारा फूटी और विस्तृत हुई। इस आध्यात्मिक चिंतन का लक्ष्य था–शाश्वतः सुख की प्राप्ति और परम सत्ता का दर्शन लाभ। धर्म और आध्यात्मिकता का यह सच्चा स्वरूप विश्व के सभी धर्मों का आधार है। स्वामी विवेकानन्द धर्म के इसी स्वरूप को स्वीकार करते हैं। स्वामी जी की पुस्तक 'धर्म रहस्य' के अनुसार धर्म मानव को बन्धनों से मुक्त करने का सशक्त माध्यम है। परन्तु वर्तमान परिप्रेक्ष्य में जब धर्म-सम्प्रदाय को राजनीति, सत्ता और शक्ति पाने के लोभ से जोड़ दिया जाता हैं तथा धर्म के प्रति संकीर्ण प्रवृत्ति अपनायी जाती है। तब स्वामी विवेकानन्द के विचार अधिक प्रासंगिक हो जाते है।

भारत अपने संक्रमण काल में परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। एक तरफ देश की अधिकांश आबादी युवाओं की है, लेकिन इस सकारात्मक तत्व का बहुआयामी विकास शिक्षा, रोजगार, सेवा एवं उद्यमिता के क्षेत्र

 ISBN : 978-93-80216-07-2

में उनके प्रवेश हेतु सावयविक वातावरण के अभाव में संभव नहीं है। भारतीय अर्थव्यवस्था के विस्तार की गति और वैश्विक अर्थव्यवस्था में बढ़ता स्थान आर्थिक उन्नति के साथ-साथ धनी और निर्धन वर्ग के मध्य के अंतर को विस्तार दे रहा है। यह एक बड़ी चुनौती है। समाज में भ्रष्टाचार चरम पर है और नारियों के प्रति अपराध बढ़ते जा रहे हैं ऐसी परिस्थितियों में स्वामी विवेकानन्द हम सभी के प्रेरणा स्त्रोत है और उनका व्यक्तित्व, कृतित्व और चिन्तन हमारे लिए अनुकरणीय, अपरिहार्य एवं प्रासंगिक प्रतीत होता है। स्वामी जी का जीवन श्रद्धा, साहस, त्याग, सेवा पर आधारित है लेकिन यह श्रद्धा अंध भक्ति नहीं अपितु औचित्य पूर्ण श्रद्धा है। ऐसे दार्शनिक जो अपने समय से आगे के व्यक्ति रहे है, वर्तमान परिप्रेक्ष्य में उनके चिन्तन की प्रासंगिकता पर विमर्श एवं शोध हमें निःसन्देह आलोकित करेगा।

स्वामी विवेकानन्द अध्ययन केन्द्र के तत्वाधान में आयोजित एवं विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा अनुदानित ''वर्तमान परिप्रेक्ष्य में स्वामी विवेकानन्द के चिन्तन की प्रासंगिकता'' विषयक इस राष्ट्रीय सेमिनार का आयोजन स्वामी विवेकानन्द के कालजयी विचारों से विद्वतवर्ग, ज्ञानेच्छुओं एवं विद्यार्थियों को लाभान्वित करने के उद्देश्य से किया गया था। इस उद्देश्य की पृष्ठभूमि में यह दृढ़ विश्वास था कि विवेकानन्द जी का सकारात्मक दृष्टिकोण एवं प्रेरक विचार हमारे जीवन दर्शन एवं हमारी मानसिकता को सकारात्मक ऊर्जा प्रदान कर समाज को एक नवीन दिशा प्रदान करेंगे।

सेमिनार का उद्घाटन माननीय मुख्य अतिथि डॉ॰ अरुण मोहन शैरी, द्वारा विद्या की अधिष्ठानी देवी माँ सरस्वती के सम्मुख दीप प्रज्जवलित कर किया गया। डॉ॰ शैरी ने अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में स्वामी विवेकानन्द के युगयुगीन विचारों की प्रासंगिकता को व्यवहारिक रूप से समझाते हुए बताया कि विवेकानन्द जी धैर्य, साहस, उत्तम चरित्र व अनवरत कर्म को सफलता का मूल मंत्र मानते थे और यही मंत्र आज

समस्त प्रबन्ध तन्त्र व संस्थानों में सफलता के सूत्र के रूप में युवाओं को प्रदान किया जा रहा है। साथ ही उन्होंने आन्तरिक प्रसन्नता पर बल देते हुए कहा कि जो जितना मुस्कराता है वह ईश्वर के उतना ही करीब होता है अतः हमें हर परिस्थिति में अपनी आन्तरिक प्रसन्नता बनाए रखनी है।

सेमिनार के मुख्य वक्ता डॉ॰ संजीव शर्मा, प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान, चौ. चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ ने स्वामी विवेकानन्द के बहुआयामी व्यक्तित्व पर प्रकाश डालते हुए कहा कि युवाओं के प्रेरणा स्त्रोत व आदर्श व्यक्तित्व के धनी स्वामी विवेकानन्द भारतीय नव जागरण के अग्रदूत थे। समस्त विश्व में भारतीय आध्यात्म का परचम लहराने वाले स्वामी जी के विचारों को यदि हम आत्मसात् कर लें तो आज भी समस्त विश्व में भारत को सिरमौर बना सकते है।

किसी भी सेमिनार का सबसे दुरूह कार्य व्यापक विचार मंथन को समय सीमा में इस प्रकार बांधना है, जिससे अपेक्षित अमृत तुल्य तथ्य उभरकर सामने आ जाए। इस दृष्टि से सेमिनार अपने उद्देश्य पूर्ति में सफल रहा क्योंकि तीन तकनीकी सत्रों में विभिन्न विषय विशेषज्ञों एवं प्रतिभागियों द्वारा स्वविचाराभिव्यक्ति से विवेकानन्द जी के अनेक प्रकट व अप्रकट पहलुओं से प्रज्ञ होने का सुअवसर हमें प्राप्त हो सका जो कि इस राष्ट्रीय संगोष्ठी का मुख्य उद्देश्य था।

संगोष्ठी के प्रथम तकनीकी सत्र की अध्यक्षता डॉ॰ राजेश कुमार, एसो. प्रो. इतिहास, दिल्ली विश्वविद्यालय द्वारा, द्वितीय तकनीकी सत्र की अध्यक्षता डॉ॰ वी.के. शनवाल, गौतमबुद्ध विश्वविद्यालय, ग्रेटर नोएडा द्वारा तथा तृतीय तकनीकी सत्र की अध्यक्षता डॉ॰ रंजना जैन, विभागाध्यक्ष–अंग्रेजी, कु. मायावती राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बादलपुर द्वारा की गई।

प्रथम सत्र के मुख्य वक्ता, डॉ॰ दिनेश चहल ने युवा शब्द की

 ISBN : 978-93-80216-07-2

परिभाषा देते हुए कहा कि जोश व उत्साह ही युवा शब्द को परिभाषित करते है। युवाओं में अक्षय उत्साह का होना अनिवार्य है, अन्यथा मात्र आयु के आधार पर युवा शब्द निरर्थक है।

विभिन्न तकनीकी सत्रों में विषय विशेषज्ञों व प्रतिभागियों द्वारा विवेकानन्द जी के जीवन दर्शन, युवाओं एवं महिलाओं के प्रति उनका दृष्टिकोण, उनके ओजस्वी एवं सकारात्मक विचारों की वर्तमान प्रासंगिकता तथा शाश्वता और विवेकानन्द जी के कालजयी व्यक्तित्व से सम्बन्धित विभिन्न बिन्दुओं पर विस्तार से प्रकाश डाला गया।

संगोष्ठी के समापन सत्र के विशिष्ट अतिथि डॉ॰ राजेश कुमार ने अपने वक्तव्य में इस बात पर बल दिया कि आज युवा वर्ग को विवेकानन्द जी के विचारों के अनुरूप सकारात्मक सोच विकसित करने, सामाजिक समानता तथा उत्तम नैतिक शिक्षा प्रदान करने की आवश्यकता है। वर्तमान परिस्थितियों में कोई राजनेता नहीं वरन् विवेकानन्द जी जैसे विचारक व क्रान्तिकारी नेतृत्व समाज की सोच बदलकर एक नवजागृत युग की आधारशिला रख सकते है।

समापन सत्र के अतिथि वक्ता श्री हीरालाल यादव ने स्वामी विवेकानन्द के पदचिह्नों पर चलने वाले मेजर संदीप उन्नीकृष्णन् का मातृत्व प्रेम, कर्त्तव्यबद्धता एवं संवेदनाओं को हृदयस्पर्शी शब्दों के माध्यम से वर्णित किया। साथ ही हर नागरिक से स्वामी विवेकानन्द के विचारों के अनुरूप स्व की भावना का परित्याग कर राष्ट्र हित में सर्वस्व अर्पित करने का आह्वान किया।

संगोष्ठी के अन्त में समापन सत्र की मुख्य अतिथि डॉ॰ ज्योत्स्ना गर्ग, प्राचार्या, कु. मायावती राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बादलपुर द्वारा अत्यधिक सारगर्भित शब्दों में कहा गया कि सकारात्मक सोच वर्तमान समाज की सबसे बड़ी आवश्यकता है। यदि हम विवेकानन्द जी के विचार दर्शन से एक भी सकारात्मक विचार अपने अन्दर

समाहित कर अपने कर्म में ढ़ाल सकते है, तो यह संगोष्ठी अपने उद्देश्य की पूर्ति करने में सफल हो सकती है।

राष्ट्रीय संगोष्ठी के इस कार्यवाही ग्रन्थ के प्रकाशन का निहितार्थ सेमिनार की कार्यवाही को अभिलेख के रूप में संचित करने के साथ-साथ प्रकाशित शोधालेखों के माध्यम से विवेकानन्द जी के युगयुगीन विचारों का व्यापक प्रसार करना भी है जो स्वस्थ मानसिकता से युक्त संतुलित समाज का निर्माण करने की दिशा में सहायक सिद्ध हो सकता है।

महाविद्यालय परिवार एवं आयोजन समिति, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, नई दिल्ली का महाविद्यालय में स्वामी विवेकानंद अध्ययन केंद्र स्थापित करने हेतु आभार व्यक्त करती है। हम डॉ॰ अश्वनी कुमार गोयल, संयुक्त सचिव उच्च शिक्षा, उ.प्र. के प्रति हृदय से आभारी है, जिनकी प्रेरणा के बिना स्वामी विवेकानंद अध्ययन केंद्र की स्थापना संभव नहीं थी। हम विशेष रूप से आभारी है मुख्य अतिथि डॉ॰ अरुण मोहन शैरी जी एवं मुख्य वक्ता डॉ॰ संजीव कुमार शर्मा जी के प्रति जिन्होंने उद्घाटन सत्र का आतिथ्य स्वीकार कर सेमिनार की गरिमा को बढ़ाया।

हम कृतज्ञ है महाविद्यालय की प्राचार्या डॉ॰ ज्योत्स्ना गर्ग जी के प्रति जिनके अमूल्य मार्गदर्शन, अनवरत समर्थन एवं सहयोग से सेमिनार का सफल आयोजन सहज रूप से संभव हो सका।

हम विभिन्न सत्रों की अध्यक्षता करने वाले मुख्य वक्ताओं का भी आभार व्यक्त करते हैं जिन्होंने हमारे आमंत्रण को सहज रूप में स्वीकार अपने सारगर्भित वक्तव्यों से सेमिनार को सार्थक बनाया। देश के विभिन्न भागों से प्रतिभागिता करने आये प्रतिभागी भी धन्यवाद के पात्र हैं, जिन्होंने अपनी उपस्थिति एवं सक्रिय भागीदारी से सेमिनार की संपूर्ण अवधि को जीवंत बनाये रखा।

मैं व्यक्तिगत रूप से महाविद्यालय परिवार के समस्त सदस्यों का धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ जिन्होंने प्रत्येक कार्य में यथासम्भव अपना सहयोग प्रदान कर संगोष्ठी को सफल बनाने में महती भूमिका प्रदान की।

–डॉ॰ किशोर कुमार,

प्रधान सम्पादक एवं सेमिनार संयोजक

CONTENTS

Reflections of Vivekananda's Views on Women and Womanhood 19
Dr. Anita Rani Rathore

Education and Swami Vivekananda : A Critical Appraisal 27
Ms. Ranjana Jain

The Relevance of Swami Vivekanand's Thoughts for the Modern Youth 35
Dr. Divya Nath

Evaluation of Vivekananda's thought on Religion and God in Postmodernist Perspective 41
Dr. Anita Misra,

Religion and Swami Vivekananda 48
Dr. Kishor Kumar & Dr. Sudhir Kumar

Impact of Music in Vivekananda's Life 55
Dr. Dinesh C. Sharma & Dr. Ratna Sherry

Swami Vivekananda and His Methodology, its Significance in Indian Context 59
Dr. Laxmi Prakash

Religious Thoughts of Swami Vivekananda 63
Rohit Kumar

The Power of Youth and Vivekananda 72
Dr.Vineeta Singh & Ms.Shilpi

Religion and Vivekananda 78
Dr. A. K. Mishra

 ISBN : 978-93-80216-07-2

Nation, Nationalism & National Integration : A Perspective of Swami Vivekananda 82
Dr. Gunjan Sachdeva & Dr. Sarita Sharma

Swami Vivekananda's Educational Proposal in Present Context 94
Dr. Amit Kumar

Swami Vivekananda : Philosophy of Education 99
Dr. Sohan Singh & Deepak Singh

Teachings of Swami Vivekananda 107
Dr. Sangita Gupta

Swami Vivekananda : Relevance In Modern Age 118
Dr. Shalja

Role of Swami Vivekananda in National Awakening 131
Ajay Singh & Dr. Yogendra Singh

Synthesizing Tradition and Modernity : The Relevance of Swami Vivekananda in Present Times 141
Dr. Rani Tiwari

Insights from Swami Vivekananda 146
Sunil Kumar

Relevance of Swami Vivekananda's Views on Entrepreneurship in Indian Economy 153
Mrs. BhavnaYadav

स्वामी विवेकानन्द के युवा आह्वान की वर्तमान प्रासंगिकता 157
डॉ॰ दीप्ति वाजपेयी

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में स्वामी विवेकानन्द के शैक्षिक विचारों की प्रासंगिकता 163
श्रीमति रंजीता रानी एवं डॉ॰ हरिन्द्र कुमार

युग प्रणेता-स्वामी विवेकानन्द 172
डॉ॰ अर्चना सिंह एवं डॉ॰ रिचा

लोकनायक स्वामी विवेकानन्द का नारी विषयक दृष्टिकोण 179
डॉ॰ मिन्तु

स्वामी विवेकानन्द के विचारों का महत्व एवं प्रासंगिकता 184
श्रीमती सीमा चौधरी

स्वामी विवेकानन्द : एक विचारधारा 192
डॉ॰ अजय चतुर्वेदी

आज का युवा और स्वामी विवेकानन्द : विचार एवं मूल्य 202
डॉ॰ बॉबी यादव एवं निशा यादव

स्वामी विवेकानन्द : कर्मयोग 207
नीलम शर्मा

बहुमुखी प्रतिभा के धनी-स्वामी विवेकानन्द 217
डॉ॰ शालिनी वर्मा

विवेकानन्द एवं सार्वभौमिक धर्म 223
डॉ॰ शकुन्तला

विवेकानन्द एवं शिकागो धर्म यात्रा (1893) ई॰ 230
सचिन कुमार

स्वामी विवेकानन्द के जनसंस्कृति एवं दलित चेतना सम्बन्धी विचार : एक समग्र अवलोकन 241
डॉ॰ लक्ष्मीना भारती

विवेकानन्द : एक वैचारिक व्यक्तित्व 249
शिखा गोयल

विवेकानन्द के चिंतन में 'माँ' मातृत्व और नारीत्व 254
अरूण कुमार एवं आशु तोमर

आधुनिक भारत में युवाओं के प्रेरणा स्त्रोत स्वामी विवेकानंद 263
योगेश कुमार

भारतीय समाज में विवेकानन्द का योगदान 267
सुरेन्द्र पार्चा

 ISBN : 978-93-80216-07-2

Reflections of Vivekananda's Views on Women and Womanhood

Dr. Anita Rani Rathore
Asso. Prof., English
K.M.G.G.P.G. College, Badalpur

"All nations have attained greatness by paying proper respect to women. That country and that nation which do not respect women have never become great, nor will ever be in future."

Swami Vivekananda (1863-1902), a great philosopher, thinker and reformer of India received a three minute standing ovation from thousands assembled at the World Parliament of Religions at Chicago in 1893, when he began his address with the words, "Sisters and Brothers of America". However, few know about his life and teachings. Fewer still know of his views on women in India.

Born as Narendra Nath Dutta, Vivekananda felt, "the thermometer to progress of a nation is its treatment of its women, and it is impossible to get back India's lost pride and honour unless Indians try to better the conditions of women. He considered men and women as the two wings of a bird and it is not possible for a bird to fly on one wing. As he says, "there is no chance for the welfare of the world unless the condition of women is improved. It is not possible for a bird to fly on only one wing". His father was an intellectual, generous, progressive person who strongly supported re-marriage of widows. His mother was his father's peer in every respect. Exceptionally intelligent with an unusual memory, she was highly respected. She read aloud the Ramayana and Mahabharata to young Naren,

and spoke of the greatness of the sages of India. She sang beautifully, was deeply religious and had absorbed the essence of the epics. Apart from devotion and values, Naren learnt Bengali and English from her. From his father, Naren learnt Music, Sanskrit, as well as generosity and nobility.

In his boyhood he was an exceptional student with a prodigious memory. He was a sports enthusiast who picked up many skills including fencing, rowing, swimming, riding, wrestling and cricket. He was an accomplished cook, and would often prepare feasts for friends. He started as an amateur and then owned his own gymnasium.

Vivekananda did not live to see his fortieth birthday, but achieved a great deal in his short life. His words *on rising above fear and being free* are inspiring, and we can strive to apply them in our own lives. Over a hundred years ago, Vivekananda blamed the neglect of the masses and subjugation of women for India's downfall. He saw empowerment as the answer. On several occasions, he spoke fortnightly about the state of women in India.

"No Hindu can be a priest until he is married, the idea being that a single man is only half a man, and imperfect, the idea of perfect womanhood is perfect independence."

The thoughts of the great monk and person Swami Vivekananda, who was instrumental in the revival of Hinduism in India, in the concept of nationalism in colonial rule and introduction of Indian ethos to the west, have become more relevant in the present scenario when India is finding itself at the crossroads, when more and more women are occupying pride of place in nation building, but sadly where her modesty is under constant attack.

Swami Vivekananda believed that the first manifesta-

 ISBN : 978-93-80216-07-2

tion of God is the hand that rocks the cradle. In fact in few civilizations, like Indian civilization, we find a cow giving milk, the earth bearing grains, a tree bearing fruit and the mother tendering babies being revered equally as manifestations of God. Swami ji very boldly said in those days that in the *West woman was treated as wife while in the East she was treated as the mother.* The highest of all feminine types in India is mother, higher than wife. Wife and children may desert a man, but his mother willnever. Mother is the same or loves her child perhaps a little more. Mother represents colourless love that knows no barter, love that never dies. Who can have such love?— only mother, not son, nor daughter, nor wife. "I am the Power that manifests everywhere", says the Mother –She, who is bringing out this universe, and She who is bringing forth the following destruction. No need to say that destruction is only the beginning of creation. The top of a hill is only the beginning of a valley. Thus he tried to draw a distinct line between materialism and spiritualism in the treatment of women. Though unfortunate, it is a *'fait accompli'* that the once revered mother in India is today waiting at the malnutrition of her babies and outrage to her modesty. Allegorically, it is true in case of the healthy Mother Cow that is slaughtered, the rich mother earth that is exploited selfishly and the mother tree that faces near extinction. It's right time to remember the 'immortal' soul and mend our ways.

The most meaningful and longest social movement still continuing in the present day is the emancipation of women. Though the main purpose for women empowerment is to enhance the quality of life for women, but it is also have deep ramifications in social, economic and political scenario. In a country like India we see that women

have been relegated to a secondary position. The vested interest of the elite class has played an important part in pushing them to oblivion. Swami Vivekananda has been very vocal about the uplift of women clan all through his life. He considered Sita to be the ultimate sign of perfection, which stood as a testimony to the chastity of Indian Women. He said, *"She will always be this glorious Sita, purer than purity itself, all patience and all sufferings. She who suffered that life of suffering without a murmur, she the ever chaste and ever pure wife, she the ideal of the people, the ideal of gods, the great Sita, our national God she must always remain. ...All our mythology may vanish, even our Vedas may depart, and our Sanskrit language may vanish for ever, but so long as there will be five Hindus living here, even if only seeking the most vulgar patois, there will be the story of Sita present."*

Swami Vivekananda held Indian women in high esteem and appreciated their typical Indian features like spirit of service, compassion, affection, contentment and reverence. Swamiji travelled most part of Europe, where he witnessed women driving cars, going to schools, drudging in offices and involved in professional commitments, but according to him, the chastity and feminine modesty of Indian women soothes the eye. He felt that modernization of women society is only possible by following the footprints of Sita.

Swami Vivekananda felt that no nation can grow without taking care of the interest of women. He said, *"All nations have attained greatness by paying proper respect to women. That country and that nation which does not respect women have never become great, nor will ever be in future."*

He felt that Indian women must be given the liberty to live an independent life. They must have the right to take

 ISBN : 978-93-80216-07-2

decisions and, when faced with problems, should learn to solve it themselves. The only interference that can be made is while providing proper education and making them aware of the society. He felt education of women is the only tool to move forward, and a medium which could help to eradicate all grave problems and help to make them the ideal women in the world. There may be problems in between, but none can be so serious that cannot be solved by the magic world "education".

Swami Vivekananda proposed to set up a women's *math*, where religious literature, scriptures, grammar, Sanskrit and even some amount of English would be taught. He though this step was important in order to uplift the inner virtues of women. Women, according to Vivekananda were living embodiment of Divine Mother, and this *math* would help to reach out to various people and spread female education.

When his disciple argued against it, Vivekananda won him over with these words –

"It is very difficult to understand why in this country so much difference is made between men and women, whereas the Vedanta declares that one and the same conscious Self is present in all beings. You always criticise the women, but say what have you done for their uplift? Writing down Smritis etc., and binding them by hard rules, the men have turned the women into mere manufacturing machines! If you do not raise the women, who are the living embodiment of the Divine Mother, don't think that you have any other way to rise."

"In what scriptures do you find statements that women are not competent for knowledge and devotion? In the period of degradation, when the priests made other castes incompetent

for the study of the Vedas, they deprived the women also of all their rights. Otherwise you will find that in the Vedic or Upanishadic age Maitreyi, Gârgi, and other ladies of revered memory have taken the places of Rishis through their skill in discussing about Brahman. In an assembly of a thousand Brahmanas who were all erudite in the Vedas, Gargi boldly challenged Yâjnavalkya in a discussion about Brahman. Since such ideal women were entitled to spiritual knowledge, why shall not the women have the same privilege now? What has happened once can certainly happen again. History repeats itself. All nations have attained greatness by paying proper respect to women. That country and that nation which do not respect women have never become great, nor will ever be in future. The principal reason why your race has so much degenerated is that you have no respect for these living images of Shakti. Manu says, "Where women are respected, there the gods delight; and where they are not, there all works and efforts come to naught." (Manu, III. 56.) There is no hope of rise for that family or country where there is no estimation of women, where they live in sadness. For this reason, they have to be raised first; and an ideal Math has to be started for them."

He refers to the Vedanta Philosophy and quotes from the bookshow women were treated by Hinduism. He lamented why women were treated like that. Woman suffered for aeons and that gave her infinite patience and perseverance. " What great words to say! How many of we men, that feel we are running the family, have a sense of the invisible income she is accruing through her sacrifice for children through physical toil?" He laments that writing down Smritis and binding them by hard rules, men have turned women into manufacturing machines. Great words from a saint that renounced all sensory pleasures nor ex-

 ISBN : 978-93-80216-07-2

posed to vagaries of family life.

He lamented why women are treated as aliens when the same conscious Self is present in all, as per Vedanta. *"Unless you uplift women, men can never rise in the eyes of the Divine"* he stated. He aggrandizes women stating that irrespective of caste they were eulogized by the Vedas. He quotes the example of Gargi, who in the presence of a thousand Rishis boldly challenged Sage Yagnavalkya for a discussion on the Brahman. He laid stress on women education in days when women were deprived of the basic privilege. A family or nation that does not respect women never rises, he averred.

In a veiled attack on the 'masculinity' of man being eulogized with reference to the 'weakness of women', he asks men whether man can deliver a baby. He says the Universe is one of perfect balance. *"If women cannot fight nor can man suffer or endure the vagaries of life"*, he said.

Thus, Swami Vivekananda rightly pointed out that unless Indian women secure a respectable place in this country, nation can never march forward. So, according to him, there is no chance for welfare of the world unless the condition of women is improved. It is one of the foremost concerns of the Government of India as well as of the society at large. It is Due to the fact that at the present time, the educated women play a very significant role in overall development and progress of the country. India is now optimistic in the field of women education.

Swami Vivekananda's Vision on women education and today's mission of eradicating gender gap in literacy rate both indicate one goal....progress...progress of women and thereby the progress of entire nation. ————¯Many paths,

one goal "Arise, Awake & Stop not till the goal is reached"

References:

1. P. Nithiya (2012), 'Swami Vivekananda's Views on Philosophy of Education', Asian Journal of Multidimensional Research, Vol.1 Issue 6, November 2012,ISSN 2278-4853.
2. Dr.SudipaDutta Roy (2001),'Education In The Vision of Swami Vivekananda'
3. Dr.Jitendra Kumar &Ms.Sangeeta (2013), 'Status of Women Education in India', Educationia Confab, Vol.2, No. 4, April 2013, ISSN: 2320-009X.
4. R.K. Rao (2004), 'Women and Education', Kalpaz Publication, Delhi.
5. G.Sandhya Rani(2010),'Women's Education in India – An Analysis', Asia-Pacific Journal of Social Sciences, ISSN 0975-5942 Vol.II(1),Jan-June 2010,pp 106-124.

E-references:

1. IOSR Journal of Economics and Finance (IOSR-JEF)e-ISSN: 2321-5933, p-ISSN: 2321-5925.Volume 5, Issue 5. (Sep.-Oct. 2014), PP 40-44www.iosrjournals.org
2. www.swamivivekanandaquotesgarden.blogspot.in

 ISBN : 978-93-80216-07-2

Education and Swami Vivekananda : A Critical Appraisal

Ms. Ranjana Jain
Asso. Prof., English
K.M.G.G.P.G. College, Badalpur

A spiritual genius of commanding intellect Swami Vivekananda was an inspiring figure both in India and abroad during the last decade of 19th century. He was barely of 30 years old when he created a stir at the world's parliament of religions in Chicago in 1898. He introduced Indian philosophies of Vedanta and Yoga to the Western World. When he returned India he was as a great figure of strength, courage, confidence and love. He was a devoted disciple of Sri Ramakrishna, the saint of Dakshineswar. He founded the Ramakrishna Math and the Ramakrishna Mission. He was not happy with the social, economic and cultural conditions of contemporary society. When he arrived in south India in 1897 he indicated that he had a plan in mind to uplift the masses. he wrote in a letter; "My whole ambition in life is to set in motion a machinery which will bring noble ideas to the door of everybody, and then let men and women settle their own fate.''

Vivekananda was a well educated man of Presidency College Calcutta. He was an avid reader in a wide range of subjects, including philosophy, religion, history, social science, fine arts and literature. He had a great interest in Hindu scriptures, Vedas, Upanishads, Bhagavad Gita and purans. He was trained in Indian classical music. He passed the Fine Arts examination, and completed a Bachelor of Arts degree. He studied Western logic, philosophy and

European history at the General Assembly's Institutions. He was influenced by many great writers and thinkers of west and especially became fascinated with the evolutionism of Herbert Spencer. He translated his book 'Education' into Bengali. While studying western philosophies, he also learned Sanskrit scriptures and Bengali literature. William Hastie, principal of General Assembly's Institution, where Narendra Nath Dutta (Vivekananda) studied, wrote " Narendra is really a genius. I have travelled far and wide but I have never come across a lad of his talents and possibilities, even in German universities, among philosophical students some accounts have called Narendra a Shrutidhara.''

Vivekananda was not only a great scholar and a man of vast learning but a person of deep insight. He propagated the ideal of man -making and character- building education. According to him youth is the time of learning and getting knowledge. He suggested that a young man must gather knowledge as much as he could wherever in India or in west. A student should experience inside what he studies. He himself preached what he felt and believed in his youth. Although he did not write a book on education yet he contributed valuable thoughts on the subject that are relevant today.

Education : its meaning

Swami Vivekananda's concept of education is shadowed with spirituality and Vedantic philosophy. I n order to understand his views on education, we should first consider his oft quoted definition: "Education is the manifestation of the perfection already in man'' The word 'manifestation' implies that something already exists and is waiting to be

 ISBN : 978-93-80216-07-2

expressed. The main focus in learning is to bring out hidden ability of a learner. As he said: "what a man learns is really what he discovers." It is like a spark in a piece of flint and all that needed is the strike of suggestion to bring it out.

Manifestation' in Swami's definition indicates spontaneous evolution of human being's 'potential' which remains unknown in the childhood. Potential means the possibility of awakening something that is lying dormant. Israel Scheffler in his book 'Of Human Potential' considered three features of this: [a] the capacity to acquire a specific quality or to become someone who possesses it. [b] The propensity-an attribute which shows what a person is likely to do when the opportunity comes. For example, Rabindranath Tagore's propensity which is reflected in his 'Gitanjali' [c] the capability-a person's motivation and efficiency in working towards an intended outcome. It refers to something more than a person's capacity to perform. Rather, it is person's strength and capacity to work in unfavorable environment. Thus, these three concepts—capacity, propensity and capability, determine Swami's definition of education.

Vivekananda agrees with great English poet William Wordsworth who said; "child is father of a man'' Child has many potentials of variable worth. As he grows, he has to choose which he should try to develop and which he should minimize. His chosen potentials should be supervised and trained to achieve purposeful development. The purpose of education is actualizing highest human potential and after the completion of it learner must be able to help the common mass to equip for the struggle of life. He observed that education is to serve the entire human being, in all his/her

dimensions. Education must embrace the whole society, with special attention to those who are most in need of it and who are unable to avail themselves of the existing facilities.

Training the mind

Vivekananda agreed with contemporary thinkers when he asserted that the mind—the chief instrument of learning—deserves more attention than it had earlier received. Training the mind should be a student's highest priority. According to him stuffing one's mind with various information, technical skills and useless trivia only creates more problems if one's mind is not nourished and made healthy. Learning to concentrate the mind was the focus in Swami's scheme .He said: "to me the very essence of education is concentration of mind, not the collecting of facts.''[Cw,vol.vi] Training the mind to concentrate has several stages, the first stage is learning how to control the mind and prevent it from running hither and thither. In second stage, student must learn how to detach his mind from distractions. Next, he should direct the mind on the desired subject and use the full force of his mind on it. When a mind becomes concentrated, it gains tremendous power and is able to unlock the mysteries of the subject. Similarly, he also wanted students to cultivate will-power. Will power is essential not only to conduct the learning process, but also to strengthen one's character.

Character building

Swami Vivekananda said: "Education must provide life-building, man-making, character-making assimilation of ideas''[cw,vol.iii] He, like his guru Sri Ramakrishna, emphasized on the transformation of a ordinary man to a true

 ISBN : 978-93-80216-07-2

human being through effective educational process. In order to make the system strong and effective education must be rooted in religion. But by 'religion', he did not mean any particular faith. Religion to him meant the true eternal principles that inspire every religion. Religion in broad sense implies spiritual thoughts and universal values. For him, "Each thought is a little hammer blow on the lump of iron which our bodies are, manufacturing out of it what we want it to be".[CW,vol vii]

Character building was fundamental asset in Vivekananda's educational program. A person's character is determined by the sum total of thoughts which leave impressions on the mind. Character is but repeated habits of a man. People's association of good or bad habits , contribute much to the development of one's character. Exposure to exemplary role models, particularly when they are teachers and also to wholesome curriculum material that impart culturally approved values to the young, are crucial to character education. Character building education might focus on teaching what is right and wrong. In any case, however, the teachers should be moral exemplars if the classroom and the school are to serve as arenas for teaching of ethics. He strongly recommended all- round development of human beings. In one of his lectures he expressed the desire, "that all men were so constituted that in their minds all these elements of philosophy, mysticism, emotion and of work were equally present in full''[cw,vol.ii]

Culture and education-teacher and pupil

The purpose of education is not only to get degrees and certificates from any college or university but to become a truly educated human being. Conducive environment of

society and family plays a important role in making such human beings. The outer aspect of society is called civilization and inner aspect is known as culture. Education and culture has a close relation in bringing learned personalities. So, the education is to transmit culture and culture is likely to be limited to what can be transmitted by education. Nowadays, as formal education has become more institutionalized, teachers are expected to play a more significant role. A teacher needs, Vivekananda opines, to help a student learn how to think, what to think, how to appreciate things. In addition to the content of the teaching, what the teacher gives or transfers, to be truly effective, must possess some other elements. For example-the teacher should share with the student the conviction that they are both truly one in spirit, at the same time cultivating in the student a feeling of dignity and self respect. As he said: "The only true teacher is he who can immediately come down to the level of the student, and transfer his soul to the student's soul and see through the student's eyes and hear through his ears and understand through his mind. Such a teacher can really teach and none else'' [cw,vol.iv]

The education system

Vivekananda was a genuine friend of the poor and weak, particularly helpless masses of India. He was the first Indian thinker who sought a solution to their problems through education. He insisted that it was the duty of upper classes to come forward and uplift the poor through education and other means. He once said, "there must be equal chance for all—or if greater for some and for some less—the weaker should be given more chance than the strong''(letters,255) Today, the responsibility of providing education has been shifted from family, religion and pri-

 ISBN : 978-93-80216-07-2

vate charities to public authorities especially the State. To fulfill the dream of Vivekananda, many schemes and policies are running by State and Central government for financial help and free education to economically weak and socially oppressed children. According to him for a sustainable regeneration of India, top priority should be given to educating the masses and restoring them their lost identity. Besides it, he was equally worried about the women's education also for he believed it is the women who mould the next generation. In his educational scheme for India, the uplift of women and masses received a highest concern.

Conclusion

Thus,Vivekananda's concept of education is very comprehensive and relevant today. It has been unceasingly evolving in modern India since Swami passed away one fifty years ago. Many changes are taking place in the society also. Indian government is paying attention to get every citizen educated and educationists and academicians are preparing curriculum to meet the expectations of Vivekananda's dream of education. One such noticeable change in education is that it is engaged in preparing human beings for a new type of society and is trying to create a new type of human being for it. The Right to Education [RTE] guaranteed by the constitution of India, was the dream of Vivekananda. His idea of continual or lifelong learning, has been adopted by the several countries world over. His cry for uplift of downtrodden masses and education particularly of women has evoked a favourable response from different quarters of society. Recently PM Modi has launched a new movement, 'BetiBachao, BetiPadhao' for the welfare of girl child. In this program there are a few key

steps which can ensure that women and girls are able to reach their potential. Now the position is that females are more educated and accomplished than men. Women are fully aware about their skills and career and ready to advance in every field of life. This scenario will give satisfaction to Vivekananda in heaven.

His vision is the main concern of UNESCO. Progress of society is incomplete if the fellow citizens are not manifesting good virtues of education like-kindness, gentleness, forbearance and divinity in their attitude which are the signs of healthy civilization. While defining the aim of education UNESCO echoed the same idea. It reads: the physical, the intellectual, emotional and ethical integration of the individual into a complete man is a broad definition of the fundamental aim of education.''

References-

1. Scheffler , Israel. ' Philosophy and Education: Modern Readings. Boston: Allyn and Bacon, 1966.
2. Scheffler, Israel. Human Potential : An Essay in the Philosophy of Education. Boston : Routledge & Kegan Paul 1985.
3. Banhatti , G.S.(1995), 'Life and Philosophy of Swami Vivekananda, Atlantic publisher & distributers. New Delhi.
4. Vivekananda, Swami. (2001), 'Complete Works of Swami Vivekananda, 9 volumes, AdavaitAshram , Kolkata.
5. Ritanand, Swami (2013) 'Swami Vivekananda: 'The personification of Spirituality' Ramakrishna Mission Institute of Culture.
6. Spencer, Herbert.' Education: Intellectual, Moral, and Physical '(1891)
7. Gates, Melinda. 'The Times of India', March 14,2015, p.22.
8. Vivekananda, Swami.' Lectures from Colombo to Almora.' Advaita Ashram. Kolkata.

 ISBN : 978-93-80216-07-2

The Relevance of Swami Vivekanand's Thoughts for the Modern Youth

Dr. Divya Nath
Asso. Prof., Political Science,
K.M.G.G.P.G. College, Badalpur.

India has always idolized its icons and has made their character into a national phenomena. During the early Vedic times, knowledge was all important, and hence we placed our hermits on a high pedestal. Even kings would pay obeisance to them. Then came a phase wherein we began placing human valour higher than knowledge, and the Kshatriyas began getting more importance. We also had Brahamanas like Dronacharya, who became teachers and trainers of warriors. Gradually this value of 'valour' changed with the times, to that of nationalism and patriotism. This was the period of the British rule, where every young man considered it a sacred duty to lay down his life for the motherland. But today, the post independent India has a value system different from that of the past. Despite calling ourselves a knowledge-based society, we have placed people making millions out of this 'knowledge' on a high pedestal, and consider money-making to be our sole aim. The tragedy is that while we do have a few icons worth emulating in making money, we have hundreds of others whose means do not justify their ends.[1]

The result of all that has been said above, is that there has been a great decline in our value system today. We are now living in a dangerous environment, where our youth is increasingly being carried away by the attractions of crass consumerism and commercialization of human existence,

and they consider their life a success only if they 'belong' to their tribe of humans achievers who are measuring their lives by how many millions they have made in the shortest possible time. The 'how' of making it has slipped the attention of many of them.[2] Therefore the problem lies in making our young understand that the real benefits of today's material advancement lies not just in' creating wealth', but ensuring that we use it to make our society more egalitarian, more equitable, and more socially and economically just. The answer lies in the clarion call that Swami Vivekanand gave to the young of this nation more than a hundred years ago.

Youth is an impressionable age where we try to model our life against that of a role model or icon. It is that wonderful time in life when energy is limitless, human creativity is at its best and the 'never- say- die' spirit at its peak. This is the time when we are easily motivated by the environment and by what we see and value around us. A few years ago, a reputed international magazine had written, that India is possibly the only nation with so many young and educated people. Nearly 78% of our country's population is less than 40 years old.[3] If the potential energy of our youth is channelized, we can face any challenge as a nation. But apart from enormous energy, this would also involve a fresh perspective, a grandiose vision and superhuman effort. But the issue today is, how do we get our young, whose role models and icons are mostly from the economic, technology, music, cinema and sports arenas, to consider nation-building as an important facet of our productive lives?

Traversing though a period of rapid globalization, the students of the present generation are indeed passing through a crisis. The great emphasis given on academics, hardly gives

 ISBN : 978-93-80216-07-2

them any time to ponder over the nobler principles of human life. As a result, the subject of spiritual growth has been undermined and the fundamental truths of life and existence have been ignored. Our traditional ideals that uphold spiritual advancement at every stage of life, significantly so during student-life when the seed of noble values are sown, are being disregarded. Not only academic pressure but unwarranted aggressive competition, influence of media, peer pressure, self-centredness, imitation of western culture, unbridled materialism, consumerism and most importantly a learning system that is deficient in providing a holistic education, are the fundamental reasons for this regrettable crisis. Swami Vivekanand's man-making education that calls for the right blend of spiritual education with secular education is unquestionably the need of the hour.[5]

Vedanta asserts that the essence of a human being lies in his divine nature. It therefore becomes important for students to acquire the right awareness about one's own self, and learn to discover the higher truths governing life. Spiritual life is all about development of faith in God, faith in oneself, manifestation of inherent divinity, and adherence to values, virtues and righteousness that lay the foundation for a successful life. The following disciplines are fundamental for any student to practice spirituality in his day-to-day life:-

- developing faith and devotion
- offering regular prayers
- practicing meditation
- nurturing values and virtues
- cultivating the ideals of service and sacrific

- understanding the true import of religion
- practicing brahmcharya
- synthesis of science and spirituality.[6]

Swamiji made national reconstruction with the ideals of 'Tyaga' and 'Seva', the most important purpose of living for the young. He made this way of life a spiritual pursuit. The transience of human achievement and the impermanence of material wealth, were critical to his thinking. He gave the youth a higher ideal to strive for, and in this he found answers to the material problems of the suffering millions. All that he wanted our youth to have was an ability to 'feel'. To those who wanted to go beyond just feeling and take to concrete action, he gave the potent mantra of the power of the three P's- Purity, Patience and Perseverance - which in his opinion were the qualities that every young person needed to possess. Purity in thought, word and deed, patience to understand the dynamics of development activity, and perseverance to work in the complex setting of Indian society.[7]

Swamiji wanted to prepare the youth both physically and mentally to face the challenges that would face ahead. He wanted 'muscles of iron' and 'nerves of steel'.[8]He was practical enough to understand that society ridicules and opposes all positive endeavours in the beginning, but accepts it in the end if it is in the larger good, and it is here that purity, patience and perseverance would stand the youth in good stead. The young today are extremely result-oriented and need to understand the reasons behind what they do. But unfortunately today's globalized youth is also often rootless youth. They can only find their moorings through spirituality, which can give them a sense of inte-

 ISBN : 978-93-80216-07-2

rior integration and safety. For this, Swamiji had a simple formula regarding the three levels of service that one could do. The first is that of physical service – taking care of the human body and undertaking activities to ameliorate physical suffering, like running hospitals, orphanages, old-age homes etc. The next higher level was that of intellectual service, like running schools, colleges, empowerment programmes etc. And finally ,for the evolved, he prescribed the highest level of spiritual service. He clearly wanted the young to undertake these activities, not merely for the betterment of society, but for the growth and evolution of the person undertaking the same.[9] He saw the 'means' of serving society, leading on to the 'end' of spiritual growth of the person doing it.

Thus understanding Swami Vivekanand and his message and putting it across to our youth, would be the simplest way in which we could address the problems facing India today. The young need direction and what greater focus than that of serving others! Each young person can continue to be what he is – a technocrat, a scientist, an engineer or a doctor etc., and yet do so much within the circle of their own small lives that they could do so much about. We could then expand to include more and more lives that we touch in everyday existence.[10] By doing so, thousands of qualified and willing youth can be co-opted into spending quality time in higher and nobler ventures. Besides, in undertaking such activities, lies the answer not only to the problems of people around us, but also to our own inner conflicts and dilemmas.

REFERENCES

1. https://rbalu.wordpress.com
2. ibid.

3. ibid.
4. Swami Abhiramanand,'Spiritual Life for Students', in The Vedanta Kesari, Centenary Issue, Dec.2014.
5. www.divyajivan.org/articles/adhyatma/vivekanand
6. Swami Abhiramanand, op.cit.
7. www.chennaimath.org/my-mesage-to-the-youth-swamivivekanand
8. ibid.
9. Swami Sarvpriyanand,'Conveying Spirituality to the Youth', in the Vedanta Kesari, Centenary Issue, Dec.2014.
10. ibid.

 ISBN : 978-93-80216-07-2

Evaluation of Vivekananda's thought on Religion and God in Postmodernist Perspective

Dr. Anita Misra,
Asst. Prof., Sociology,
Govt.P.G.College, Noida.

The sociological theories which have been engaged in an attempt to bring out reasonable explanations for the belief in God and religion either emphasized the importance of the 'faith' and'institution' or negated its existence. The evolutionary theorist, Tylor saw 'religion as a response to man's intellectual needs' (Haralambos, 1980:455).The functionalist perspective put forth the 'the contribution religion makes to meeting the functional prerequisites or basic needs of society' (Haralambos, 1980:455).Contrary to these assumption is an assertion of Conflict theorists, who vehemently oppose the idea of God as well as importance of religion. They consider religion as illusion which eases the pain produced by exploitation and oppression..... It is a distortion of reality which provides many of the deceptions which form the basis of ruling class ideology and false class consciousness (Haralambos, 1980:460).

The two grand theories –functional and the conflict are concerned with only one kind of reality, the reality which either analyzes the contribution of religion or the other reality which considers religion as an instrument of oppression. Now it is in this backdrop of these two most important theories, the thoughts of Swami Vivekananda on God and religion, and the theory of postmodernism is being analyzed. It could also be said, that functional and the conflict theories are point of departure, for the establish-

ment of further argument. SwamiVivekananda, while addressing the 'World Parliament of Religions', told a story of a frog, which was born and brought up in a well. It considered the well to be the whole world and was not ready to accept the other reality which existed beyond its well.

The story told byVivekananda coincides with theory of postmodernism.Vivekanand opines –'Iam a Hindu sitting in my own little well. The Christian sits in his little well and thinks the whole world is his well .The Mohammedan sits in his little well and thinks that is the whole world. I have to thank you of America for great attempt you are making to break down the barriers of this little world of ours and hope that in the future, the Lord will help you to accomplish your purpose(Narsimhananda,2013:150).This opinion of Vivekananda fall somewhere between modernism and postmodernism.Swami Vivekananda's thought on religion (Hindu religion) and God posed a challenge to the world which negates the existence of the two. As for the societies who uphold the modern values of scientific temper, logic and reason, they mistakenly ignore or reject the infallibility of religion and God. Swami here comes with all argumentative force to establish the logic and reason, which the religion, particularly Hindu religion contain in itself. This particular assertion in itself negates the very notion of modernist that concept of religion and God is absurd, as it cannot be logically proved.

The claims of modernist were attacked by postmodernist. The postmodern theory is all against any grand narratives. It was critical to modernism. Postmodernism, as it is understood,"the philosophical proposal that reality is ultimately inaccessible by human investigation, that knowledge is a social construction, that truth

 ISBN : 978-93-80216-07-2

claims are political power plays, and that the meaning of words is to be determined by readers not authors. In brief, postmodern theory sees reality as what individuals or social groups make it to be." (www.allaboutworldview.org/postmodern-theology.htm).

Now here the thoughts of Vivekananda on religion and God can be well argued, within postmodernist framework. As on Vedas, Swami says –"The Hindus have received their religion through revelation, theVedas. They hold that Vedas are without beginning and without end. It may sound ludicrous to this audience, how can a book be without a beginning or end. But by the Vedas no books are meant. They mean the accumulated treasury of spiritual laws discovered by different persons in different times. Just as the law of gravitation existed before its discovery, and would exist if all humanity forgot it.The moral, ethical and spiritual relations between soul and soul and between individual and spirits, were there before their discovery, and would remain even if we forgot them" (Narsimhananda,2013:136). As it may sound ambiguous to the reader, what the Swami delivered, and may think, how can a book be without beginning and the end. The ambiguity can be resolved, with this statement, that Vedas contain those spiritual laws, which are the spiritual experience of various individuals. Though, these laws are differing, yet they have universal appeal. Thus variation can lead to unification.

Many incoherent realities can bring coherence in our perception of the world we see as well as experience. What all cannot be proved by the logic of science, and what all cannot be proved through concrete evidence, does not mean particular concept or experience does not exist. Thus existence of God and belief in a religion cannot be scientifically

evidenced and proved, therefore are subject to negation, is a logical fallacy on the part of mankind. The postmodernist theorists are by and large atheist. Their concept of Theology is based on atheism; but they are not atheist in a similar fashion, as Secular Humanist, Marxist and Leninist are. Postmodernist do not indulge in the scientific verification of God. They say, as Nietzsche asserted "God is dead, because he is unbelievable, not because he is unprovable."

Swami's concept on religion and God are the logical answers to the theorist, who either reject God and religion on the basis of disbelief or scientific evidence, yet his argument has that strength, that postmodernist, although they are atheist, cannot reject the claims of universal law for humanity, as upheld by the Vedas and Hindu philosophy based on it.Swami opines –"There is first a gross body which dissolves very quickly, then a fine body which remains through aeons,and then a jiva.This jiva according to Vedantaphilosophy, iseternal, just as God is eternal. Nature is also eternal, but changefully eternal .....Jiva is not manufactured of either Akash or Prana; it is immaterial and therefore, will remain forever. It is not result of any combination of Prana and Akash and whatever is not the result of any combination, will never be destroyed.....The whole nature comprising millions and millions of soul is under the will of God. God is all pervading, omniscient, and formless and he is working through nature day and night." This concept of soul and God in Vedanta philosophy, though cannot be proved through modern science theories, yet this thought is not lesser in logic or reason, in comparison to those phenomena, of natural world which are still unresolved by the scientific world.

 ISBN : 978-93-80216-07-2

In another argument Vivekananda's assertion invites the debate on the verification of a theory. In science or social science any hypothesis or statement becomes a theory if it is verified.Vivekanand, applies this method on spiritual experiences and spiritual laws, he states –"Verification is a perfect proof of a theory, and here is a challenge thrown to the world by Rishis. We have discovered the secret by which the very depth of ocean of memory can be stirred up-try it and you would get the complete reminiscence of your past life."(Narsimhananda, 2013:136).As it may be argued here, that in social sciences, observation and empiricism are an important methodology for collection of facts, subsequently framing the theories. Thus in the similar manner Swami also talks about religion and God on the basis of empirical evidence of sages, that spirituality can be experienced and what can be experienced can be established.

It also becomes pertinent here to debate on the fact that religion has always been perceived by the radical atheist, that it brings conflict, dissension and is a tool which justifies oppression. Here also Vivekananda comes in defence of God and religion. As Swami utters the doctrine of Gita – "Whosoever comes to me, through whatsoever form, I reach him; all men are struggling, through paths which in the end lead to me."He further says that how misinterpretations of religion can lead mankind to worst kind of situation. "Sectarianism, bigotry and its horrible descendant, fanaticism have long possessed this beautiful earth. They have filled the earth with violence, drenched it often and often with human blood, destroyed civilization and sent whole nations to despair."(Narsimhananda, 2013:134).Swami is of the opinion, if we are able to understand the true essence of religion, there can be peace for all.

The negation of God and religion has been in practice of those who call themselves rationale being, but Swami enforces the thought that spiritual laws too have a rational basis. Those who have been the critique of God are themselves not sure of their belief system. As it may be cited here, some of the important exponents of postmodernism like Jacques Derrida, Foucault are all considered as militant atheist, with all intolerance (here there is no difference between those who instigate violence due to religion and those who negate religion). Nevertheless, Derrida was enigmatic about his atheism. He in a convention on religion in 2002 commented "I rightly pass for an atheist" (Barrows).Then he was asked, why he could not say in plain words that 'I am an atheist. 'His reply was –"Maybe I am not an atheist" (Barrows).

Even those who have been the champion of atheism are not very sure of their status, so how can they establish themselves as critique of theism. Richard Rorty admitted – he was an atheist (Brandom, 344).Later on in his work with Gianni Valtimo on 'The Future of Religion' he agreed to say –' atheism (objective evidence for the non-existence of God) is just as untenable as theism(objective evidence for existence of God).....Religion he says is unobjectionable as long as it is privatized (Rorty & Vattimo, 2005:33). The thoughts of Derrida and Rorty are without any absolute claim, as they are unwilling to make any universal statement about reality(both existence and non-existence require a universal statement).Their idea about theology coincides well with the postmodern ambiguity.

Hence the theory which in itself is said to be ambiguous, is ready to except both the conflicting concept on God and religion. This theory is skeptical about all metanarratives,

 ISBN : 978-93-80216-07-2

since it is skeptical about everything, consequently it is ready to accept all the realities. The Marxist thought on one hand talks about oppression by religion and on the other hand establishes that there is going to violent radical change in the society; so how it is different from the violence which is driven by theological beliefs. Therefore it can be emphatically said that whatever has been in antiquity, if well deciphered and understood can be beneficial for human generations to come. Henceforth, it can be said Vedanta Hindu philosophy has that spiritual power.

REFRENCES

1. Brandom,Rorty and his critics,pp344.
2. Carson,D.A., "Christian Witness in an age of pluralism, in D.A.Carson and John Woodbridge,eds.*God and Culture: Essays in Honor of CarlF.H.Henry*(Grand Rapids,MI:Eerdmans,1993).
3. Erickson, Millard. Truth or Consequences: *The Promise and Perils of Postmodernism*, 2001.pp130-133.
4. Haralambos, M.andHeald, R.M.,Sociology: Themes and Perspective, Oxford University Press,1988.pp455-460.
5. Neubeck,J.and Glasberg,D.S.,Sociology:A Critical Approach,McGraw-Hill,Inc,1996.pp 504-506.
6. National Review,sept.13,2004.pp52-53.
7. The Cambridge Dictionary of Philosophy 2nd ed. (Cambridge,U.K:Cambridge University Press 2001),pp 725.
8. Sivaramkrishna,M and Narasimhananda,S.,*Vivekananda Reader*,2013.pp 135-150.
9. Spencer and Inkeles, A., Foundations of Modern Sociology, Printice-Hall, Inc1979.pp368-370.
10. Vanhoozer,JKevin,ed.*Postmodern Theology*,2005.pp12-13.

Websites

11. www.allaboutworldview.org/postmodern-theology.htm.
12. Barrow,Simon.,"*Derrida's Enduring Legacy* "on the faithinsociety weblog.

Religion and Swami Vivekananda

Dr. Kishor Kumar
Asst. Prof., History
K.M.G.G.P.G. College,
Badalpur

Dr. Sudhir Kumar
Research Asso.
K.M.G.G.P.G. College,
Badalpur

Swami Vivekananda addressed the Parliament of Religion at Chicago on 11th September 1893 in the Hall of Columbus. He stood there on the platform of the Parliament as the living embodiment of universality and harmony, the two key needs of the modern age. What he taught in subsequent years was only a commentary on his addresses at the Parliament. Swamiji stood there as the coordinator of the different sects and religions, urging everyone to give up the frog-in-the-well mentality and become universal. What would this universal religion be like? Swamiji explained in the Parliament.

.... if there is even to be a universal religion, it must be one which will have no location in place or time; which will be infinite like the God it will preach, and whose sun will shine upon the followers of krsna and of Christ, on saints and sinners alike; which will not be Brahminic or Buddhistic, Christian or Mohammedan, but the sum total of all these and still have infinite space for development; which in its catholicity will embrace in its infinite arms, and find a place for, every human being, from the lowest groveling savage not far removed from the brute, to the highest man towering by the virtues of his head and heart almost above humanity, making society stand in awe of him and doubt his human nature. It will be a religion which will have no place for prosecution or intolerance in its policy, which will recognize divinity in every man and woman,

 ISBN : 978-93-80216-07-2

and whose whole scope, whose whole force, will be created in aiding humanity to realize its own true divine nature. This was the religion Vivekananda represented at the Parliament. It was in fact the Religion beyond all religions. The importance of the Parliament of Religions can never be overestimated. The Parliament in 1893 had delegates from all corners of the world who represented a wide spectrum of religious faiths around the globe. The sheer magnitude of its size and the immensity of the public response and media coverage, it received make the parliament a unique event in the religious history of the world. In a letter to his brother disciplesSwamiji wrote: Everything must be sacrificed, if necessary,for that one sentiment universality. Vivekananda religion taught him to search through multiplicity and duality for the ultimate unity which is the unchanging base of an ever changing world. To reach the Universal Religion, recognition of the necessity of variation is as important as that of underlying unity. If one religion is true, all others must be true. He proclaimed at Parliament of Religion, "We believe not only in universal toleration, but we accept all religions as true." Religion had generated both intense love and diabolical hatred, but accepting all religions meant worshipping god with each of them. "I shall go to the Mosque of the Mohammedan; I shall ... kneel before the crucifix ... I shall take refuse in Budha ... I shall sit down in medication, with the Hindu." In the present situation in the world, the significance of such a religious approach cannot be overestimated. When the unitary outlook that science today hints at and that Swami taught and made available to everyone becomes pervasive among mankind, most of the problems that plague our human species will simply disappear. Human life will take on a

new meaning: traditional human assumptions and attitudes will become transformed. "Then alone a man loves, Swamiji said in a New York lecture. ..... when he finds that the object of his love is not a clad of earth, but it is the veritable God himself; that man will love his greatest enemy who knows that very enemy is God Himself ...

Such a man becomes a world mover for whomhis little self is dead and God stands in its place ...

If all mankind today realize only a bit of that greattruth, the aspect of the whole world will bechanged, and, in place of fighting and quarrelling,there would be a reign of peace."This outlook - the spiritual outlook isabsolutely essential to the present age. There willbe no place in a world of untold power andknowledge for anything but the broadestacceptance of all human cultures of all individuals,of all the varied ways in which human being searchfor truth. The future world will brook no barriersbetween persons, genders, creeds, races,cultures, and nations; for in the truth in the vastocean of life there are no barriers, and truth alonewill be able to survive in a world where noknowledge will be withheld from any person."Vedanta says this separtion does not exist,said Swami Vivekananda.

.... It is not real. It is merely apparent,on the surface. In the heart of things there is unitystill. If you go below the surface, you find thatunity between man and man, between races andraces, high and low, rich and poor, gods and men,and men and animals. If you go deep enough, allwill be seen as only variations of the one.

We have seen a growing indifference toall spiritual values and the complete irrelevanceof religious thought in the political life of alladvanced nations, and also the menacing

 ISBN : 978-93-80216-07-2

growthof religious fundamentalism in the different partsof the world, threatening freedom of expressionand alternative view points. We have also seenthe phenomenal growth of popular religionspromising false hopes and legitimizingsuperstitions; and politicians, in connivance withtheologians and priests, using religion to muzzleall voices of dissent.The quality of life of man will depend uponthe relationship between different religions as wellas on the extent of space that each religion cancreate to ensure and encourage freedom toquestion.

In several of his speeches and writings Swami Vivekananda has spoken of Universal Religion as the one Eternal Religion, representing the religious consciousness of humanity, which manifests itself in different places as different religions. Just as science is one, so also religion is one.

Hence Swamiji believed that every person should have his or her own religion. He said, 'No man is born to any religion; he has a religion in his own soul.' This idea comes close to Whitehead's definition, 'Religion is what a man does with his solitariness.' Nevertheless, since religion concerns the whole humanity, it has a collective aspect also. The collective side of Vivekananda's third concept of Universal Religion is a fivefold harmony. These five types of harmony are briefly discussed below:

(a) Harmony between the sacred and the secular: Swamiji saw life as one. He removed the distinction between the sacred and the secular not by secularizing the sacred, but by sacralizing the secular, by divinizing the whole life. Divinization of life is a key concept in Swamiji's view of religion.

(b) Harmony between science and religion: Science poses the greatest challenge to religion in the modern world. Swami Vivekananda met the challenge by integrating science into religion. Swamiji looked upon science and religion as a single quest of man to know the ultimate Truth; only science conducts the search in the empirical world, whereas religion does it at the transcendental plane of existence.

(c) Harmony between love for man and love for God: Love for fellow beings has been considered to be bondage and hence an obstacle to love for God in Hinduism for centuries. Swamiji unified the two kinds of love (love for man and love for God) by seeing God in man. Man in his true nature (as àtman) is inseparable from God or Paramàtman. So, to love man is to love God. Swamiji looked upon Love as an expression of the spiritual oneness of all humanity in God.

(d) Harmony between contemplative life and active life: The main purpose of meditation is to make the mind calm so that one may become aware of the Inner Self or Supreme Self. But by practice this meditative Self-awareness can be maintained even while doing work. In fact this is the central principle of Karma-yoga. When one attains this state, the inner distinction between contemplative life and active life disappears. Even in the midst of serious work one can maintain intense inner calmness and spiritual awareness.

(e) Harmonious development of personality: Every person is naturally endowed with four faculties or capacities. These are: thinking, feeling, willing and work efficiency. For the all-round development of personality

 ISBN : 978-93-80216-07-2

it is necessary to have proper development of all these faculties. The development of such wellbalanced, integrated individuals is one of the aspects of Swami Vivekananda's third concept of Universal Religion.

Vivekananda cautioned against the hopefor exclusive survival of .... one religion anddestruction of others. But can pluralism solve theproblems of religious hostilities and resist thetendency of destroying one by another?Some believe in pluralism from theconviction that it provides a wider range ofalternatives, a greater freedom of choice andconsequently by greater opportunities of selfexpression and self realization. Some believe in itas a convenient and respectable strategy for themaintenance of social harmony and communalpeace, particularly in a multi-religious society like India. Whether one learns to accept the validityof religions out of faith and conviction, as Gandhidid, or whether one learns to treat anotherperson's religion with tolerance out of anunderstanding of the historical bonds between thecommunity and that religion, as Nehru did thepresent and the future of human society has hardlyany other option.

The unique contribution of SwamiVivekananda lies in the formulation of unity when he said that ... 'Each must assimilate the spirit ofthe others and yet preserve his individuality andgrow according to his own law of growth.'The importance of the Chicago addresswas there to rouse this unique sense of all-inclusiveunity, in which nothing is to be left out or shunnedas not belonging to the one. We have to plumpdeep in all writings of the Swami in order to havea clear idea of this unity, for which he lived anddied and of which the seed was laid in his historicChicago address.

The drawing of this sense of unity is theonly panacea for all the ills of the world, which istoday torn by division, discord and diffusion, andthe concluding words of Swami VivekanandaChicago addresses will then alone be a reality;"Harmony and Peace and not Dissensions."

References

1. Vivekananda, Swami. Complete Works of Swami Vivekananda, 9 Volumes and Appendices http://www.ramakrishnavivekananda.info/vivekananda/volume_1/vol_1_frame.htm
2. Burke, Marie Louis:Swami Vivekananda in America- New Discoveries (Calcutta: AdvaitaAshram, 1958), p. 595.
3. Ibid., 171 - 172
4. Vivekananda, Swami:Raja-Yoga, New York: Ramakrishna-Vivekananda Center, 1956.
5. Nikhilananda, Swami . Vivekananda: A Biography. Kolkata, India: Advaita Ashrama Publication Department, 1964.
6. Ibid., 145-168

 ISBN : 978-93-80216-07-2

Impact of Music in Vivekananda's Life

Dr. Dinesh C. Sharma,
Asso. Prof., Zoology
K.M.G.G.P.G. College, Badalpur

Dr. Ratna Sherry
Asstt. Prof., Chemistry
M. M. College, Modinagar

Music is the highest art and, to those who understand is the highest worship.

-Swami Vivekananda

Vishnu, one of three supreme gods of Hinduism, told Narada Nahamtisthami Baikunthe, Yoginamhridayenacha. Matbhaktahyatragayanti, tatratisthami Naradah.

(I do not reside in the Heavenly abode of Baikuntha, nor in the heart of the Yogis. Where ever my devotees sing in spirit, I reside there, Narada)

Music plays a big role in transforming Narendra Nath in to Swami Vivekananda. Swami Vivekananda believes that high achievements in art, music, etc., are the results of concentration. When we hear beautiful music, our minds become fastened upon it, and we cannot take them away. Those who concentrate their minds upon what you call classical music do not like common music, and vice versa. Music in which the notes follow each other in rapid succession holds the mind readily. A child loves lively music, because the rapidity of the notes gives the mind no chance to wander. A man who likes common music dislikes classical music, because it is more complicated and requires a greater degree of concentration to follow it. He think that, if there are different musical instruments tuned alike in one room, all of you may have noticed that when one is struck, the others have the tendency to vibrate so as to give the

same note. So all minds that have the same tension, so to say, will be equally affected by the same thought Swami Vivekananda himself was a trained singer (though not professional). He received his classical music training from BeniOstad. In his first meeting (late 1881) with Ramakrishna, he sang few devotional songs. His trained voice and his devotion towards music highly impressed Ramakrishna, which was followed by a cordial invitation to visit Dakshineswar. We find Ramakrishna repeatedly requesting Narendra to sing and while listening to Narendra's song Ramakrishna is going into trance (Ramakrishna Kathamitra). Vivekananda was undoubtedly an appreciator and a performer of classical music. In 1887, when Vivekananda was only 24 years old, he co-edited and published a Bengali song anthology named SangeetKalpataru. He believes that drama and music are by themselves religion; any song, love song or any song, never mind; if one's whole soul is in that song, he attains salvation, just by that; nothing else he has to do; if a man's whole soul is in that, his soul gets salvation. They say it leads to the same goal.

In music, nobody, not even the sage Bharata, the originator of dramatic performances, could understand whether it was singing, or weeping, or wrangling, and what meaning or purpose it sought to convey! And what an abundance of intricacies in that music! What labyrinths of flourishes enough to strain all one's nerves! Over and above that, that music had its birth in the nasal tone uttered through the teeth compressed, in imitation of the Mohammedan musical experts! Nowadays there is an indication of correcting these; now will people gradually understand that a language, or art, or music that expresses no meaning and is lifeless is of no good. Now they will understand that the more

 ISBN : 978-93-80216-07-2

strength is infused into the national life, the more will language art, and music, etc. become spontaneously instinct with ideas and life. The volume of meaning that a couple of words of everyday use will convey, you may search in vain in two thousand set epithets. Then every image of the Deity will inspire devotion, every girl decked in ornaments will appear to be a goddess and every house and room and furniture will be animated with the vibration of life.

In India, music was developed to the full seven notes, even to half and quarter notes, ages ago. India led in music.India gave to the world her system of notation, with the seven cardinal notes and the diatonic scale, all of which we enjoyed as early as 350 B.C., while it came to Europe only in the eleventh century.

While discussing the preparations one needs to take to practise Bhakti Yoga, Vivekananda told that the greatest aid to this practice of keeping God in memory is, perhaps, music. The Lord says to Nârada, the great teacher of Bhakti, "I do not live in heaven, nor do I live in the heart of the Yogi, but where My devotees sing My praise, there am I". Music has such tremendous power over the human mind; it brings it to concentration in a moment. You will find the dull, ignorant, low, brute-like human beings, who never steady their mind for a moment at other times, when they hear attractive music, immediately become charmed and concentrated. Even the minds of animals, such as dogs, lions, cats, and serpents, become charmed with music.Shankaracharya had caught the rhythm of the Vedas, the national cadence. Indeed I always imagine that he had some vision such as mine when he was young, and recovered the ancient music that way. Anyway, his whole life's work is nothing but that, the throbbing of the beauty of

the Vedas and the Upanishads.

The book SangeetKalpataru is all in us. Fool, hearest not thou? In thine own heart day and night is singing that Eternal Music-Sachchidânanda, soham, soham-Existence-Knowledge-Bliss Absolute, I am He, I am He. All poetry, painting, and music is feeling expressed through words, through colour, through sound.Music is the highest art and, to those who understand is the highest worship.

It is clear that Vivekananda's musical mind-set plays a big impact on his life. His thoughts, thinking, vision and prospective towards life and humanity is highly influenced by his musical heart and brain.

Reference:

1. Vivekanand. SangeetKalpataru. 1887.
2. http://www.swamivivekanandaquotes.org

 ISBN : 978-93-80216-07-2

Swami Vivekananda and His Methodology, its Significance in Indian Context

Dr. Laxmi Prakash
Asso. Prof., History
M.M.H. College, Ghaziabad

Swami Vivekananda was an Indian Hindu monk and chief disciple of the 19th-century saint Ramakrishna. He was a key figure in the introduction of the Indian philosophies of Vedanta and Yoga to the Western worldand is credited with raising interfaith awareness, bringing Hinduism to the status of a major world religion during the late 19th century. He was a major force in the revival of Hinduism in India, and contributed to the concept of nationalism in colonial India. Vivekananda founded the Ramakrishna Math and the Ramakrishna Mission. He is perhaps best known for his inspiring speech which began, "Sisters and brothers of America ...," in which he introduced Hinduism at the Parliament of the World's Religions in Chicago in 1893.

Teachings And Philosophy

Vivekananda believed that a country's future depends on its people, and his teachings focused on human development. He wanted "to set in motion a machinery which will bring noblest ideas to the doorstep of even the poorest and the meanest". Vivekananda believed that the essence of Hinduism was best expressed in the Vedanta philosophy, based on Adi Shankara's interpretation. He summarised the Vedanta as follows.Each soul is potentially divine. The goal is to manifest this Divinity within by con-

trolling nature, external and internal. Do this either by work, or worship, or mental discipline, or philosophyby one, or more, or all of theseand be free.

Summary of Raj Yog

The fire of Yoga burns the cage of sin that is around a man. Knowledge becomes purified and Nirvana is directly obtained. From Yoga comes knowledge; know ledge again helps the Yogi. He who combines in himself both Yoga and knowledge, with him the Lord is pleased. Yoga is divided into two parts. One is called Abhava, and the other, Mahayoga. Where one's self is meditated upon as zero, and bereft of quality, that is called Abhava. That in which one sees the self as full of bliss and bereft of all impurities, and one with God, is called Mahayoga. The Yogi, by each one, realises his Self. Yama, Niyama, Asana, Pranayama, Pratyahara, Dharana, Dhyana, and Samadhi are the steps in Raja-Yoga, of which non-injury, truthfulness, non-covetousness, chastity, not receiving anything from another are called Yama. This purifies the mind, the Chitta.

Summary of Karma Yog

Swami Vivekananda began working on Karma Yoga when he returned to New York from London in December, 1895. It was not his habit to do much actual writing himself; a stenographer was employed to record his lectures. It is thanks to the efforts of the stenographer, J. J. Goodwin, an Englishman who became Vivekananda's disciple, that Vivekananda's teachings, including his exposition of karma yoga, have survived. Karma Yoga is one of four volumes by Vivekananda describing the different paths to enlightenment in Vedanta. Karma Yoga is divided into eight chapters.

 ISBN : 978-93-80216-07-2

Vivekananda's style is simple, straightforward, and logical. In almost every chapter, he includes a story or anecdote from the Indian tradition to illustrate his main point. In keeping with his universalist outlook, We have to work as hard as we can, give the work our best quality effort, then step back and let the results take care of themselves.

Summary of Jnana Yog

Jnana Yoga (The yoga of knowledge) is a book of Swami Vivekananda.[1] based on a series of lectures on the topic delivered mainly in New York and London by Swami Vivekananda. These lectures were recorded by a professional stenographer J.J.Goodwin (who later became a disciple of Swami Vivekananda. Jnana means for "knowledge" in Sanskrit. The word is derived from the Sanskrit word Jna to know; Jnana yoga is one of the types of yogamentioned in Hindu philosophies. Jñana in Sanskrit means "knowledge". In this book Swami Vivekananda has described "knowledge" is the ultimate goal. According to Swami Vivekananda freedom is the object of Jnana Yoga.

Summary of Bhakti Yog

Bhakti-Yoga is a real, genuine search after the Lord, a search beginning, continuing, and ending in love. One single moment of the madness of extreme love to God brings us eternal freedom. "Bhakti", says Nârada in his explanation of the Bhakti-aphorisms, "is intense love to God"; "This love cannot be reduced to any earthly benefit", because so long as worldly desires last, that kind of love does not come; "Bhakti is greater than karma, greater than Yoga, because these are intended for an object in view, while Bhakti is its own fruition, its own means and its own end." Bhakti has been the one constant theme of our sages.

Swami Vivekananda's Concept of Jnana Yoga, Raja Yoga, Karma Yoga, Bhakti Yoga

Vivekananda, the most famous disciple of Sh. Ramakrishna had, in fact, inherited from his great master, a wide concept of religion. For him, religion was an all embracing spirituality; and all religions the paths that lead to the same goal of self-realization or the realization of God. Ramakrishna, in truth was the embodiment of all the past religious thoughts of India, and at the same time, had a good knowledge of all the existing faiths of the world. Swami Vivekananda, doubtlessly was the unparallel illustrious apostle of Ramakrishna, who spread throughout the world the divine message of his Guru. It was he who roared the immortal teachings of India the Jagat Guru, the master land of all spiritualities at the Parliament of World Religions first at Chicago in 1893 and then at Paris in 1900. Infinite-Sachidanadaswaroopa. The individual souls or the Jivatmans have come into being because of these limiting adjuncts.

"Awake, arise and stop not till the goal (Self-realization) is reached".

 ISBN : 978-93-80216-07-2

Religious Thoughts of Swami Vivekananda

Rohit Kumar
M.Ed. Scholar,
R.B.S. College, Rewari, Haryana

Among Swami Vivekananda's most significant contributions to global culture are his reflections on religious pluralism, which can be defined broadly as the idea that there is truth to be found in many religious traditions, and not only one. Vivekananda's concept of religion is based on the teachings of Upanishads and the teachings of his Master. But he interpreted their religious doctrines also on the basis of his own experiences. He himself admitted this fact in many of his lectures and writings. We may quote him in this context thus: "My teaching is my own interpretation of our ancient books, in the light which my Master shed upon them. I claim no supernatural authority. Whatever in my teaching may appeal to the highest intelligence and be accepted by thinking men to the adoption of that will be my reward."

Swami Vivekananda, who studied the ins and outs of Indian culture and religion very well, realised the fact that religion was the inner heart of India. He firmly believed that the existence of India could only be saved by preserving its religion and spirituality. He declared thus: "In each nation, as in music, there is a main note, a central theme, upon which all others turn. Each nation has a theme: Everything else is secondary. India's theme is religion." Thus, Vivekananda rightly realises that religion occupies pivotal position here in our land. He very well visualised that if Indians wanted to save India from great crisis, then they must try to know their own spirituality which was

lying in their treasure house of religion. We must not imitate the ideals of others instead of following our own ideals. Religion, according to him, is our life blood. As long as the principle of life remains undisturbed, the life remains quite secure. Similarly, if the spirit of the nation is not destroyed there is no threat to its existence. He warned against this danger and asserted that if Indians were unable to preserve their spirituality which according to him, was India's soul, a great disaster would follow.

Vivekananda realised that there were two obstacles in our path – the conservatism and the imitation of material civilization. These were the main causes of our religious and spiritual degradation. He felt that our young generations were busy in criticising our own old views, and praising the modern civilization of western countries. He said that they should learn something good from others but they should not forget their own ideals. He could even tolerate conservatism to some extent but he was enable to tolerate a westernised person always busy in criticising his own ideals and social customs. He said, "There are two great obstacles in our path in India, the Soylla of old orthodoxy, and the Charybdis of modern European civilization. Of these two, I vote for the old orthodoxy, and not for the Europeanised system."

Religion is the central theme of Vivekananda's philosophy. He was convinced that social structure and religion are organically interwoven. Caste hierarchy, sex inequality and untouchability exist because of the misinterpretation of religion. Religion is the dominating and guiding force of the life of the individual in India. His economic activity, his social life, his marriage, birth and death, his physical movements, all are strictly controlled by religion. Vivekananda

 ISBN : 978-93-80216-07-2

refuted the Western concept that man lives by bread alone and is moved only by economic forces. In India, he pointed out that 'religion is the highest motive power."

Vivekananda warned the Indian people and social reformers that if they made an attempt to throw off their religion and take up either politics or similar thing as their central theme, the result will be that India will become extinct. He also insisted that even reforms in India must come through religion. Like Hegel, Vivekananda believed that "each nation, like each individual, has one theme in this life, which is its centre, the principal note round which every other note comes to form the harmony. In India, religious life forms the centre life forms the centre, the keynote of the whole music of national life. He further pointed out that religion in India had been a creative force for integration and stability and if and when the political authority had becomes loose and weak, it imparted even to that the power of rehabilitation. Hence, in Vivekananda's social philosophy religion plays the most dominant role.

Vivekananda gave a new meaning to religion, He not only humanized it but also socialised its purposes. He pointed out that: "man is the greatest of all beings." Hence, the best way to realise God is to serve His followmen. He said, "I do not believe in a God or religion which cannot wipe the widow's tears or bring a piece of bread to the orphan's mouth. . . I do not call it religion so long as it is confined to books and dogmas." Thus Vivekananda interpreted the ancient Indian religious thought in consonance with contemporary thought. He put emphasis on the service of man and said, "There is no difference between service of man and worship of God, between manliness and faith, between true righteousness and spirituality."

Swamiji does not affirm that all religions are the same. Each religion is distinct. It has its own "soul." And while contradictions may indeed obtain among the doctrines and the practices that have been formed on the basis of its core ideals–not only among religions, but even within the same religion, leading to division and sectarianism–Swamiji poses the question: Do the core insights of the various religions necessarily conflict? Or might these central ideals be logically compatible–in Swamiji's words "supplementary"? Might it be that each religion represents a core ideal, and that these ideals are not contradictory, despite each being distinct? Might they even be mutually affirming?

For Vivekananda Religion must constantly take help from Reason. Because when religion refuses to take the help of reason, it weakens itself. Alluding to this in the course of his lecture on 'Reason and Religion', delivered in England in 1896, Vivekananda said: The foundations have been all undermined, and the modern man, whatever he may say in public, knows, in the privacy of his heart that he call no more 'believe'. Believing certain things because an organised body of priests tells him to believe, believing because it is written in certain books, believing because his people like him to believe, the modern man knows to be impossible for him." There are, of course, a number of people who seen to acquiesce in the so called popular faith, but we also know for certain that they do not think. According to Vivekananda, "Their idea of belief may be better translated as "not-thinking carelessness."

And pleading for the application of reason in the field of religion Vivekananda continued that religion must justify itself by the discoveries of reason, and the same methods of investigation, which we apply to sciences and knowl-

 ISBN : 978-93-80216-07-2

edge outside, must be applied to the science of religion. Expressing his own opinion, Vivekananda said: "If a religion is destroyed by such investigations, it was then all the time useless, unworthy superstition; and the sooner it goes the better." He was thoroughly convinced that its destruction would be the best thing that could happen. "All that is dross will be taken off, no doubt, but the essential parts of religion will emerge triumphant out of this investigation. Not only will it be made scientific, at least, as any of the conclusions of physics or chemistry - but it will have greater strength, because physics or chemistry has no internal mandate to vouch for its truth, which religion has."

In several of his lectures and discourses, Vivekananda has expounded the scientific approach to religion as upheld in Indian thought. In his lecture on 'Religion and Science' he says that "Experience is the only source of knowledge but it does not fully apply to religion. Only a small group of men, called mystics, teach religion from experience. As mathematics in every part of the world does not differ, so the mystics do not differ. ... Their experience is the same; and this becomes law.....

Vivekananda's gospel of practical Vedanta is his call to people to be first Gods, and then help others to be Gods. He enjoins upon everyone to look upon every man, woman and everyone as God. So one is to serve them in the spirit of worship, and not help them or be kind to them as people ordinarily think and say. Vivekananda wants to impress upon the people that the poor and the miserable give us opportunity to serve God coming to us in the person of the diseased, the lunatic, the lapen and the sinner. It was this conviction that inspired him to. say: "May I be born again and suffer thousands of miseries, so that I may wor-

ship the only God that exists, the only God I believe in, the sum total of all souls - and above all. my God the wicked, my God the miserable, my God the poor of all races of all species, is the special object of my worship."

While travelling to the United States, when Vivekananda spoke he was not In a short time he was recommended to be a speaker. When Vivekananda spoke he was not representing any specific religion or sect, he was representing India (Arora 14). In the words of some bibliographers he was able to take all of the scholars and religious men to a place they had never been, where his words connected all religions and articulated the "oneness" of God and creed. "if there is ever to be a universal religion, it must be one which will have no location in place or time, which will be infinite like the God it will preach . . . which will not be Brahmanic, the Buddhistic, Christian or Mohammedan, but the sum total of all these and still have infinite space for development." (Teelucksingh 412).

Vivekananda pointed to an aspect of the gospel of practical Vedanta i.e. the "principle of acceptance." According to it, other forms of worship than one's own, including the worship of God through ceremonials are, not errors. Those who worship God through ceremonials, and forms, however crude we may think them, are not in error. He writes that "It is the journey from truth to truth from lower truth to higher truth. We should see others with eyes of love with sympathy, knowing that they are going along the same path we have trod" So the Advaita of Vivekananda, not only tolerates but accepts ail other religions of the world as different paths leading to the same God.

Thus, Vivekananda's gospel of Vedanta is both posi-

 ISBN : 978-93-80216-07-2

tive and dynamic. It is not merely a negative and lifeless theory. It is the Vedanta which can inspire our national and international life. Vivekananda himself lived such a Vedantic ideal of life and preached it till the last day of his earthly career. He wanted Indians to carry the external message of the Vedanta to every door and to every corner of the world. If this can be done in a spirit of renunciation and service to humanity, the time, however distant it may be, is bound to come when practical Vendanta will become a widely settled fact in the world's history. Though, spirituality is most dominant in the philosophy of Vivekananda yet it is mingled with humanitarianism. At the same time it deserves attention that Vedanta in his hands became an instrument for regenerating and revitalising India by making an appeal to the masses to become strong, fearless and self-reliant. Thus his philosophy represents a synthesis of contemplation and action; Nirvikalpa Samadhi and humanitarian activity, God and the world. Individual salvation and social service runs parallel to each other.

In February 1902, Vivekananda argued that 'Shiv Worship', in various forms, antedated the Buddhists'. 'Gaya was a place of ancestor worship already, and the foot print worship the Buddhists copied from the Hindus. Though Vivekananda called Sankara a mere Purldit with much narrowness of heart, he declares that "the Upanisads and the Gita are the true scriptures." He said, "Sankara's Vedanta has to be transformed into altruistic service, which alone is religion." But he insists that "it is Sankara whom you should follow" because in Sankara's system there is real scope both for Pravrtti and Nivrtti. Again he emphasises to fellow the path of love and says that "The modern age calls for the farmer. It is the hemt, the heart, that conquers, not

the brain. Books and learning, Yoga and meditation and illumination - all are but dust compared with love." "Love alone gives the supernatural powers.

Vivekananda's comparatively studied the East and the West in the secular sphere, but in the spiritual sphere, he unhesitatingly declares that India can still become the teacher of the whole world. Not only can the Vedanta philosophy of India stand its own ground against all scientific and rational onslaught, but it can also take under its protective wings all who search for rational assurance. "The nations of the West are coming to us for spiritual help. A great moral obligation rests on the sons of India to fully equip themselves for the work of enlightening the world on the problems of human existence."

According to the Indian view, society is not a human creation, but a divine institution. The Indian Monotheistic Doctrine of Creation holds that the universe of souls and matter is a cosmos, not a chaos and not only that, it is also an entirely teleological or a purposive one. Like nature, society, too, is a perfect system. It is a full organic whole, a loving and a living union. Its basis is religion, its purpose, spiritualism and its instruments scriptural injunctions. "It is not a political organisation, not an economic unit and not a prudential concern at all."

Hence, we conclude that Swami Vivekananda's ideal of universal acceptance, of diverse religions as being not so much contradictory as complementary, as forming distinct pieces of a vast jigsaw dilemma, as participating, each in its own way, in a broader, transcendent vision of the reality that we all divide up and inhabit, is even more significant today than it was when he first articulated it, over a cen-

 ISBN : 978-93-80216-07-2

tury ago. It has, fortunately, become an influential ideal in the Western countries. But it is not yet shared by all. Swamiji said at the end of his first address to the Parliament of World Religions, "I fervently hope that the bell that tolled this morning in honour of this convention may be the death-knell of all fanaticism, of all persecutions with the sword or with the pen, and of all uncharitable feelings between persons wending their way to the same goal."

It is a deep and tragic irony that this speech was delivered on September 11, 1893–that is, precisely 120 years to the day before the notorious attacks which, for many in our time, have come to symbolize that very fanaticism, persecution, and hatred which Swamiji so fervently hoped would be ended in his time.

References :

1. Arora, V.K. (1968) The Social and Political Philosophy of Swami Vivekananda. Calcutta: Punthi Pustak.
2. Mittal, S.S. *The Social and Political Ideas of Swami Vivekananda*, p. 74. Singh, Shail Kumari (1983), *Religious and Moral Philosophy of Swami Vivekananda*,
3. New Delhi: Janki Publication p. 112.
4. Swami, Vivekananda, "Complete Works of Swami Vivekananda (8 Volumes). Advaita Ashrama, Kolkata, 1985.
5. Teelucksingh, Jerome (2006) "The Legacy of Swami Vivekananda." Peace Profile, 18(3), 411-417.
6. Vivekananda, *Centenary Memorial Volume*, (1963), p. 353.
7. Vivekananda, Swami, *To The Youth of India*, p. 21.

The Power of Youth and Vivekananda

Dr.Vineeta Singh
Asst. Prof.- Sociology
K.M.G.G.P.G. College,
Badalpur

Ms.Shilpi
Asst. Prof.-Home Science
K.M.G.G.P.G. College,
Badalpur

Youth is that wonderful time in life when energy is limitless, human creativity is at its best and the 'never say die' spirit is at its peak. Youth is also an impressionable age wherein we try to model our life against that of a 'role model' or 'icon'. This is the time when one is ready to take on tasks however onerous they are; the time when our ideals can drive and determine one's actions; the time when we believe that we can do anything under the sun. This is the time when we are easily motivated by the environment and by what we see and value around us.

Swami Vivekananda was always in search of real youth. By the word 'real youth' he never meant by those young persons who have reached that stage considering age and physical appearance. Rather his definition of a real youth is those who are young with full of energy, strength, intellect, and well built body. He always believed that the youths by age and physique if transformed into 'real youths' then they will break all the hurdles which come in the way of growth and betterment. Vivekananda expressed his extreme confidence about the transformation from youth to 'real youth' through his statement: **"My faith is in the younger generation, the modern generation; out of them will come my workers. They will work out the whole problem, like lions."** He always wanted the youths to discover their inner strength. He never gave importance only to that knowledge which is gained from books but also knowledge from

 ISBN : 978-93-80216-07-2

practical experience and wanted the youths to face the different challenges of life by their own inner strength that means a self confidence. In this regard he conveyed his opinion in these words: **"All power is within you; you can do anything and everything. Believe in that, do not believe that you are weak. Stand up and express the divinity within you."**

To learn about India more deeply Vivekananda went on journey to different parts of the country. During this tour he got completely disturbed by the plight of his countrymen in various places. The fragile condition of the youths shattered him a lot. In this connection he gave a strong message to the youths whose ill health shocked him: **"First of all, our young men must be strong. Religion will come afterwards. Be strong my young friends; that is my advice to you. You will be nearer to Heaven through football than through the study of the Gita. These are my bold words, but I have to say them, for I love you. You will understand the Gita better with your biceps, your muscles, a little stronger. You will understand the mighty genius and the mighty strength of Krishna better with a little of strong blood in you."**

'Tyaga' and 'Seva'

Swami ji addressed the issue by simplifying the whole problem of existence. He made National reconstruction with the ideals of 'Tyaga' and 'Seva' the most important purpose of living for the young. To the more discerning, he made this way of life a 'spiritual pursuit'. What he attempted to do was to show us a higher reason to live, a higher ideal to live for and a higher state to reach within the limitations and boundaries of a human existence. He has,

in very simple terms given the youth a higher ideal to strive for and in this striving he found answers to the material problems of the suffering millions.

Ability to 'Feel'

All that he wanted our youth to have was an ability to 'feel'. He wanted that feeling for our downtrodden and the poor which would make us sleepless and make our heads reel and our hearts stop. In doing so, he had assured us that an indomitable power would come to us and we will be able to throw away all our self-concerns and place ourselves as servants of society and use our inner energy and will to transcend the problems of our human brethren. The only qualification that Swami ji wanted our youth to have was this wonderful ability to 'feel'.

Purity, Patience and Perseverance

He gave the potent mantra- the power of the 3 P's – Purity, Patience and Perseverance. These three words are the qualities that every young person desiring to do social work needs to possess. Purity in thought word and deed. Patience to understand the dynamics of any community development activity and the fact that Society is always slow to understand and quick to label all such efforts. One also needs great perseverance to work in the complex settings of Indian society. Working with the realities of social, economic and political diversity needs enormous perseverance. Otherwise one could easily get fatigued and demotivated.

Physically Strong

Vivekananda was a great observer of the human mind and the human society at large. He understood that undertaking any social change needed enormous energy and will.

 ISBN : 978-93-80216-07-2

Hence he called upon the youth to not only build up their mental energies, but their physical ones as well. He wanted 'muscles of iron' as well as 'nerves of steel.' He wanted the youth to possess indomitable will and the strength to drink up the ocean. What he wanted was to prepare the youth both physically and mentally to face the challenges that would lie ahead of social workers. According to him **"All good work has to go through three stages. First comes ridicule, then the stage of opposition and finally comes acceptance."**

Three Levels of Service

The young today are extremely result oriented and need to understand the reasons for what they need to do as well as the benefits of what they do. To them Swamiji had a simple formula. He laid down in clear and simple terms the three levels of service that one can do. The first is that of the **Physical** – taking care of the human body and undertaking activities to ameliorate human physical suffering. Running hospitals, orphanages, old-age homes and various income generation programs would qualify for this level. The next higher level was that of **Intellectual** service. Running schools, colleges and awareness and empowerment programs would operate at this level. And finally for the evolved – he prescribed the highest level of **Spiritual** service. He did not forget to warn us of the pitfalls of undertaking such service activities. He understood the human ego and its extraordinary potential for creating problems. He repeatedly warns us against placing ourselves higher than what we should. His famous quote of not standing on the pedestal and offering the poor man five cents is legendary. He clearly wanted the young to undertake these activities, not merely for the betterment of society but for the evo-

lution and growth of the person undertaking the same. This to me is clearly the end of what he extolled the young towards. He saw the 'means' of serving society leading on to the 'end' of spiritual growth of the person doing it. And he so beautifully advised us to 'Serve God in man'. All his philosophy so elegantly and simplistically packed into one statement, in such simple and lucid language that makes it at once achievable and attractive to the youth. This ideal not only looks within the reach of each one of us but makes it so emotionally appealing and motivating to undertake.

Conclusion

His famous quote **"Stand up, be bold, be strong. Take the whole responsibility on your own shoulders, and know that you are the creator of your own destiny.** The youth of India have great creative energy with the positive potential to take them to spiritual heights. If human creativity is a special quality, then the "Never say die!" spirit is its apex. Demographically, today's India is at its youngest best and has the power to meet any challenge with the collective consciousness and effort of all people, especially young people. Thus, the messages of Swami Vivekananda which were addressed to the youths of this country ask the youths to come out of all the poor conditions in their personal lives as well as do something good for their motherland, India. Vivekananda was a great social and religious reformer of India but the most interesting trait he had shown was that he never gave importance to religion before inner self, country and awakening of men.

References

1. Aiyar,C.P.Ramaswami(2007).The Cultural Heritage of India, Institute of culture, Kolkata.

 ISBN : 978-93-80216-07-2

2. Basu, Sankari Prasad(1997) . Swami Vivekananda in Contemporary Indian News (1893-1902),Vol. I, The (2002) .
3. Gambhirananda , Swami.Yugnayak-Vivekananda , Ramakrishna Math, Nagpur.
4. Gokulananda , Swami. Good Bye to Negativity, Adwat Ashram, Kolkata.
5. Jhunjhunwala, Laxmi Niwas .Call to the Youth of India, Ramakrishna Mission , New Delhi.
6. Jhunjhunwala, Laxmi Niwas . Way to Success,Ramakrishna Math Mission , West Bengal.
7. Saradananda , Swami (1979). Sri Ramakrishna:The Great Master,Vol.II , Sri Ramakrishna Math, Madras.
8. Vivekananda , Swami (2011) . Bharat Jagran. Ramakrishna Mission , New Delhi.
9. Vivekananda , Swami . Vartman Bharat. Ramakrishna Mission Marg , Nagpur.

Religion and Vivekananda

Dr. A. K. Mishra
Asso. Prof., English
L.R. (P.G.) College, Sahibabd

A religion is one of the systems of faith that are based on the belief in the existence of a particular god or gods and the activities that are connected with the worship of them. Vivekanand was connected with Hinduism, the main religion of India and Nepal which includes the worship of one or more gods and belief in reincarnation i.e. after one's death one's soul lives again in a new body. He had presented Hinduism as "the mother of religions which taught the double percept of "Accept and Understand one another" in his speech at the Parliament of Religions at Chicago on 11 Sept. 1893. The multiplicity of Hindu's gods and goddesses, often presented as adversaries, and the diversity of rituals associated with them leave enough space for internal discords while the concept of incarnation gives infinite possibility of superstition. Hindus often fought for their gods and goddesses and exploited the unsuspecting but superstitious people. Obviously, Vivekanand faced the daunting task of reconciling the opposites and showing the way out of superstition.

Vivekanand's religion is service. To him service to humanity is above God. He exhorted people to leave God to serve Him in His members as all humanity is the mystic body of God. He said, "The ideal of man is to see God in everything. But if you cannot see Him in everything, see Him in one thing, in that thing which you like best. So on you go. There is infinite life before the soul. Take your

 ISBN : 978-93-80216-07-2

time and you will achieve your end- God...the path to God is long and difficult."

For Vivekanand, there is no distinction between God and Humanity. One day while he was discussing the most abstract philosophy with a disciple, Doctor Girish, the celebrated Bengali dramatist, writer and comedian, intervened and mentioned to him the evils and miseries prevailing in man's everyday life-hungry children, helpless mothers, young widows living in utter deprivations, ruffians on prey and violated women succumbing to abortions to hide their shame, etc.-and asked him whether his knowledge of Vedas and Vedanta offered any prevention or remedy from these evils. As Girish continued Vivekanand sat speechless and deeply moved. Thinking of the pain and misery of the world tears came into his eyes and to hide his feelings he walked out of the room. Girish then said to his disciple, "What a large heart your Guru possesses. I do not esteem him for being a scholar and intellectual giant, as for that large heartedness which made him walk out shedding tears for the misery of mankind. As soon as he heard it...all his Vedas and Vedantas vanished out of sight as it were all the learning and the scholarship that he was displaying a moment ago was cast aside and his whole being was filled to overflow with the milk of loving kindness. Your Swamiji is as much a Jnani and a Pandit as a lover of God and humanity." Vivekanand once declared, "So long as even a single dog in my country is without food, my whole religion will be to feed him."

Vivekanand was against blind faith and superstition which are often mistaken for religion. To him religion is a science like any other science but the difference is that unlike science which deals with the physical world, reli-

gion deals with the metaphysical world. He said, "Religion deals with truths of the metaphysical world, just as chemistry and other natural sciences deal with the truths of the physical world." He elaborates the point further when he says, "Science is nothing but the finding of Unity. As soon as science would reach perfect unity, it would stop from further progress because it would reach the goal. Thus chemistry could not progress further, when it would discover one element out of which all other could be made. Physics would stop when it would be able to fulfil its services in discovering one energy of which all the others are but manifestations...and the science of religion would become when it would discover Him who is the One Life in the Universe of Death. Religion can go no further. This is the goal of science." To him religion is not a close ended but an open ended system. It can never be fixed for ever in certain religious text under whatever form they may appear. It progresses. If it is stopped for a single instant, it is dead. Its universal ideals are always in motion, interaction and cross-fertilization. He opposed blind faith and superstition to the extent that he says, "...it is better that mankind should become atheist by following reason than blindly believe in two hundred millions of gods on the authority of any body. It degrades human nature and brings it to the level of beasts. We must reason... Let man think. The glory of man is that he is a thinking being."

Vivekanand believed in the underlying unity of all religions irrespective of their place of origin or names of God or the ways of worship. He says, "Whatever shape the vase might be that contained the water, the water was always the same, the same God. One drop is as holy as the ocean." Therefore, he was opposed to religious conversion. He said

 ISBN : 978-93-80216-07-2

in The Parliament of Religion, "The Christian is not to become a Hindu or a Buddhist, nor a Hindu or a Buddhist to become a Christian. But each must assimilate the spirit of the others and yet preserve his individuality and grow according to his own law of growth." He stressed that holiness, purity and charity are not the exclusive possession of any particular religion and every religion has produced men and women of exalted characters. He wanted the banner of every religion to display: "Help not Fight", "Assimilation and not Destruction" and "Harmony and Peace and not Discussion".

Nation, Nationalism & National Integration : A Perspective of Swami Vivekananda

Dr.Gunjan Sachdeva
Lecturer, Political Science
V.M.L.G.P.G. College
Ghaziabad

Dr.Sarita Sharma
Lecturer, Political Science
V.M.L.G.P.G. College
Ghaziabad

Vivekanannda was an apostle of national unity and communal harmony. In his own words, "One atom in this universe cannot move without breaking the whole world along with it. There cannot be any progress without the whole world following in the wake and it is becoming everyday clearer that the solution of any problem can never be attained on racial or national or narrow grounds. Every idea has to become broad till it covers the whole of the world. Every aspiration must go on increasing till it has engulfed the whole of humanity, nay, the whole of life, within its scope". It is to be remembered that Swami Vivekananda never entertained narrow nationalism; rather he embraced all nations, great or small. He had a catholic and tolerant mind to discover fundamental unity behind all nations of the world. As Nehru said, "His was a kind of nationalism which automatically slipped into Indian nationalism which was a part of Internationalism". Vivekananda foresaw the problems we are facing at the present world. For the solution of all problems he gave stress on man making. It was Sri Ramakrishna, the Master who taught Vivekananda to serve people. As a result Vivekananda, even after realizing the highest spiritual Truth, walk around the country, meet people, the rich and the poor and make

 ISBN : 978-93-80216-07-2

people conscious about their inherent unity. As a preacher of Vedantic view of equality .Vivekananda wanted total abolition of the cruel and unjust social customs due to misinterpretation of the real caste system. He said that the solution of our national problem does not lie in bringing down the higher, but raising the lower up to the level of the higher. The most serious problem faced by India atpresent is, how to create and maintain the sense of integrity among the people. Variousfactors can contribute to develop such sense of integrity. In this regard the contribution ofSwami Vivekananda is worth mentioning .He has not written a treatise on this issue, buthis views regarding human values and the inherent unity of all human species sprinkledthroughout his various lectures, discussions and writings.

A. Nation

Nation has various meanings, and the meaning has changed over time. The concept of "nation" is related to "ethnic community" or *ethnie*. An ethnic community often has a myth and descent, a common history, elements of distinctive culture, a common territorial association, and sense of group solidarity. A nation is, by comparison, much more impersonal, abstract, and overtly political than an ethnic group. It is a cultural-political community that has become conscious of its coherence, unity, and particular interests.

B. Nationalism

Nationalism is a belief, creed or political ideology that involves an individual identifying with, or becoming attached to, one's nation. Nationalism involves national identity, by contrast with the related construct of patriotism, which

involves the social conditioning and personal behaviours that support a state's decisions and actions.

C. National Integration

National integration is the awareness of a common identity amongst the citizens of a country. It means that though we belong to different castes, religions and regions and speak different languages we recognize the fact that we are all one. This kind of integration is very important in the building of a strong and prosperous nation.

D. Swami Vivekananda's Views On Nation

Swami Vivekananda's importance lies in the fact that he was the first who conceptualized and theorized in clearest terms the Eastern concept of nation / nationalism based on religion / spirituality and championed its superiority over the Western notion of political nation. Vivekananda was "one of the great founders of the national modern movement of India"

Vivekananda, believed in India's spiritual superiority and mission to the materialistic West. He laid the foundation stone of religious theory of nationalism, which is also known as Vedantic nationalism, in India. According to Vivekananda, each nation has at least one unifying principle. India's is religion deepest religious and moral urges of the people, rather than political ideal, would be the basis of India as a nation. The spiritual past of India would act as the unifying force in building up the nation and would be a gift of India to the West. Spirituality or religion had no orthodox or narrow implication to Vivekananda. By these, he meant eternal human values and moral and spiritual advancement. Vivekananda considered the Vedanta as the greatest treasure-house of rational explanations for forging

 ISBN : 978-93-80216-07-2

a modern nation. References may be made to its teachings of faith in oneself, of oneness of all living beings, of the divinity of man, of disinterested action, of tolerance, etc. This concept of Vedantic nationalism is to be regarded as Vivekananda unique and alternative theory. Vivekananda insisted on reclaiming the pristine glory or rich heritage of the past, religion / spirituality in the case of India, for creating national consciousness.

Vivekananda, though not politically, redefined the word "freedom" and gave an altogether new connotation to it. He believed in multiple layers of human existence. Accordingly, "freedom" had a larger meaning to him. It stood for physical, mental, moral, intellectual and spiritual freedom. He condemned weakness and tried all through his life to inculcate fearlessness and strength in his fellow countrymen. Though he consciously avoided the then politics against the British imperialism, these attempts of Vivekananda may be considered as his protest against cultural and psychological colonization. Thus, he obliquely formulated the theory of anti-colonial resistance. The religion that does not infuse strength into the heart, is no religion to him, be it of the Upanishads, the Gita, or the Bhagvatam. Strength is greater than religion and nothing is greater than strength. He wanted to make Hinduism aggressive and build characters by cultivating the spirit of lions in them. Vivekananda opined, "strength must come to the nation through education" . He wanted to build character through education. Though the nation is a collective identity, he gave sole importance on the constituent individuals as the character of the later would determine the nature and fate of the nation. Vivekananda identified two great ideals of Indian civilization, i. e. service to man and eman-

cipation / salvation for the individual, as the moral foundations of national comradeship which an individual must learn and imbibe with utmost sincerity. Hence, he made a passionate call to all Indians, particularly the youth of India, in the following manner which is popularly known as his *Swadesh Mantra*:Vivekananda dreamt of a classless and casteless Indian nation and propagated the theory of a society / community of "an Islamic body with Vedantic brains" . He welcomed Western science and technology to eradicate poverty, hunger from society and save the starving masses. The Indian way of life badly needed materialistic support of the West while the latter needed the spiritual values from the East. This inter-dependence and coordination between the Orient and the Occident was largely popularized by Vivekananda for the true development of mankind in general. This science-religion nexus may be considered as a unique contribution of Vivekananda to the process of nation-building. Vivekananda, however, did not believe in centre / periphery binary as he liked multi-racial and multi-religious conglomeration, as he looked forward to a nation upholding "unity in diversity". He was the true embodiment of tolerance, freedom and strength, service and renunciation. There is no denying the fact that he has had an irresistible impact on the later generations of nationalists, politicians and citizens before and after India's independence.

To the present-day citizens, secularism is akin to anti-religion and something far from Vedanta. And so Vivekananda does not come within the purview of the discussion on political nationalism. He is irrelevant to the modern form of governance and process of nation-building. But the paradox lies in the fact that Vivekananda idea

 ISBN : 978-93-80216-07-2

of religion / spirituality is secular, all-embracing, rational and more modern than the modern concept of political nation itself. Vivekananda avoided politics and state power for being a sanyasin but believed in a political organization as a must for a nation.

E. Swami Vivekananda's Prophets of the Indian Nationalism

Swami Vivekananda is considered as one of the prophets of the Indian nationalism because he tried to awaken Indian people who were lying in deep slumber. He wanted to see the emergence of a strong and self confident India which would give the message of the Vedanta to the world. He strongly believed that the Indians should be proud of their rosy history, tradition, culture and religion and should try their level best to reform them. The awakening of the spirit of India was the goal for young people. Hence he advised them to 'arise, awake and stop not till the goal is reached' Vivekananda believed that there is one all dominating principle manifesting itself in the life of each nation. According to him, religion had been the guiding principle in India's history. He maintained thus: In each nation as in music there is main note, a central theme, upon which all others turn. Each nation has a theme: everything else is secondary. India's theme is religion. Social reform and everything else are secondary'. He worked to build the foundations of a religious theory of nationalism which was later advocated by Bipin Chandra Pal and Aurobindo Ghosh.Vivekananda was the passionate advocate of the religious theory of nationalism because religion, according to him, had to be made the backbone of the national life. He believed that the future greatness of the nation could be built only on the foundations of its

past greatness.

Vivekananda was highly critical of the British rule in India because he held that due to their rule Indians lost confidence, famine engulfed the land, farmers and artisans' were reduced to poverty and deprived. The British government, East India Company etc., were exploiting Indian sin all spheres of socio- economic activity. Due to discriminatory and exploitative economic policies of the British government, Indian's could not develop their natural resources and raw materials. According to Vivekananda, the national regeneration of India would begin when people became fearless and started demanding their rights. He asked the Indians to develop solidarity and oneness of the spirit by the eradication of social evils, superstitions and evils of caste system. He was of the opinion that the evils of caste system. He was of the opinion that the evils of caste system divided the Indian society into classes and created the feeling of inferiority and superiority among them. As a prophet of Indian nationalism, Vivekananda held that though there was a variety for, languages, cultures and religions in India, there existed a common ground between Indian people. For the Indians religion was unifying force as the spirituality was Blood in the life of India. Vivekananda was an ardent patriot and had tremendous love for the country. He was the embodiment of emotional patriotism. He had established almost a sense of identity- consciousness with the country, its peoples and its historic ideals'. According to him, it was the duty of the educated Indians to make its knowledge available to the people in their oneness and solidarity. He exhorted Indians not to get involved in the divisive issue of race and language and imbibe the spirit of unity. He said that Hindus should not blame Muslims for

 ISBN : 978-93-80216-07-2

their numerous invasions because the Muslim conquest came as a salvation to the downtrodden masses in India. National unity, according to him, could not be fostered by caste conflict but it would be secured by raising the lower to the level of higher classes and not by bringing the upper to the lower level. For the growth of national spirit in India, independence of mind was necessary. Indians should be proud of their motherland and declare that all Indians, despite their caste, linguistic and religious differences, are brothers.

The main component of Vivekananda concept of nationalism is as follows.

- There was unity and oneness of the Indian people despite their out ward diversity.
- It was necessary to remove the evils of caste system in order to inculcate the spirit of social solidarity.
- There was similarity in the teachings of different religions and India consisted of allreligious communities.
- National spirit in India could be developed by young people by devoting their life to social service and national awakening.

F. Swami Vivekananda Views on National Integration

Swami Vivekananda was a man of versatile genius. The world found in him a patriot saint, a lover of art and architecture, a classical singer, a commanding orator of great charm, a visionary, a philosopher and above all a worshipper of humanity. Being a man of spiritual order he travelled all over India and was moved at the pitiable condition of India of his time. Through his all round effort he tried to find out the causes of India's degradation and to overcome

them. He realized that the main cause of India's degradation lay in theneglect of the masses. Through his writings, lectures and works Vivekananda seeks to develop a sense of oneness among all, the oneness which is the only reassuring principle of India for her stability and progress. As an 'Advaitin' Swami Vivekananda believes in the inner unity or one-ness of all human beings and tried to awaken the dormant spirit of each individual. He addressed man as the glorious children of immortality. He had firm conviction that India is full of endless spiritual potentialities and that these potentialities could not be actualized if man does not know himself, does not grow fearlessly having faith in his fellow beings. In his 'Practical Vedanta' Vivekananda provided a very powerful basis for awakening of the masses of Indian society. With the Upanishad he declared, "Arise! Awake! And stop not until the goal is reached". We will then certainly cross the path, sharp as it is like the razor, and long and distant and difficult though it be. What he wanted in every individual human being is his character to be built upon firm determination and good will for others.

Vivekananda's compassionate heart bled for the Indian people. In a remarkable letter to the Maharaja of Mysore he made an appeal, "The one thing that is at the root of all evils inIndia is the condition of the poor. The poor in the West are devils, compared to them ours are angels and it is therefore so much easier to raise the poor, the only service to be done for our lower classes are to give them education, to develop their lost individuality." He realized that the root cause of all evils is selfishness tending towards exploitation. Thus the poor is exploited by the rich; the illiterate is exploited by the learned, physically weak is exploited by the physically strong and soon.

 ISBN : 978-93-80216-07-2

He wanted to eliminate all these basic evils of society and to develop a sense of unity and integrity among them. Hebelieved that all evils may be conquered by love, which is the real, living force of mankind. He proclaimed, "India will be raised, not with the power of the flesh but with the power of the spirits; not with the flag of destruction, but with the flag of peace and love." It is the power of love which prompts us to do actions which are morally good, universally accepted and conducive to the welfare of the society. Vivekananda held that all distinctions and separateness are illusory and unreal, and therefore unjust. Swami Vivekananda worked for awakening of the masses, the development of their physical and moral strength and creating in them a consciousness of the pride in the ancient glory and greatness of India. It is for this reason that he is hailed as one of the great architect of modern nationalism in India.

Vivekananda was an apostle of national unity and communal harmony. In his own words, "One atom in this universe cannot move without breaking the whole world along with it. There cannot be any progress without the whole world following in the wake and it is becoming everyday clearer that the solution of any problem can never be attained on racial or national or narrow grounds. Every idea has to become broad till it covers the whole of the world. Every aspiration must go on increasing till it has engulfed the whole of humanity, nay, the whole of life, within its scope". It is to be remembered that Swami Vivekananda never entertained narrow nationalism; rather he embraced all nations, great or small. He had a catholic and tolerant mind to discover fundamental unity behind all nations of the world. As Nehru said, "His was a kind of

nationalism which automatically slipped into Indian nationalism which was a part of Internationalism".

Vivekananda foresaw the problems we are facing at the present world. For the solution of all problems he gave stress on man making. It was Sri Ramakrishna, the Master who taught Vivekananda to serve people. As a result Vivekananda, even after realizing the highest spiritual Truth, walk around the country, meet people,the rich and the poor and make people conscious about their inherent unity.

As a preacher of Vedantic view of equality Vivekananda wanted total abolition of the cruel and unjust social customs due to misinterpretation of the real caste system. He said that the solution of our national problem does not lie in bringing down the higher, but raising the lower up to the level of the higher. Vivekananda's idea of integrating the whole nation is not just a geographical or political integration, not even an emotional or sentimental integration, not even an integration based upon the feeling that we are Indians, but it is a spiritual integration based upon the awakening of the inner Spirit which is dormant in ordinary human being. He said that a nation can be integrated by upholding the national ideals. In his own words, The national ideals of India are RENUNCIATION and SERVICE. Intensify her in those channels and the rest will take care of itself". The message of Vivekananda is of immense value for social progress, international understanding and world peace. It has been rightly observed: In Swami Vivekananda the past and future of India fused in an ideal way and he shines as the symbol of integrated India for centuries to come.

Conclusion

 ISBN : 978-93-80216-07-2

Swami Vivekananda was a great nationalist of India who wanted to revitalise the nation through the vitality of religion. He believed that religion constituted the 'centre, the keynote of the whole of music of national life of India. He is regarded as the patriot and prophet of modern India. It was due to his message of courage and fearlessness that he was described as 'tamer of souls 'and 'cyclonic monk from India'.

Vivekananda's nationalism had no narrowness or exclusiveness in it. Though intense was his love for his country, yet his love was not confined to his country alone. There was nothing chauvinistic about his patriotism. His heart was large enough to take within its embrace the whole of humanity. His ultimate ideal was internationalism and brotherhood of man. He was sure that unless India gains freedom there cannot be any welfare of the Indians.

References

1. The Complete Works Of Swami Vivekananda, Vol. 1,P 342
2. Sanghamitra Debnath ,Swami Vivekananda And Indian National Integration, International Journal Of Current Research,Vol. 4, Issue, 03, Pp.164-165, March, 2012
3. Amit Kumar Raul, Swami Vivekananda On India As A Nation, Iosr Journal Of Humanities And Social Science, Volume 9, Issue 3 (Mar. - Apr. 2013)
4. Swami Vivekananda, My India: The Eternal India, (Kolkata: R. K. Mission Inst. Of Culture, 1993, Rpt. 2008)
5. V.P. Verma, Modern Indian Political Thought,1980
6. Vishno Bhagaban, Indian Political Thinkers,Delhi, 1999

Swami Vivekananda's Educational Proposal in Present Context

Dr.Amit Kumar
Asst. Prof.,
R.B.S. College of Education, Rewari

The 19th century India produced a galaxy of great men who have enriched our national life by their talent and personality. Swami Vivekananda was one of them. Vivekananda believed in essential unity of man and God. He was an eclectic educationalist too. He tried to unite Indian spirituality and western materialism. He desired happy mingling or fusion of the two. He also wanted to unite Para Vidya and Apara Vidya. He was revolutionary in the field of education and touched every aspect of it. His ideas on various aspects of education are more relevant and are needed more today than probably during his life time. Although Vivekananda did not write a book on education, he contributed valuable thoughts on the subject of education that are relevant and viable today. He had firm moorings in oriental culture, yet he had the broadness to welcome all that is worth borrowing from the west (Ghosal, 2012). No wonder that today, over a century after his death, we still try to enrich ourselves with the gems of Vivekananda's thoughts on education. If we attentively study the writings and lectures of Vivekananda, we will find that his views on education are products of original reflection. Let us discuss the different aspects of Vivekananda's scheme of Education.

Defining Education

Swamiji who describes religion as 'the manifestation of

 ISBN : 978-93-80216-07-2

the divinity already in man' defines education as 'the manifestation of the perfection already in man'. '**Manifestation**' implies that something already exists andis waiting to be expressed. The main focus in learning is to make the hidden ability of a learner manifest. '**Already in man**'. This refers to a human being's potential, which is the range of the abilities and talents, known or unknown that is born with. '**perfection**' in the Swami's definition of education is also very significant. The Greek word 'teleics' translated as 'perfect', and suggests the idea of attaining a goal or an end. The English word 'perfect' implies completion, or something being made whole.

Thus, according to Vivekananda, education is the discovery of the inner self i.e. self revelation. It is not an imposition on the individual of certain borrowed ideas from the external sources, but a natural process of enfoldment of all the inherent powers which lie in dormant condition in an individual. Education is development from within. His thoughts on education ought to be seriously re-examined today.

The Objectives of Education

The ultimate goal of all educational effort is to strive towards character development characterized by the development of will-power, leading to courage, stamina and fearlessness. Through education the individual should develop adaptability and able to meet the challenge of a changing society, and this can be able through education and training that he or she receives from his parents and teachers. Education should lead to a feeling of brotherhood and the unity of mankind. According to Swami Vivekananda, work is worship, so to serve the masses is to serve God, so edu-

cation should lead us to recognize this and to fulfil this end. Education should lead us to acquire the spirit of renunciation.

Method of Teaching

Vivekananda's method of education resembles the heuristic method of the modern educationists. In this system, the teacher invokes the spirit of inquiry in the pupil who is supposed to find out things for himself under the bias-free guidance of the teacher. Anticipating the much acclaimed modern, student- centred method of learning where the teacher plays the role of a facilitator, Vivekananda asks the teacher to come down to the level of the learner and 'give him a push upwards'. So there should be least intervention and the ideal teacher should consciously under-teach so that the learners get ample scope for learning themselves : 'No one can teach anybody. The teacher spoils everything by thinking that he is teacher'. Unfortunately todays teachers and administrators are not enthusiastic enough to execute in the class room the psychological methods of teaching as suggested by experts.

Role of Teacher

It is true that today's education does not produce properly developed personalities having faith, hope, confidence, motivating power, balanced outlook on life, conscious of their rights as well as their duties. The reason does not lie with the youth or with their mind as such as but with the agencies responsible for moulding a person's character– parents, teachers, social conditions in which he/she grows, and the system of education to which we trust his/ her future. Our schools and universities still continue to be merely examining bodies turning out mechanically every

 ISBN : 978-93-80216-07-2

year in huge numbers men and women destitute in faith and poor in culture – in the knowledge of our ancient literature, arts unable to think originally , incapable of standing on their own feet, and virtually untouched by religion which Swami Vivekananda regarded "the innermost core of education". The teacher should share with the student the conviction that they are both truly one in Spirit – at the same time cultivating in the student a feeling of dignity and self-respect". As Vivekananda said "The only true teacher is he who can immediatelycome down to the level of the student, and transfer his soul to the student's soul and see through the student's eyes and hear through his ears and understand through his mind. Such a teacher can really teach and none else".

Women's Education

Vivekananda explains the point about how female illiteracy retards the progress of a society : 'It is not possible for a bird to fly on only one wing' . The main objective of female education is to make them strong, fear-less and conscious of their chastity and dignity.

Medium of Instruction

As regards to medium of instruction, Vivekananda strongly advocated for mother-tongue. He a true nationalist, and a champion of national education argued instruction through mother-tongue. He visualized to Indianise Indian education. He also wanted to spread mass education through mother-tongue so that it will reach to everyone. But as today it is the era of globalisation where whole world is one so it is the need of time to consider the english language as mother tounge of world and as important as individual's mother tounge.

Conclusion

The exposition and analysis of Vivekananda'a scheme of education brings light its constructive, practical and comprehensive character. Vedantic concept of education might offer a solution to the crisis of the Indian Education.What the child gets in the name of education in the purely academic atmosphere in our schools is an incomplete view of life, which does not enable him to face boldly and completely every problem of his life in the competitive society. Education in the Vedantic sense promotes the unity of mankind at both the national and international levels. Education system for its proper functioning demands responsibility equally from the teachers, students and guardians and it must be discharged in the best interests of the country.

References

1. Ghosal , S. (2012) : The Educational Thoughts of Swami Vivekananda : A Review,University News, 50 (09), Feb. 27 – March 04, 2012, New Delhi
2. Ajit Mondal & Dr. Jayanta Mete: Swami Vivekananda : Some Reflections on Education, International Journal of Multidisciplinary Educational Resarch ,ISSN: 2277-7881,Vol.1, Issue 3, Aug. 2012.

 ISBN : 978-93-80216-07-2

Swami Vivekananda : Philosophy of Education

Dr. Sohan Singh
Asso. Prof., Commerce
Govt. P.G. College
Noida

Deepak Singh
Research Scholar, Commerce
Govt. P.G. College
Noida

The view of Swami Vivekananda about the education is not information of knowledge which is inserted or thought by force into the mind of a child. In their own words, "education is the manifestations of perfection already havereached to a man". He also describes that the libraries could be the greatest saints of the world for all of us and encyclopedias have also become seers and rishis. Concept of education of Swami Vivekanandawas that, "It is the manifestation of the perfection already in man." He further also said that the education is not of getting large amount of information; but it would be an undigested material of our developed brain. The good qualitative education must have the life building, man-making, character building, and assimilation of ideas. This would help to us to equip ourselves for the struggle of our life.

Philosophy of Swami Vivekananda About The Life

The main essence of the philosophy of life is to become the fearless through our struggle and serve the humanity with peace to other. He wants to make an individual without any type of fear from all enemies, try to face all the challenges confidently without any suppression. By synthesizing the idealistic philosophy of the west community and creative philosophy of the archaic Hindu Dharma, he got a glory and greatness to the Hindu way of living in the

world.

Philosophy of Swami Vivekananda About Education

The education according to Swami Vivekananda is that which prepares us for all struggles for the existence in this scenario. Education prepares us for the social service, to develop our character. For getting only a degree is not an education, the proper and right education must be viewed on the basis of the character, confidence mental powers, intelligence, and intellectual power and inculcate Self-confidence and self-reliance in the individuals. Swamiji has also emphasized that the knowledge which we gets from worldly, by writing or spiritual lies embedded in the human mind. It was also covered with a veil of darkness and ignorance. Education is an important tool to open from the darkness and ignorance, after getting of education, the knowledge will shines out dazzlingly. The teaching and learning are the one way of process. The teacher only guides, suggests, points out and helps the student. Self learning and self getting knowledge is the real education. Our teacher only motivates and encourages the students to find out the hidden treasure of knowledge that lies dormant within us. He condemned and refused the bookish learning and rote memory education

Swami Vivekananda – Real Meaning of Education

According to Vivekananda, the meaning for education is love. Love and character making are the best means for education. Love is a good inspiration in character making. Love in the minds of the educator is the real source of the influence upon the educated. The real education, gives the growth and opportunity to expand the personality. Swami ji wanted that the real education for total human develop-

 ISBN : 978-93-80216-07-2

ment was the main vision. "Character, efficiency, accuracy and humanism must be the aim of all education. Vivekananda strongly pleaded that development of character through the service of his fellowmen, the utilization of his talents for ensuring the happiness and welfare of the millions of his less fortunate fellow-citizens should be the aim of the education." The child should be taught through by love, it makes fellow feelings and love for human beings. Education must help the individual to recognize his cultural heritage and to use it in his struggle of life. Education is a life-long process towards the fullest development of human personality, self-discovery, self-perfection, self-awareness and self-manifestation.

Swami Vivekananda –Real Aim of Education

Swami Vivekananda wanted all-round the development of real education to our heart and mind, to strengthen the strong character and consciousness, to help in the cultivation of strengthens and energy, nurture the mind and intellect the feelings of kindness, empathy and sympathy. He has said very emphatically: "We want that education by which character is formed, strength of mind is increased, the intellect is expanded and by which one or more can stand on ones/their own feet. What we truly need is to study, independent of foreign control, different branches of the knowledge that is our own and with it the English language and Western science; we need technical education also and all else that will develop the huge industries. So that men, instead of seeking for service, they may earn enough to provide for them and save against a rainy day. The end of all education, all training, must be man-making. The real training, through which the current expression will brought under control and become fruitful, is called

education. What our country wants are muscles of iron and a nerve of steel, gigantic wills which nothing can resists., which can penetrate into the mysteries and secrets of the universe and will accomplish their purpose in any fashion, even if it means going down to the bottom of the ocean, meeting death face to face. It is a man-making religion that we want. It is man-making theories that we want. It is man-making education all round that we want."

Swami Vivekananda's - View on Education

View on education of Swami Vivekananda deals withmoral&education of religion, physical education and, medium of education, women education and education for each & every sections of society in our country.

1. **EDUCATION AND RELIGION:** Swami Vivekananda has said, "Our religion is the most innermost core of education. I do not mean my own or anyone else opinion about religion. Religion is as the rice and everything else, like the curries. Taking only curries causes indigestion and so is the case with taking rice alone." Therefore, education of religion is a main part of a curriculum. Swami Vivekananda considered MadbhagwatGita, Upanishads and all the Vedas are the most important curriculum for religious education. For him, a religion is a self realization. It is not only an individual's development but also for the transformation of totality of a man. The real religion will not be limited to a particular place of time. He has advocated for the unity of world religion. He also has realized real truth while practicing of the religion. The truth is our main power, where untruth is our weakness. Where our knowledge is our truth, thereour ignorance is our untruth. Thus the real

 ISBN : 978-93-80216-07-2

truth increases our mental &power, courage and energy. It is light giving, therefore, necessary for the individual as well as collective welfare. In the Vivekananda's point of view, religion and ethics are one and the same.

2. **MEDIUM OF EDUCATION:** In this worldLike Sh. Rabindranath Tagore and Sh. Mohandas Karamchand Gandhi, Swami Vivekananda has also emphasized the education through the mother tongue. Besides this, there must be a common acceptable language which is very necessary to keep the country united in all over the world. Swami Vivekananda has appreciated the greatness of our Sanskrit that it is the only source of all Indian languages; with the absence of this knowledge, it will not be possible to understand our Indian culture. It is like a store or a house of archaic heritage, to develop our society it is necessary that all of us should know this language, besides the knowledge of our mother tongue.

3. **PHYSICAL EDUCATION:** As we all know that without the knowledge of physical education, our self-realization or strong character building is not possible. We must know how to make our body strong through physical education, to attain a complete education, it is almost very necessary to develop both the body and the mind. In particular, Swami Vivekananda has stressed the kind value of physical education in curriculum. He has also said, "You will be nearer to Heaven through football than through the study of Gita. You will understand Gita better by your biceps, your muscles a little stronger. You will understand the Upanishads better and the glary of the Atman, when your body stands firm on your feet and you feel yourself as man."

4. **MAN MAKING EDUCATION:** Another view of educational philosophy of Swami Vivekananda is a harmonious deduction between the archaic Indian ideals and modern Western beliefs. He did not only stress on the mental,physical, moral, spiritual and vocational development of a child but also he has advocated the women education as well as education of the masses. The essential characteristics of his educational philosophy of Swami Vivekananda are idealism, naturalism and pragmatism. In a naturalistic view points, he emphasized that real education is possible only through nature and natural propensities.

5. **SELF EDUCATION:** In fact Self education is only the self knowledge. That is, of only our own self is the good guide in all the struggle of our life. If we take an example, at the childhood stage, the child will face lot of problems or commit mistakes in the process of character formation in his life. The child will also learn very much by his mistakes. All the errors are the stepping stones to our progress in our character. This progress will need more and more courage. The strong will also is the sign of great character will makes men great, which is also needed.

6. **WOMEN EDUCATION:** In our world women education is not in the hands of other people, the powers are in the women only. Swami Vivekananda has also considered that each woman to be the incarnation of boost power and asked men to respect them in each &every place. He has rightly pointed out that unless Indian women own secure a respectable place in this country, other people can never march forward to them. The important features of Swami Ji's scheme of woman edu-

 ISBN : 978-93-80216-07-2

cation are to make them stronger, more fear-less, and more conscious of their chastity and dignity. He also insists that men and women are equally competent not only in the academic matters, but also must have equal companion in the home, office, schools, colleges and family. Vivekananda being a keen observer could make the difference in perception about the status of women in the West and in rest of India.

7. **EDUCATION FOR EACH & EVERY SECTION OF SOCIETY:** Swami Vivekananda has advocated for the universal education so that the backward people in our country may fall in with others. To uplift the backward classes he/she chooses an education as a very powerful instrument for their life process in the society. Thus the education must spread to every household in the country, to factories, playing grounds and agricultural fields. If our children do not come to the school the teacher must reach them. Three or fourwell educated men should team up, collect all the data of education and must go to the village to impart the education to our children. Thus, Swami Vivekananda hasfavoredan education for different type of sections of oursociety, poor and rich, young and old, male and female.

CONCLUSION

Now with the analysis of philosophy about educationof Swami Vivekananda, the uplift of people is possible only through real education. In this paper, all views about education bring a light of its constructive and comprehensive character. By only giving the real education, Swami ji always tried to materialize the moral and spiritual and welfare of our society and uplift of being humanity, irrespec-

tive of our caste system, our nationality or the time. By this way, we could get the strong and a good nation with peace and harmony and without caste system and creed. Swami Vivekananda builds a strong nation for our sake as already I have tried to tell this thing in this paper very concretely and concisely through my effort.

References :

1. Nair V.S. Sukumaran; Swami Vivekananda The Educators (1987) New Delhi; Sterling Publisher (P) LTD
2. Srivastava Kamal S. SrivastavaSangeeta; Great Philosophers & Thinkers on Education (2011) New Delhi; A.P.H.Publishing Corporation.
3. Biswan A. &Aggraval J.C; Seven Indian Educators (1977) New Delhi; National Solidarity (publication)Press
4. BharthyVijaya; Educational Philosophies of Swami Vivekananda & John Dewey (2010)New Delhi; A.P.H.Publishing Corporation
5. ChakrabartiMohit; Pioneers in philosophy of education (1995) New Delhi; Concept publishing company
6. Pandy R.S.; Philosophising Education (2005) New Delhi; Kanishka Publishers; Distributors.
7. www.google.co.in
8. 4 Pani, S.P. and Pattnaik, S.K. Vivekananda, Aurobindo and Gandhi on Education, New Delhi: Anmol Publications PVT. LTD., 2006, pp. 59-60.
9. Pani, S.P. and Pattnaik, S.K. Vivekananda, Aurobindo and Gandhi on Education, New Delhi: Anmol Publications PVT. LTD., 2006, p. 68. Singh, Y.K. Philosophical Foundation of Education, New Delhi: APH Publishing Corporation, 2007, p. 233.

 ISBN : 978-93-80216-07-2

Teachings of Swami Vivekananda

Dr. Sangita Gupta
Asso. Prof., Home Science
K.M.G.G.P.G. College,
Badalpur

Swami Vivekananda, absolutely the gem among Indian scholars, was born in an affluent family in Kolkata on 12 January 1863. In his pre-monastic life as Narendranath Datta, a precocious boy, excelled in music, gymnastics and studies His father,Vishwanath Datta, was a successful lawyer with interests in a wide range of subjects, and his mother, Bhuvaneshwari Devi, was endowed with deep devotion, and strong character. Narendranth Datta graduated from Calcutta University, with a vast knowledge of Western philosophy and history.

Before entering the monastic life Swami Vivekananda explored India. During his travels all over India, he was deeply moved to see the appalling poverty and backwardness of the masses. He was the first religious leader in India to understand and openly declare that the real cause of India's downfall was the neglect of the masses. Without providing adequate food and other bare necessities of life to the hungry millions, neither India can become a power in international arena nor its spiritual superiority can be restored. Unfortunately, the contemporary social reformers could not visualize the poverty as the mother of all socio-economic problems. For this they should be taught improved methods of agriculture, village industries, etc. It was in this context that Vivekananda grasped the crux of the problem of poverty in India. Owing to centuries of op-

pression , the downtrodden masses had lost faith in their capacity to improve their lot. It was first of all necessary to infuse into their minds faith in themselves. For this they needed a life-giving, inspiring message. Swamiji found this message in the principle of the Atman, the doctrine of the potential divinity of the soul, taught in Vedanta, the ancient system of religious philosophy of India. He saw that, in spite of poverty, the masses clung to religion, but they had never been taught the life-giving, ennobling principles ofVedanta and how to apply them in practical life.

According to Swami Vivekananda, the masses needed two kinds of knowledge: (i) Secular knowledge to improve their economic condition, and (ii) Spiritual knowledge to infuse in them faith in themselves and strengthen their moral sense. The next question was , how to spread these two kinds of knowledge among the masses? Through education this was the answer that Swamiji found.

It was when these ideas were taking shape in his mind in the course of his wanderings Swami Vivekananda heard participated in the World's Parliament of Religions held in Chicago in 1893. The Parliament provided the right forum to present Swami Ramkrishna's message to the world.

Swami Vivekananda wanted to have an inner attitude and divine call regarding his mission. Both of these he got while he sat in deep meditation on the rock-island at Kanyakumari. With the funds partly collected by his Chennai disciples and partly provided by the Raja of Khetri,

The Parliament of Religions and After

His speeches at the World's Parliament of Religions made him famous as an 'orator by divine right' and as a 'Messenger of Indian wisdom to the Western world'. After

 ISBN : 978-93-80216-07-2

the Parliament, he spent nearly three and a half years spreading Vedanta as lived and taught by Sri Ramakrishna, mostly in the eastern parts of USA and also in London.

Awakening His Countrymen

He returned to India in January 1897. After returning from United States Swami Vivekananda delivered a series of lectures in different parts of India, which created a great stir all over the country. Through these inspiring and profoundly significant lectures Swamiji attempted to do the following:

- to rouse the religious consciousness of the people and create in them pride in their cultural heritage;
- to bring about unification of Hinduism by pointing out the common bases of its sects;
- to focus the attention of educated people on the plight of the downtrodden masses, and to expound his plan for their uplift by the application of the principles of Practical Vedanta.

Founding of Ramakrishna Mission

Soon after his return to Calcutta, Swami Vivekananda founded on1 May 1897 Ramakrishna Mission, in which monks and lay people jointly undertook propagation of Practical Vedanta, and various forms of social service, such as running hospitals, schools, colleges, hostels, rural development centers etc, and conducting massive relief and rehabilitation work for victims of earthquakes, cyclones and other calamities, in different parts of India and other countries.

It is worth mentioning here that many western people, common man and intellectuals, were influenced by Swami

Vivekananda's life and messages. Some of them became his disciples or devoted friends. Among them the names of Margaret Noble (later known as Sister Nivedita), Captain and Mrs Sevier, Josephine McLeod and Sara Ole Bull, deserve special mention. Nivedita dedicated her life to educating girls in Calcutta.

In June 1899 he went to the West on a second visit. This time he spent most of his time in the West coast of USA. After delivering many lectures there, he returned to Belur Math in December 1900. The rest of his life was spent in India, inspiring and guiding people, both monastic and lay. Incessant work, especially giving lectures and inspiring people, told upon Swamiji's health. His health deteriorated and the end came quietly on the night of 4 July 1902. Before his Mahasamadhi he had written to a Western follower: "It may be that I shall find it good to get outside my body, to cast it off like a worn out garment. But I shall not cease to work. I shall inspire men everywhere until the whole world shall know that it is one with God."

Swami Vivekananda's teaching

1. Love Is The Law Of Life:All love is expansion, all selfishness is contraction. Love is therefore the only law of life. He who loves lives, he who is selfish is dying. Therefore, love for love's sake, because it is law of life, just as one breathe to live.
2. It's our Outlook That Matters: It is our own mental attitude, which makes the world what it is for us. Our thoughts make things beautiful, our thoughts make things ugly.The whole world is in our own minds. Learn to see things in the proper light.
3. Life is Beautiful: First, believe in this world - that there

 ISBN : 978-93-80216-07-2

is meaning behind everything. Everything in the world is good, is holy and beautiful. If you see something evil, think that you do not understand it in the right light. Throw the burden on yourselves!

4. It's The Way You Feel: Feel like Christ and you will be a Christ; feel like Budha and you will be a Budha. It is feeling that is the life, the strength, the vitality, without which no amount of intellectual activity can reach God.
5. Set Yourself Free: The moment we realised God sitting in the temple of every human body, the moment we stand in reverence before every human being and see God in him - that moment we are free from bondage, everything that binds vanishes, and we are free. Unselfishness is God. One may live on a throne, in a golden palace, and be perfectly unselfish; and then he is in God. Another may live in a hut and wear rags, and have nothing in the world; yet, if he is selfish, he is intensely merged in the world.

Three things are necessary to make every man great, every nation great:

1. Conviction of the powers of goodness.
2. Absence of jealousy and suspicion.
3. Helping all who are trying to be and do good.

Him Swami ji call a Mahatman (great soul) whose heart bleeds for the poor, otherwise he is a Duratman (wicked soul).

- So long as the millions live in hunger and ignorance, Swami ji hold every man a traitor who, having been educated at their expense, pays not the least heed to them!

- Doing good to others is virtue (Dharma); injuring others is sin.
- Strength and manliness are virtue; weakness and cowardice are sin.
- Independence is virtue; dependence is sin.
- Loving others is virtue; hating others is sin.
- Faith in God and in one's own Self is virtue; doubt is sin.
- Knowledge of oneness is virtue; seeing diversity is sin

6. Don't Play the Blame Game: Condemn none: if you can stretch out a helping hand, do so. If you cannot, fold your hands, bless your brothers, and let them go their own way.
7. Help Others: If money helps a man to do good to others, it is of some value; but if not, it is simply a mass of evil, and the sooner it is got rid of, the better.
8. Uphold Your Ideals: Our duty is to encourage everyone in his struggle to live up to his own highest idea, and strive at the same time to make the ideal as near as possible to the Truth.If you really want to judge the character of a man, look not at his great performances. Every fool may become a hero at one time or another. Watch a man do his most common actions; those are indeed the things which will tell you the real character of a great man. Great occasions rouse even the lowest of human beings to some kind of greatness, but he alone is the really great man whose character is great always, the same wherever he be.

- Education is the manifestation of the perfection already in man.

 ISBN : 978-93-80216-07-2

- The more this power of concentration, the more knowledge is acquired, because this is the one and only method of acquiring knowledge. Even the lowest shoeblack, if he gives more concentration, will black shoes better; the cook with concentration will cook a meal all the better. In making money, or in worshipping God, or in doing anything, the stronger the power of concentration, the better will that thing be done.
- How has all the knowledge in the world been gained but by the concentration of the powers of the mind? The world is ready to give up its secrets if we only know how to knock, how to give it the necessary blow. The strength and force of the blow come through concentration.
- To me the very essence of education is concentration of mind, not the collecting of facts.
- Along with the development of concentration we must develop the power of detachment. We must learn not only to attach the mind to one thing exclusively, but also to detach it at a moment's notice and place it on something else. These two should be developed together.
- By doing well the duty which is nearest to us, the duty which is in our hands now, we make ourselves stronger; and improving our strength in this manner step by step, we may even reach a state in which it shall be our privilege to do the most coveted and honoured duties in life and in society.
- Doing is very good, but that comes from thinking. . . Fill the brain, therefore, with high thoughts, highest ideals, place them day and night before you, and out of

that will come great work.

- We need to have three things;
  (i) the heart to feel,
  (ii) the brain to conceive,
  (iii) the hand to work.
- Live for an ideal, and that one ideal alone. Let it be so great, so strong, that there may be nothing else left in the mind; no place for anything else, no time for anything else

9. Listen To Your Soul: You have to grow from the inside out. None can teach you, none can make you spiritual. There is no other teacher but your own soul.
10. Be Yourself: The greatest religion is to be true to your own nature. Have faith in yourselves!Faith, faith, faith in ourselves, faith, faith in God this is the secret of greatness. If you have faith in all the three hundred and thirty millions of your mythological gods, and in all the gods which foreigners have now and again introduced into your midst, and still have no faith in yourselves, there is no salvation for you. Have faith in yourselves, and stand up on that faith and be strong.He is an atheist who does not believe in himself. The old religion said that he was an atheist who did not believe in God. The new religion says that he is the atheist who does not believe in himself.Whatever you think, that you will be. If you think yourselves weak, weak you will be; if you think yourselves strong, strong you will be; if you think yourselves impure, impure you will be; if you think yourselves pure, pure you will be.
11. Nothing Is Impossible: Never think there is anything

 ISBN : 978-93-80216-07-2

impossible for the soul. It is the greatest heresy to think so. If there is sin, this is the only sin - to say that you are weak, or others are weak.

12. You Have the Power: All the powers in the universe are already ours. It is we who have put our hands before our eyes and cry that it is dark.

- The remedy for weakness is not brooding over weakness, but thinking of strength. Teach men of the strength that is already within them.
- Go on! Do not look back if you think you have done something that is not right. Now, do you believe you could be what you are today, had you not made those mistakes before? Bless your mistakes, then. They have been angels unawares. Blessed be torture! Blessed be happiness! Do not care what be your lot. Hold on to the ideal. March on! Do not look back upon little mistakes and things.
- It is our own mental attitude which makes the world what it is for us. Our thoughts make things beautiful, our thoughts make things ugly. The whole world is in our own minds. Learn to see things in the proper light.
- This world is the great gymnasium where we come to make ourselves strong.
- Do not fly away from the wheels of the world-machine, but stand inside it and learn the secret of work. Through proper work done inside, it is also possible to come out.
- Stand up, be bold, and take the blame on your own shoulders. Do not go about throwing mud at others; for all the faults you suffer from, you are the sole and

only cause.

13. Learn Everyday: The goal of mankind is knowledge... now this knowledge is inherent in man. No knowledge comes from outside: it is all inside. What we say a man 'knows', should, in strict psychological language, be what he 'discovers' or 'unveils'; what man 'learns' is really what he discovers by taking the cover off his own soul, which is a mine of infinite knowledge.
14. Be Truthful: Everything can be sacrificed for truth, but truth cannot be sacrificed for anything.
15. Think Different: All differences in this world are of degree, and not of kind, because oneness is the secret of everything.

In the course of a short span of life (1863-1902), Vivekananda's four classics: Jnana-Yoga, Bhakti-Yoga, Karma-Yoga, and Raja-Yoga, all of which are outstanding treatises on Hindu philosophy placed him in high repute.He is regarded as one of the most outstanding scholar on Vedanta. Vivekananda delivered innumerable lectures, wrote inspired letters in his own hand to his many friends and disciples, composed numerous poems, and acted as spiritual guide to the many seekers, who came to him for instruction. Swami Vivekananda once spoke of himself as a "condensed India." His life and teachings are of inestimable value to the West for an understanding of the mind of Asia. William James, the Harvard philosopher, called the Swami the "paragon of Vedantists." Max Muller and Paul Deussen, the famous Orientalists of the nineteenth century, held him in genuine respect and affection. According to Romain Rolland, " His words, are great music, phrases in the style of Beethoven, stirring rhythms like the march of

 ISBN : 978-93-80216-07-2

Handel choruses. I cannot touch these sayings of his, scattered as they are through the pages of books, at thirty years' distance, without receiving a thrill through my body like an electric shock. And what shocks, what transports, must have been produced when in burning words they issued from the lips of the hero!''

References :

1. Eastern and western Disciples, Life of Swami Vivakananda, Vol.I&II, Advait Ashrama, Kolkata. www.advaitaashrama.org
2. The complete works of Swami Vivekananda, Vol. I to IX, Advaita Ashrama, Kolkata.
3. Teachings of Swami Vivekananda, Advaita Ashrama, Kolkata.

Swami Vivekananda : Relevance In Modern Age

Dr. Shalja
Asst. Prof., Political Science
G.D. College, Punwarka, Saharanpur

"..Fill the brain with high thoughts, highest ideals place them day and night before you and out of that will come great work."

-Swami Vivekananda

Swami Vivekananda was not only a visionary, or a monk but a nationalist and a reformer par excellence. Many in our own country think that religion and mysticism and social amelioration and political and economic reconstruction cannot unite and declare that the secular and spiritual ideals are polar opposites. Such a notion has been responsible for the gross misrepresentations of the spirit of Indian philosophy, religion and culture, but the mystics, the saints and the sages of India prove standing refutation of this gross misconception. Swami Vivekananda created not only a lofty Advaita Vedantic Ideal under a order new religious know as Ramkrishna Mission but founded a new epoch in the life of the Indian people also on social, economic, and political fronts in consistency with India's past heritage and in harmony with the Western ideals. Swami Vivekananda is that man who has understood the Ashwath tree" having its root (One) above and branches (manifold) below and (which is) avyaya (which will never perish) Srimand Bhagwat Geeta, thorough study of his social and political ideals be made particularly at a time when the younger generation feels attracted to the Western ideals without looking to its own treasures suitable to its own surroundings.

 ISBN : 978-93-80216-07-2

Thoughts of Swami Vivekananda

At the crossroads of two epoch-making centuries, when restless Europe was convulsing, on the one hand, under the far-flung tentacles of the greedy, shameless imperialists who were secretly conspiring to drag the world into a blood-bath for the sake of redividing their spheres of influence, colonies, markets, etc. and on the other hand, as a result of the nefarious designs of the imperialists, the progressive people—the thinking intelligentsia, the working class and their allies—were preparing for a showdown with the existing masters of the society, when the thinking people of India were searching for the correct path which the country should follow in social, political and other matters, Vivekananda appeared like a meteor and within a short period of less than a decade of his public life not only endeared himself to millions of his countrymen and thousands of his admirers and followers in Europe and America, not only dispelled the century-old slanderous notions about India and Indians spread carefully and constantly by the imperialists and their agents in various guises, but made major contributions in many fields of human knowledge which were of far-reaching consequence

Programme of National Regeneration

The programme for the national regeneration of India, as propounded by Vivekananda, was not formulated all at once, was not given out just in one speech or writing but gradually crystallised and took shape in his speeches, talks and articles.....In his Madras speech Vivekananda said: "...I have a message for the world which I will deliver without fear, and without care for the future. To the reformers I will point out that I am a greater reformer than any one of

them. They want to reform only little bits. I want root and branch reform." Vivekananda was of the opinion that India should be saved by the Indians themselves. Swami Vivekananda's agenda for India consisted of the following:

(1) the need to raise the masses, give them opportunities for all-round development 'without injuring their religion'; (2) the need to remove untouchability; (3) the need for the well-to-do to assist the suffering millions; (4) the need to give women opportunities for proper education and self-improvement; (5) the need for the universal spread of the right kind of education; (6) the need to cultivate the material sciences; (7) the need for technological and industrial development; and, above all, (8) the need to give freedom to society for its onward movement."

Such a comprehensive programme articulated so clearly and consistently, was SV's long-lasting contribution to the building of modern India. Before Gandhi, it was SV who integrally combined personal spiritual practice with a larger social responsibility, drawing the middle classes into the larger national struggle.

Social And Political Thoughts

Swami Vivekananda is also interestingly a person whose philosophy and reading of the conception of India , Hinduism and the people of India , is very much touched with his experiences in the United States of America and the New World, unlike most of India's other political philosophers like Mahatma Gandhi whose experience of the west came from the British and or Britain. Swami Vivekananda is a man in any ways engaged with the ideas which still haunt us today . He is also a person who had traveled extensively across the world , speaking about India . He is possibly the

 ISBN : 978-93-80216-07-2

foremost person of his times who confronts the question of caste , religion , minorityism , modernism , economics and politics of India and he brought a refreshing viewpoint to the same . He is articulate and very clear and with his writings and sayings managed to set the agenda which is still with us today as Nationalists.

Vivekananda is a radical traditionalist. His version and interpretation of high religious philosophy was also marked with a very specific political / economic outlook which arose from his concern about the people of his country , or his co-religionists . His vision is still relevant and broadly and startlingly still applicable in India today . Interestingly his exploration of Hinduism and the condition of the people of India leads him to two broad presumptions , one that religion cannot be given on an empty stomach and two , the poor of India or as he would like to term the "sudra" should be awakened . This has lead to attempts by socialists and communists to appropriate the legacy of Swami Vivekananda. Vivekananda recognized clearly that for a society to work in the long run , man had to be given the opportunity to excel and make money ... and he has memorably and famously equalized the Grihasta making money with an anchorite (sadhu) praying in his cell.He seems to be the first person to have discovered the link with what is today known in India " caste is class" theory and also to have seen that such was not a perfect formulation. His vision of combining and reading caste and class together is even by today's standard extremely radical and innovative.

He is the originator of the word "Dalit", a word to be used for the pariahs , since it is a direct translation from the word "suppressed" to describe the situation of the "pari-

ahs" of his time. Interestingly he realized as well that the only way to destroy the caste system in India was through "free market". Vivekananda is unique in that he is neither in thrall of the past , nor is he willing to discard everything from it . Gandhi himself realized that though Vivekananda looked to the past for inspiration he did not want to replicate the past. In that way he is the "middle path" between Gandhi and Ambedkar ,and therefore reflective of the true Indian mean in society .

Thoughts on Education

Swami Vivekananda believed education is the manifestation of perfection already in men. He thought it a pity that the existing system of education did not enable a person to stand on his own feet, nor did it teach him self-confidence and self-respect. To Vivekananda, education was not only collection of information, but something more meaningful; he felt education should be man-making, life giving and character-building. To him education was an assimilation of noble ideas. Swami Vivekananda compared human mind with a monkey who is always restless and incessantly active by his own nature. According to him an uncontrolled mind leads to all the negativities in life and a controlled mind saves us and frees us from such thoughts. As modern education has lost much of its connection with the values of human life. Vivekananda, in his scheme of education, meticulously includes all those studies, which are necessary for the all-around development of the body, mind and soul of the individual. These studies can be brought under the broad heads of physical culture, aesthetics, classics, language, religion, science and technology. According to Swamiji, the culture values of the country should form

 ISBN : 978-93-80216-07-2

an integral part of the curriculum of education. The culture of India has its roots in her spiritual values. The time-tested values are to be imbibed in the thoughts and lives of the students through the study of the classics like Ramayana, Mahabharata, Gita, Vedas and Upanishads. This will keep the perennial flow of our spiritual values into the world culture.

Thoughts on Religion

Swami Vivekananda was a follower of Vedanta. To Swami Vivekananda religion was not only talk or doctrine or theory, to him religion was realization, as he said, "it is being and becoming, not hearing or acknowledging; it is the whole soul becoming changed into what it believes."He also felt religion is the gist of all worship is to be pure and to do good to others . According to Vivekananda, an important teaching he received from Ramakrishna was that *Jiva is Shiva* (each individual is divinity itself). So he stressed on *Shiva Jnane Jiva Seva*, (to serve common people considering them as manifestation of God). According to Vivekananda, man is potentially Divine, so, service to man is indeed service to God. Swami Vivekananda gave a new terminology of Religion which is in fact the most significant contributions of Swami Vivekananda to the modern world is his interpretation of religion as a universal experience of transcendent Reality, common to alhumanity. Swami Vivekananda told, we must not only tolerate other religions, but positively embrace them, and that the truth is the basis of all religions.Swami Vivekananda felt, the greatest misfortune of the world is we do not tolerate and accept other religions. In his lecture in Parliament of religions on September 15, 1893, he told a story of a frog who lived in a well for a long time, he was born there and brought

up there and he used to think that nothing in the world can be bigger that. Swami Vivekananda concluded the story-

"I am a Hindu. I am sitting in my own little well and thinking that the whole world is my little well. The Christian sits in his little well and thinks the whole world is his well. The Mohammedan sits in his little well and thinks that is the whole world''.

Swami Vivekananda told, we must not only tolerate other religions, but positively embrace them, and that the truth is the basis of all religion.

Thoughts on India's Cultural History

There is no doubt that Swamiji took immense pride in the India's inheritance from the past. But he was totally against the fact that almost everything that came from the past was worth admiration. To him, India was a representation people, and people meant masses. Eradication of poverty, removal of illiteracy, restitution of human dignity, liberty from fear, availability of spiritual and secular knowledge to all, irrespective of their class, caste, and ending of all the monopolies, economic, religious, intellectual, cultural and social- all these together made up a part of what he got from his Vedantic Socialism or Vedanta. With his reinterpretation of Vedanta, and is deep rooted concern for the masses and their issues, Swami Vivekananda gave India a new lease of life. He raised his voice against the feudal and colonial oppression, and at the same time Swamiji looked for answers regarding the India's historical destinies, and ways to transform it into strong, wealthy and independent state. He always reiterated the fact that India could only be built with the help of masses, small groups of energetic patriots, brave and strong with "muscles of iron and nerves

 ISBN : 978-93-80216-07-2

of steel and gigantic wills".

Thoughts on womanhood

Swami Vivekananda warned it is completely unfair to discriminate between sexes, as there is not any sex distinction in *atman* (soul), the soul has neither sex, nor caste nor imperfection. He suggested not to think that there are men and women, but only that there are human beings. Swami Vivekananda felt, The best thermometer to the progress of a nation is its treatment of its women. And it is impossible to get back India's lost pride and honor unless they try to better the condition of women. Vivekananda considered men and women as two wings of a bird, and it is not possible for a bird to fly on only one wing. So, according to him, there is no chance for welfare of the world unless the condition of woman is improved.

Swami Vivekananda noticed almost everywhere women are treated as playthings. In modern countries like America, women have more independence, still, Vivekananda had noticed, men bow low, offer a woman a chair and in another breath they offer compliments like "Oh, how beautiful your eyes.." etc. Vivekananda felt, a man does not have any right to do this or venture so far, and any woman should not permit this as well. According to Swami Vivekananda such things develop the less noble side of humanity. They do not tend to noble ideals. According to Vivekananda, the ideal of womanhood in India is motherhood – that marvelous, unselfish, all-suffering, ever-forgiving mother. Vivekananda felt, in India, there are two great evils – trampling on the women, and grinding through the poor through caste restrictions.

Relevance In Modern Age

- Vivekananda's thought has been subject to many different interpretations. Over a century ago and long before communications technology and capitalism promoted the idea of a global village, India offered the world a truly global citizen in Swami Vivekananda. He declared that man's quest for peace would remain incomplete so long as the West failed to acknowledge the spiritual and civilisational advances made by India and blend these thoughts with the ideas of modernity and progress. Likewise, he advised his countrymen to pay attention to national integration, cut through societal hierarchies and meaningless rituals, pursue a path of modernization alongside spiritual development. and bind all citizens to the task of once again making India a world leader.
- Vivekananda's plan of action was not limited to the religious realm. He was equally sensitive to social and economic issues. In other words, Hindus should strive towards a total transformation and inclusive growth. Caste is omnipotent in Indian society but he discarded it without any hesitation. He had observed the working of the Brahmo Samaj and that experience seems to have coloured his general attitude to all reform movements. By the time Vivekananda came on the scene, except in a few pockets like Kerala and Punjab, reformation had lost its vitality. He believed that reform had already run its course. By the last quarter of the 19th century, the religious movements had almost vanished, even if popular religion was on the ascendant. To the Indian middle class which formed the social base of these movements, he had choicest epithets: "cursed by the wheels of divisions, superstitious, without an iota of charity, hypo-

 ISBN : 978-93-80216-07-2

critical, atheistic cowards," etc. Such Socio-economic changes produce a transient or temporary phase of social confusion, unrest, and apprehension. It produces stressful life style. When science and technology, inventions and discoveries, and advances in knowledge (including humanities -such as psychology and human resource management) fail to answer questions pertaining to declining moral and ethical values, widening gap between the rich and the poor, failing economies, and feeling of insecurity all around, one turns to something else for finding peace and balance of mind. Religion offers such a hope for most of us.

- Vivekananda's ideas, which emphasized the distinction between religion and spirituality and drew the attention of man to the limitations of the former and the unlimited powers of the latter, caught the imagination of the world. As he straddled across North America and undertook a whirlwind lecture tour, he became India's most prominent ambassador and opened the eyes of the West to the fount of knowledge and the civilisational treasures that lay across the seas in the East. Similarly, he traveled across the length and breadth of India and lectured incessantly on the ideas of modernity that Indians would pick up from the West.
- We must have eyesight over the views of Vivekananda in which he suggested that education should not be for stuffing some facts into the brain, but should aim at reforming the human mind. Swami Vivekananda's teachings were focused on various aspects of religion, education, social issue, character building, etc.
- This is particularly so because inherited spiritual and

religious cultures from ancient times guide us on the path of both Abhyudaya (social and individual progress) and Nishreyasa (path of renunciation) for human fulfillment. Today, human evolution has progressed to the stage where we are prompted to look deeper into our religious beliefs and spiritual understanding. In one's own religion or faith one is sure to find treasures of higher truth; the truth of diversity held together by the unifying substratum of universal divinity. Vivekananda's thoughts caught the imagination of people in diverse societies and cultures because of the universality of his preaching and the exalted goals that he set for man. Given the politics of his times and the social and economic environment that prevailed in India and large parts of the world, Vivekananda was a true revolutionary who was speaking ahead of his times. He ignited the minds of millions of people in India and outside because of his commitment to humanism, egalitarianism, equity, rational thinking and democratic values. He believed that a nation built on the bedrock of education and equality, including gender equality, which guaranteed a level playing field for all citizens, could never be a laggard in the comity of nations. The base of the national super structure should be a knowledge society he said and the mantra of equality should combine with spiritual strength and self belief. When this happened, a strong and vibrant India would emerge and this nation would once again be a global leader in the market place of ideas.

- The central idea in the life and teaching of Vivekananda was religious universalism. In the eyes of those who believed in universalism, there was no difference between

 ISBN : 978-93-80216-07-2

the followers of different religions. All religions are universal — equal and true. Vivekananda, however, argued that in Hinduism, universalism found ideal articulation. And was hence a leader in spiritual matters. Equally important was his notion of social service for which he set up the Ramakrishna Mission. The mission gave an entirely new ambience to reform.

Conclusion

The search for the path Indian society should follow in social, spiritual and political spheres is still going on along with all its accompanying sufferings, agonies, despair, frustration, hope and fear. In this context it would not be out of place to humbly suggest: let us go back to Vivekananda, assimilate a bit of his fire, sincerity of purpose, deep love for the downtrodden have-nots, faith in their future and readiness to accept the unknown new fearlessly. The message of Vivekananda was really the message of modern humanity. Commitment of Swami Vivekananda towards universalism and tolerance, his active identification with humanity as a whole. His philosophical and social thought and epic patriotism not only inspired the growth of nationalist movement in India, but also made a great impact in abroad. The practical aspects of these teachings reflect in renunciation and service. This forms the twin ideal of Swami Vivekananda's emphasis for the modern man and woman to strive for. Along with excellence and perfection in every field of human endeavor one should keep these ideals before eyes, lest the person should miss the aim.

References-

1. Bibliography of Swami Vivekananda From Wikipedia, the free encyclopedia
2. Bharathi, K. S. (1998). Encylopaedia of Eminenet Thinkers: The

political thought of Vivekananda. Concept Publishing Company. ISBN 978-81-7022-709-0.

3. Mohapatra, Amulya Ranjan (2009.Swaraj-Thoughts of Gandhi,Tilak,Aurobindo, Raja Rammohun Roy, Tagore Readworthy. pp. 14–. ISBN 978-81-89973-82-7.
4. Dutt, Kartik Chandra (1999). Who's who of Indian Writers, 1999: A-M Sahitya Akademi. ISBN 978-81-260-0873-5
5. Vivekananda, Swami (1996). Swami Lokeswarananda, ed. My India: the India eternal (1st ed. ed.). Calcutta: Ramakrishna Mission Institute of Culture. pp. 1–2. ISBN 81-85843-51-1.
6. Vivekananda, Swami (1996).My India: the eternal several(1st ed. ed.). Calcutta: Ramakrishna Mission Institute of Culture. pp. 110–111. ISBN 81-85843-51-1
7. Volume : 2 | Issue : 8 | Aug 2013 ISSN - 2250-1991 65 X Paripex - Indian Journal Of Research
8. Encyclopedia of political science, O.P Gauba, Vishal printers Delhi 2010

Role of Swami Vivekananda in National Awakening

Ajay Singh
Research Scholar, History
K.M.G.G.P.G. College, Badalpur

Dr. Yogendra Singh
Asst. Prof. Chemistry
M.K.G.D. College, Ghaziabad

Difficulties will come but so what; Swamiji said, "Struggle, Struggle, Struggle is theSine Qua Non of life and stagnation is death; Vedas proclaim this as "Charaivaiti,charaivaiti, charaivaiti....."

This is the ideal of India, and through this he wanted to integrate India. Integration of India means integrating Indian minds, Indian hearts, and Indian emotions. It cannot come byparochial and fanatical clinging to my religion, my caste, my language, and so on, which is happening in the country. That will only divide us.You integrate your emotions through Bhakti not only love God, but also have a focus on whatever pursuit you have to take up; and integrate your intellect through Jnana, and integrate the capacity for work, Karma, for the welfare of humanity. And there should be tremendous concentration to bear upon Jnana, Bhaktiand Karma.Swamiji said that the nation can be integrated by upholding the national ideals. In his own words, 'The national ideals of India are RENUNCIATION and SERVICE'.[1]

Awakening the inner potentiality of every human being was the task Vivekananda addressed. He wrote in a letter, "My ideal indeed can be put into a few words and that is: to preach unto mankind their divinity, and how to make it manifest in every movement of life." In the same letter he

writes, “Awake, awake, great ones! The world is burning with misery. Can you sleep?” When the entire country awakens as a nation, as a part of this awakening, you can realize your own inner potential, which is divine. In every movement of your life this divinity is to be awakened and manifested. India has been cultivating the science of spirituality for thousands of years. The best brains of our country have been engaged in this pursuit for thousands of years. The touch of Swami Vivekananda will be the awakener of the potential divinity in each one of us. He felt that this has to be done, and once you do this, the entire Indian nation will be unified integrated, not on the basis of science and technology, not on the basis of material advancement, but on the basis of spirituality, inwardness, and contemplation.

Rabindranath Tagore said “If you want to know India, study Vivekananda. In him everything is positive and nothing negative.”He was very positive, enthusiastic, energetic, vivacious, and full of youthful energy. And, therefore, whenever young men approached him, he was so happy. Wherever he went, he roused the youths to positive action for the good of humanity. 'Young men of Madras, my hope is in you', he said, when he was in Madras.[2] 'Young men of Lahore, my hope is in you' when he was in Lahore. 'Young men of Bengal, my hope is in you' when he was in Bengal. All the time he was interested in rousing the youths, because the youths have tremendous power and the capacity for positive thinking.

Swamiji's fundamental message is: give away whatever you have. Give energy, give help, give service, and give everything away, but don't ask anything in return. Infinite energy is within you, infinite love and bliss are within you. Every child, Swami Vivekananda said, is a born optimist.

 ISBN : 978-93-80216-07-2

He dreams, dreams, and dreams that all positive things will become a reality tomorrow. Vivekananda expressed his extreme confidence about the transformation from youth to 'real youth' through his statement: "My faith is in the younger generation, the modern generation; out of them will come my workers. They will work out the whole problem, like lions."[3]He always wanted the youths to discover their inner strength. He never gave importance only to that knowledge which is gained from books but also knowledge from practical experience and wanted the youths to face the different challenges of life by their own inner strength that means a self- confidence. In this regard he conveyed his opinion in these words: "All power is within you; You can do anything and everything. Believe in that; do not believe that you are weak. Stand up and express the divinity within you."

Explaining his method of social reform he said; to the reformers I will point out, that I am a greater reformer than anyone of them. They want to reform only little bits. I want root and branch reform. Where we differ is in the method. Theirs is the method of destruction, mine is that of construction. I do not believe in reform; I believe in growth. I do not dare to put myself in the position of God and dictate to our society, "This way thou shouldstmove and not that." He also pointed out; Did India ever stand in want of reformers? Do you read the history of India? Who was Ramanuja? Who was Shankara? Who was Chaitanya? Who was Kabir? Who was Dadu? Who were all these great preachers, one following the other, a galaxy of stars of the first magnitude? Did not Ramanuja feel for the lower classes? Did he not tried try all his life to admit even the pariah to his community? Did he not try to admit even

Mohammendans to his own fold ? Did not Nanak confer with Hindus and Mohammendans, and try to bring about new state of things? They all tried, and their work is still going on. The difference is this. They had not the fanfaronade of the reformers of today; they had no curses on their lips as modern reformers have; their lips pronounced only blessings. They never condemned. They said to the people that he race must always grow. They looked back and they said, "O Hindus, what you have done is good, but, my brothers, let us do better." They did not say, "You have been wicked, now let us be good". That makes a whole world of difference. We must grow according to our nature.[4]

What do we want in India? I must tell you that we are very weak, very weak. First of all is our physical weakness. That physical weakness is the cause of at least one-third of our miseries. We are lazy, we cannot work; we can not combine, we do not love each other; we are intensely selfish, not three of us can come together without hating each other, without being jealous each other.[5] The problems in India are more complicated, more momentous, than the problems in any other country. Race, religion, language, and government- all these together make a nation. The elements which compose the nations of the world are indeed very few, taking race after race, compared to this country; here have been the Aryans, the Dravidian, the Tartar, the Turk, the Mogul, the European- all the nations of the world, as it were, pouring their blood into this land. Of the languages the most wonderful conglomeration is here; of manners and customs there is more difference between two Indian races than between the European and the Eastern races.[6]

 ISBN : 978-93-80216-07-2

The solution of the caste problem in India, assumes this form, not to degrade the higher castes, not to crush out the Brahmin. The Brahminhood is the ideal of humanity in India, as wonderfully put forward by Shankaracharya at the beginning of his commentary on the Gita, where he speaks about the reason for Krishna's coming as a preacher for the preservation of Brahminhood of Brahminness. That was the great end. The solution is not by bringing down the higher, but by raising the lower up to the level of the higher.[7]

Vivekananda believed that a country's future depends on its people, and his teachings focused on human development.To make a great a future in India, the whole secret lies in organization, accumulation of power, and co-ordination of wills. He wanted "to set in motion machinery which will bring noblest ideas to the doorstep of even the poorest and the meanest"[8]. He addressed to the children of India, I am here to speak to you today about some practical things, and my object in reminding you about the glories of the past is simply this , many times have I been told that looking in to the past only degenerates and leads to nothing , and that we should look to the future. Look back, therefore as far as you can, drink deep of the eternal fountains that are behind, and after that, look forward, march forward and make India brighter, greater, much higher than she ever was. We must learn the elements of our being, the blood that courses in our veins; we must have faith in that blood and what it did in the past; and out of that faith and consciousness of the past greatness, we must build an India yet greater than what she has been.[9] In the background of emerging nationalism in British ruled India, Vivekananda crystallized the nationalistic ideal. I want

to inferiority by the British people, now understood the old glorious days of India. The people became aware of their past and they decide to gather on a stage to face the British people.

There was hardly any leader who did not follow the ideas of Vivekananda during Indian national movement. In the series of national leaders Mahatma Gandhi, Pt. Motilal Nehru, Maulana Mohammad Ali, RabindraNath Tagore, Aurobindo Ghosh, Subhash Chandra Bose and many more. Everybody was effected directly or indirectly by the views of Swami Vivekananda. These all person wrote much about the theory of Vivekananda the belief of Swamiji, the vision of Swamiji, the ideas of Swami Vivekananda etc. When the mass of India became aware to Vivekananda ideas the movement became more and more strong. On 6th Feb., 1921, the birth anniversary of Swami Vivekananda, Bapu had visited Belur Math accompanied by Pt. Motilal Nehru and MaulanaMohd. Ali, he said: "I have come here to pay my homage and respect to the revered memory of Swami Vivekananda .....I have gone through his works very thoroughly, and after having gone through them. The love that I had for my country became a thousand fold." LokmanyaBalGangadharTilak with whom Swami Vivekananda had stayed, in Pune, for ten days, had been struck by the radiant wisdom and learning of his young guest whose profound spirituality made a great impression on him.[10]Sri Aurobindo regarded Vivekananda as the one who awakened India spiritually. Mahatma Gandhi counted him among the few Hindu reformers "who have maintained this Hindu religion in a state of splendor by cutting down the dead wood of tradition". Pt. JawaharLal Nehru also much impressed by such a great personality.The first governor

 ISBN : 978-93-80216-07-2

general of independent India, Chakravarti Rajagopalachari, said "Vivekananda saved Hinduism, saved India."[11]

At Chicago in his address, Swami Vivekananda had articulated the ancient wisdom and Insights of India, the time-honoured philosophy of oneness and harmony within pluralism, the recognition of, respect for, and acceptance of different paths of logical and intuitive access to absolute truth. He had quoted the famous sloka from the Rigveda"**एक सद्**"truth is one, "**विप्राबहुदावदान्ति**" The learned may describe it variously. He had quoted the profound perception expressed in a verse from the Vishnu Sahasranam (Vol. 29).

आकाशात्पतितं तोयं यथा गच्छति सागरम्।
सर्वदेवनमस्कारः केशवं प्रति गच्छति॥

He cited the explicit authority in the eleventh verse in chapter IV of theBhagvad Gita.

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तास्तयैव भजाम्यहम्।
मम वर्त्मानुवन्ते मनुया पार्थः सर्वसः॥12

Proudly he proclaimed: "we believe not only in universal toleration, but we accept all religious as true". It is this spirit that is expressed in the philosophies of our seers, in the devotional songs and the prayers of our common people for centuries past. This outlook has enabled India to become the home and refuge of all the great religions of the world respected by the broad mass of her people. Swami Vivekananda had also come out strongly against sectarianism, bigotry and fanaticism and had registered the hope that these narrow, futile and erroneous tendencies would disappear. Every word of his exposition was followed by the mass during national movement.[13]

His effort constantly was to draw attention to the uni-

fying, harmonizing virtue in the religious thought of all the great persuasions. He said: "My India is first off all to bring out the gems of spirituality that are stored up in our books and in the possessions of a few only, hidden as it were, to bring them out; to bring the knowledge out of them..... In one word I want to make them popular. I want or bring out these ideas and let them be the common property of all."

The whole approach of Swami Vivekananda was greater dedicated to building a new world, attending to its most vexations problems, providing solutions of a feasible, workable form. He was actually conscious of the enormous scale of poverty, backwardness and disease in India. The object sense of inferiority amongst the people, the shameful station assigned to women and the need therefore to organize wide-ranging effort to surmount these problems. He once said; "It is an insult to a starving man to teach him metaphysic". We need a religion which will give us faith in ourselves, a national self-respect, and the power to feed and educate the poor and relieve the misery.[14]

Forcefully, inspiringly, he used to say, "Arise, Awake, and stop not till the goal is reached."[15] Within each of you there is the power to remove all wants and miseries. Believe this and that power will be manifested. "Often he could quote the Sikh saying.

सवा लाख पर एक चढाऊँ। जय गुरू गोविन्द नाम सुनाऊँ।।

A remarkably modernistic appreciation of the true nature of education and its urgent need in India was also consistently expounded by Swami Vivekananda"Educate,

 ISBN : 978-93-80216-07-2

Educate,than this there is no other way." He provided remarkable clear and meaningful definitions of education. What is Education? Is it books learning? No is it diverse knowledge? Not even that. The training by which the current and expression of will are brought under control and become fruitful is called education. On another occasion he stated; "We want that education by which character is formed strength of mind is increased, the intellect expanded, and by which one can stand one one's feet." The practical, realistic approach is again expressed in the answer he gave once to a question on educational needs in India.

First of all the people tried to remove the social evil like casteism, untouchability, religious supremacy. The people of different caste gathered at a same place. Mahatma Gandhi who was the true supporter of the Ideas of Swami Vivekananda regarding the modern Indian awakening gave special attention to the lower caste of the society. The movement which was only a middle class revolution up to Gandhiji's arrival now became a mass movement and it was the work of many people who made this movement, a mass movement.

The participation of different caste, religion in movement grows this very fastly and the Britishers now face many difficulties. The movement like non co-operation, civil disobedience, quit India Movement, were totally mass movement on which the glimpse of Swami Vivekananda of mass can been seen.

Swami Vivekananda showed the path of the new India to the people and the people run on it by the different stages.

References :

1. The complete works of SwamiVivekananda, (Calcutta :

Advaitaashrama, 2013),Vol.V, p- 231
2. The complete works of Swami Vivekananda, (Calcutta : Advaitaashrama, 2013), Vol.III, p-328
3. Call to the youth of India, published on the occasion of 150 thbirth anniversary celebrations of Swami Vivekananda, p-15
4. The complete works of Swami Vivekananda, (Calcutta : Advaitaashrama, 2013), Vol.III, p-238-44
5. ibid., p-266
6. ibid.,p-311-12
7. ibid.,p-318-19
8. R.C. Majumdar, Swami Vivekananda's: A Historical Review, Advaita ashram, p-215
9. The complete works of Swami Vivekananda, (Calcutta : Advaitaashrama, 2013), Vol.III, p-311
10. Dr. Shankar DayalSharma, Towards a new India, under the article, The vision of Swami Vivekananda, p-66
11. R.C. Majumdar, Swami Vivekananda's: A Historical Review, Advaita ashram, p-185
12. Bhagvad Gita,11th verse chapter IV.
13. The complete works of Swami Vivekananda, (Calcutta : Advaitaashrama, 2013), Vol.IV, p-65-66
14. Dr. Shankar Dayal Sharma, Towards a new India, under the article, The vision of Swami Vivekananda, p-70-71
15. The complete works of Swami Vivekananda, (Calcutta : Advaitaashrama, 2013), Vol.III, p-344

 ISBN : 978-93-80216-07-2

Synthesizing Tradition and Modernity : The Relevance of Swami Vivekananda in Present Times

Dr. Rani Tiwari
Asso. Prof., English
S.S.V. College, Hapur

Vivekananda's writings and lecturers have contributed a great deal to the strengthening of the moral foundation of Indian nationalism in theory and practice. He is acclaimed as the "spiritual father of Bengal nationalism."1 Unity and strength were the political testaments of Vivekananda to the Indian nation. At a time when Indian intelligentsia was busy imitating the customs and manners of the westerners, he proclaimed, "Be proud that thou art an Indian" and that the west had to learn much from India.

Swamiji was of the view that the lessons of sympathy and toleration, India have to teach to the world. He said that education has yet to be in the world, and civilisation has begun nowhere yet, ninety-nine point nine percent of the human races are more or less savages. We may read of these things in books, and we hear of toleration in religion. But very little of it is there in the world. He took his own experience for that saying that maximum people do not even think of it. There is tremendous religious persecution, yet in every country in which he had been, the same old objections are raised against learning anything new. The little toleration that is in this world, the little sympathy that is yet in the world, for religious thought, is practically here, in the land of the Aryas, and nowhere else. It is here that Indians build temples for Mohammendans and Christians

and nowhere else. If we go to other countries and ask the people of other religions to build a temple for us, we will see how they will help. There will be hardly any help. The one great lesson, therefore, that the world wants most, that the world has yet to learn from India, is the idea, not only of toleration, but of sympathy.

Urged by such as intense feeling of patriotism, Swami Vivekananda worked to propound the foundation of a spiritual theory of nationalism which was later advocated by Aurobindo Ghosh. He wrote "Race, religion, language, Government all these together make a nation"2 and "in the interest of one's nation is one's own wellbeing".3 He believed that this one all dominating principle manifests itself in the life of each nation. Each nation has a mission of its own to fulfill in the life of the world. Religion is the keynote of the national life of India. He said, "Political greatness or military power is never the mission of our race; it never was, and mark my words, it never will be. But there has been the other mission given to us, which is to conserve , to preserve , to accumulate , as it were into a dynamo , all the spiritual energy of the race , and that concentrated energy is to put forth in a deluge on the world whenever circumstances are propitious" 4 . He further stated, "Each nation has its own peculiar method of work, some through social reforms, some through other lines. With us religion is the only ground along which we can move". 5 And if any nation attempts to throw off its national vitality, the direction which has become its own through the transmission of centuries, that nation dies.

He believed , since religion has been the momentous guiding principle in India's history , religion alone , therefore be made the backbone of Indian national life. He called

 ISBN : 978-93-80216-07-2

for unity in religion. By this he meant to find certain common grounds of pure spirituality beneath all the sects and also finds " an infinite amount of liberty to think and live our own lives" 6 He said , " This is the first step and therefore it has to be taken".7 It is not only true, that the ideal of religion is the highest ideal ; in the case of India it is the only possible means of work.

His ideal of nationalism was based on the following possible means of work.

(i) The awakening of the masses who form the basis of the nation.

(ii) Development of physical and moral strength.

(iii) Unity based on common spiritual ideas.

(iv) Consciousness of and pride in, the ancient glory and greatness of India.

While Swami Vivekananda was an ardent patriot and a nationalist to the core of his heart, his love for mankind knew no geographical bounds. He advocated for the harmony and good relationship of all nations. His internationalism was spiritual based on the Vedantic principle of universality of self. He said : "In politics and sociology , problems that were only national twenty years ago can no more be solved on national grounds only. They are assuming huge proportions , gigantic shapes. They can only be solved when looked at in the broader light of international grounds. International organizations, international combination , international laws are the cry of the day. That shows the solidarity . In science , everyday they are coming to a similar broad view of matter. You speak of matter, the whole universe as one mass , one ocean of matter, in which you

and I, the sun and the moon, and everything else, are but the names of different little whirlpools and nothing more. Mentally speaking it is one universal ocean of thought, in which you and I are similar little whirlpools and as spirit it moveth not, it changeth not. It is the one Unchangeable, Unbroken , Homogenous Atman". 8

He declared that there could be no peace or progress without the whole world being based on Truth and Justice. Every idea has to become broad till it covers the whole of the world; every aspiration must go on increasing till it has engulfed the whole of humanity. Thus, his concept of nationalism and internationalism is dynamic and encourages people to be mingled with the life of other individuals and nations not only for the good of others, but also for their own well-being, progress and prosperity. In his memorable words, " I am thoroughly convinced that no individual or nation can live by holding itself apart from the community of others , and wherever such an attempt has been made under false ideas of greatness , policy or holiness the result has always been disastrous to the secluding one. The fact of our isolation from all the other nations of the world is the cause of our degeneration and its only remedy is getting back into the current of the rest of the world. Motion is the sign of life." 9

Reference :

1. The Complete Works of Swami Vivekananda (Vol.I) (XI Ed.) , Almora : Advaita Ashram , 1962, p.XV.
2. V.P. Verma , Modern Indian Political Thought , Agra : Laxmi Narain Agarwal, p.6 .
3. Swami Vivekananda, To the Youth of India , Almora : Advaita Ashram , 1963 , p.113.
4. Swami Vivekananda, The Complete Works of Swami Vivekananda, Vol. IV, Almora : Advaita Ashram , 1957 , pp.471-72.

 ISBN : 978-93-80216-07-2

5. Ibid., pp. 5-6.
6. Ibid., p. 104.
7. Ibid., p. 114.
8. Ibid., p. 114.
9. Swami Vivekananda, To the Youth of India , Almora : Advaita Ashram , 1963 , pp.89-90.
10. Quoted in the book by D.R. Jatava , The Political Philosophy of Dr. B.R. Ambedkar, Agra : Phoenix Publishing House , 1965, p.59.

Insights from Swami Vivekananda

Sunil Kumar
Member, Managing Committee,
R. K. Mission, New Delhi

1. **Introduction:** Between 12 January 2013 and 2014, worldwide programs were organized to Commemorate the 150th Birth Anniversary of Swami Vivekananda, whose Birthday is celebrated every year as the National Youth Day, since 1985. Swami Vivekananda shot into prominence after his brief address at the first World Parliament of Religions at Chicago on 11th September, 1893 where he presented the spiritual wisdom of the most ancient Vedas, appropriately referred to as 'Sanaatana Dharma', i.e. universal and eternal values and principles, practice of which leads to peace and prosperity for all, and takes us on the critical path to the highest human perfection in and through our daily work-life. Thus, the Vedic culture of India not only tolerates but accepts all religions as attempts of people of different nature to experience the omnipotent, omnipresent, omniscient infinite.

2. **The Making of Swami Vivekananda:** The common purpose of all religions, including Hinduism is to guide and prepare every being to walk towards the highest perfection. Religions has made a tremendous contribution to the world over thousands of years., But today, religions are no longer in fashion and science has grown in opposition to religion with the motto 'nullius in verba', i.e. not to accept the words of authority.

   Such a young school boy, Naren, came to Sh.

 ISBN : 978-93-80216-07-2

Ramakrishna with the modern age, unwilling to accept even the highest truth without verification, yet with a burning zeal for truth; and was transformed into Swami Vivekananda.

Narendra Nath Dutta grew up in a family where his mother was devoted to the Ramayan, whereas his father, as a successful, attorney, often had visitors of different 'faiths and was a great admirer of the Bible and Sufi poetry. Thus, Naren imbibed the idea that all religions are sacred and genuine, without even any thinking, and in his Chicago address he quoted the men eir water in the sea, so different paths, which men take through different tendencies, all lead to Thee. In his early years he also came in contact with the renowned. Brahmo Leader, Keshab Chandra Sen who had great respect for the divine personality of Christ. Christmas Eve is celebrated in all the Ramakrishna-Mission centers because it 'Was on Christmas Eve in 1886 that Naren and gurubhais took the vows of sannyasa.

2.1 Influence of Sh. Ramakrishna: Naren was a brilliant school student, well versed in English literature, Western Philosophy, World history, etc. and Ramakrishna was an illiterate, half-mad and God intoxicated, village priest of Mother Kali in the Dakshineshwar temple, near Calcutta. He had personally followed the religious disciplines of the many 'sects of Hinduism and also Christianity and Sufi-Islam and experienced, their highest realizations including the Vedantic vision of oneness of man, nature and God. Naren had come to him with a question: Have you seen God? Yes, was the answer and I can show him to you too! Sh. Ramakrishna immediately recognized in Naren the instrument

through which his liberal and universal ideas on spirituality would flood the world. He touched Naren who then had a direct vision experience of the oneness of Universe. Initially Naren denounced image-worship but when stricken with poverty, Ramakrishna asked him to pray to Mother for 'money', he reluctantly went., and says: Reaching the temple, as I saw the image, I actually found that she was living and conscious, perennial fountain of divine love, beauty and joy, and instead of 'money', prayed: Mother give me discrimination, renunciation, devotion., knowledge. The result of this contact between the eternal and the modern was Vivekananda - who was to become the heart and mind of India, scattering broadcast its ancient wisdom throughout the modern world to rouse people to the awareness of their divinity, the kingdom of God within, and how to manifest it in daily work-life.

2.2 **Vivekananda's Inspiration:** He heard Ramakrishna say: "Compassion for living beings! Fool! Who are you insignificant creature, to show compassion? No, no, not compassion, but service to all beings, looking upon them as God Himself. Vivekananda then told his -brother-' disciples: "I have found a new light today. This ecstatic -utterance of the Master has shown me that Vedanta need. not be a dry, other worldly affair. Vedanta of the forest can be brought to the homes of ordinary people and it can be applied in day-to-day work-life.

Let man do everything he is doing; there is no harm in that; it is sufficient for him, first, to be fully convinced that it is God who is manifested before him as the universe and all the beings in it. If he can thus look upon all the persons of the world as God, how can there be

 ISBN : 978-93-80216-07-2

an occasion for him to regard himself as superior to-, them or cherish anger and hatred for them or an arrogant attitude towards them, or even to be kind to them? Thus serving the Jivas as Shiva (God), he will have his heart purified and be convinced in a short time that. he himself is also a part of God, the Bliss Absolute, the eternally pure, wakeful and free Being. Service thus performed in the right spirit of karma yoga becomes worship of Shiva in the Jiva, and is one of the most, effective means of self- purification and God realization.

2.3 **The Problem before Swami Vivekananda:** How to attain material prosperity without harming spirituality Life? India had focused on spirituality and lost to the brute streargth and bloodshed of others, west had lost out on spirituality while advancing materially. How to create the Raja+rishis once again by uniting the best of the west and east? He spread a new vista of thought while sowing the seeds of spirituality in the hearts of people. He understood the modern need for the worldview of 'oneness' and 'subjective' focus, and how it could be applied to every problem of modern man, which the philosophy of Vedanta- could provide.

3. **Our Common North & Harmony of religions:** This is how Swami Vivekananda, expresses the universal and essential message of religions and our common 'North': Each soul is potentially divine. The goal is to manifest this Divinity within by controlling nature, external and internal.

Do this either by work, or worship, or psychic control, or philosophy - by one, or more, or all of these and be free. This is the whole of religion. Doctrines, or dogmas, or rituals, or books, or temples, or forms, are

but secondary details

Swami Vivekananda grappled with various ideas towards this ideal of harmony of religions. He saw that religions differed in.their rites and rituals, in their sacred scriptures, mythologies, creationstories, prophets, etc. even though their message was essentially same: 'Be good and do good', He said 'Arise, awake, stop not till the goal is reached'. He saw that the claim of supremacy of one religion, one scripture, over other paths would obviously lead to conflicts. Could Vedanta be the future religion which shows the oneness of man, nature and God? And he discarded this view also. He realized that the world needs variety in religion, different doctrines, rituals and mythologies to suit different tastes, temperaments, and needs of civilizations, and also that mere reasoning would not inspire. in fact he went so far as to say that religion should be hand tailored to suit the individual! He also felt that religions were not only harmonious but that they supplemented and complemented each other. For example, for Islam it was peace and universal brotherhood, for Christianity it was love and purification to prepare for the kingdom of God, and for Hinduism it was to renounce all for the realization of God.

4. **What Leaders say:** Swami Vivekananda harmonized East and West; Religion and Science; Past and Present. And that is why he is great. We have understood the greatness and glory of the Composite Culture of India and gained unprecedented self-respect, Self-confidence and self-assertion from his teachings: Subhash Bose Said. "I have gone through his works very thoro ughly, and after having gone through them, the love that I had for

 ISBN : 978-93-80216-07-2

my country became a thousand fold" Mahatma Gandhi Said "If you want to know India, study Vivekananda. In him everything is positive and nothing negative".

Vivekananda on education and self-development:-

- We want that education by which character is formed, strength of mind is increased, the intellect is expanded, and by which one can stand on one's own feet'.
- Education is the manifestation of the perfection already in man
- Education is the training by which the current and the expression of will are brought under control and becomes fruitful in life
- To me the very essence of education is concentration of mind, not the collecting of facts
- The present system of education is all wrong. The mind is crammed with facts before it knows how to think. Control of mind must be taught first
- I call him a traitor who, having been educated, nursed in luxury by the hearts blood of the downtrodden millions of toiling poor, never even takes a thought from them'.

Vivekananda says: 'I direct my attention to the individual, to make him strong, to teach him that he himself is divine, and I call upon men to make themselves conscious of this divinity within.

That is really the ideal - conscious or unconscious - of every religion'. 'All power is within you; you can do anything and everything. Believe in that, do not believe that you are weak. Stand up and express the divinity within you. All glory, power and purity are within us already ... poten-

tial or manifest, it is there - and the sooner you believe that, the better for you.'

'It is the level-headed man, the calm man, of good judgment and cool nerves, of great sympathy and love, who does good work and so does good to himself'. The world is bound by 'actions' other than those performed for the sake of 'Yagna'. Do you therefore perform action for 'Yagna' alone, free from likes and dislikes'. 'Whatever you do sincerely is good for you Even the least thing well done brings marvelous results. Every duty is holy, and devotion to duty is the highest form of worship'. 'Character is repeated habits, and repeated habits alone can reform character'.

My whole ambition in life is to set in motion. a machinery which will bring noble ideas to the door of everybody. First of all, our young men must be strong. Religion will come afterwards. India's gift to the world is the light of spirituality. Whenever such a state has been brought about (binding India with the other races), the result has been the flooding of the world with Indian spiritual ideas. The whole world is full of Lord, Open your eyes and see Him. That society is the greatest where the highest truths become practical. I consider that the great national sin is the neglect of the masses, and that is one of the causes of our downfall. No amount of politics would be of any avail until the masses in India are once more well educated, well fed, and well cared for. The difference between God and the devil is in nothing except in unselfishness and selfishness. It is a privilege to serve mankind, for this is the worship of God; God is here, in all these human souls. He is the soul of man'.

 ISBN : 978-93-80216-07-2

Relevance of Swami Vivekananda's Views on Entrepreneurship in Indian Economy

Mrs. BhavnaYadav
Asst. Prof., Economics
K.M.G.G.P.G. College Badalpur,
G.B. Nagar

An entrepreneur is a person who organizes and manages a business undertaking, assuming the risk for the sake of profit. An entrepreneur sees an opportunity, makes a plan and starts a business. They play the most important role the economic development of adeveloping country like India where large scale unemployment is rampant in and the jobs created by the public and private sector are insufficient to meet the needs of growing population.People with ideas and risk taking attitude are required not only for the development of the country but also to provide employment to unemployed population thus serving both society and nation.

Views of Swami Vivekananda and Their Relevance

"Take up one idea. Make that one idea your life think of it, dream of it, and live on that idea. Let the brain, muscles, nerves, every part of your body, be full of that idea, and just leave every other idea alone. This is the way to success."- Swami Vivekananda spoke these words. But they are definitely words of wisdom for today's startups and entrepreneurs. The power of focus. The discipline to leave every other idea alone.

Entrepreneurship is not about making money alone at the market place. Gone are the old methods of capitalists bringing money and exploit labor/ employees to make highest profits and such profits and such companies are

bankrupts today. With many professional management institutions coming up in India. Many youngsters are getting a wider exposure in Entrepreneurship Principles. Over the decades there is a sea change in the principles and practices of entrepreneurship. A great change is happening across the world and Swami Vivekananda's message of 'Karma Yoga' is finding its roads into all enterprise, in the form of 'Corporate Social Responsibility.'

Swamiji was aware that India could be built only by developing the entrepreneurial talents of people. Hence he encouraged self-employment activities at different levels. He was concerned that the art works of the village communities were neglected and wanted them to be taken up by those in towns. Swamiji underlined the need for the cottage and small scale units, as he was aware of the negative effects of the big industries. Along with this Swamiji emphasized the use of modern science and technology to solve India's problems. He wanted India to develop into a scientific and technological power. In this connection it is necessary to remember that it was the suggestion made by Swamiji to Jamshedji Tata that led to the establishment of the prestigious Indian Institute of Science. In context to India small scale industries are required as they are labor intensive and require less capital so in a country like India where there is dearth of capital and abundance of labor such technique most suited and for development he also advocated modern science and technology so that we may be modern also.Swamiji wanted Indians to learn Western science and adopt them in India. He said: "With the help of Western science, set yourselves to dig the earth and produce food-stuffs not by means of servitude of others but by discovering new avenues of production, by your own exertions aided by Western science."

 ISBN : 978-93-80216-07-2

Swamiji was particular that India should be built on her own methods. In this context, he quoted Japan to admonish Indians who imitate the West. To quote: "There, in Japan, you find a fine assimilation of knowledge, not its indigestion, as we have here. They have taken everything from the Europeans, but they remain Japanese all the same, and have not turned European; while in our country, the terrible mania of becoming westernized has seized upon us like a plague. "

Swamiji was perhaps the first personality who suggested an Indian model of economic development, even when the country was under the colonial rule. He used to meet the common Indian's directly whenever he went to different places. This made him confident that India has to develop an economic model for herself which will take the peculiarities of her social life into consideration

Swami Vivekananda who was not only a spiritual teacher but also a nation builder and a source of inspiration for youth of a nation,was of the view that India is a spiritually empowered country but in order to break the shackles of poverty industries and technology is required.The swami may be well called the maker of modern India.His message was of hope and strength and he believed that man's potentiality is infinite .He said 'I do not believe in reform", "I believe in growth". He dreamt of a new generation who would present the fusion of Indian philosophy and western technology.He motivated the youth to set up their own business. Swami Vivekananda gave following suggestions to entrepreneurs:-

- Those who enterprise will find success sooner or later.
- You should have dedication within you.

- You should not be afraid of those who comment on you.
- Let people say, whatever they want.
- Take all the responsibilities on your shoulders.

These views of Vivekananda are applicable in present scenario as all the above given suggestions serve as motivational and inspiring source for the entrepreneursto develop.He wanted spirituality, dedication and hard work in the youth of present India. He said that entrepreneurs should develop the capabilities and qualities .In 1896 in a lecture given inNewYork he laid emphasis on division of labor .He said that it is futile to say that aperson can get everything in life. These views are relevant in modern economy as division of labor serves basis for large scale production, specialization and international trade also. No nation is self-sufficient hence international trade, large scale production and division of labor is possible

Swami Vivekananda is believed to be a spiritual propagator but he was a person who in a way favored globalization in times when it was a distant dream his motivational and inspiring words not only served the basis for spiritual awakening but also for nation building . Today's world require motivated youth who have entrepreneurial capabilities through which they can take the country towards growth and prosperity.

REFERENCES:

1. Swami Vivekananda, op.cit., Vol. VII, p.145
2. Swami Gamvirananda quoted in Ghosh, Sarup Prasad, Swami Vivekananda's Economic Thought and in Modern International Perspective: India as a Case Study, The Ramakrishna Mission Institute of Culture, Kolkatta, 2010, p.53
3. Swami Vivkenanda, op.cit., Vol. VII, p.182

 ISBN : 978-93-80216-07-2

स्वामी विवेकानन्द के युवा आह्वान की वर्तमान प्रासंगिकता

डॉ॰ दीप्ति वाजपेयी
असि. प्रो. संस्कृत
कु.मा.रा.म.स्ना. महाविद्यालय
बादलपुर

भारतीय सांस्कृतिक चेतना के उन्नायक एवं भारतीय नवजागरण के अग्रदूत स्वामी विवेकानन्द ने प्रेरणादायी, ओजस्वी एवं ऊर्जा से परिपूर्ण जिन विचारों को तत्कालीन युवाओं के अन्दर आत्म सम्मान व आत्मविश्वास के भाव जगाने हेतु आह्वान रूप में व्यक्त किया था, वह वर्तमान समय में भी उतने ही प्रासंगिक प्रतीत होते है। यदि आज के किंकर्त्तव्यविमूढ़, भ्रान्त व दिग्भ्रमित युवा, स्वामी विवेकानन्द के विचारों को आत्मसात करें तो वह अपने अन्दर अक्षय ऊर्जा का संचार कर सकते है। यह ऊर्जा युवाओं को उनके जीवन के वास्तविक लक्ष्य का बोध कराने के साथ-साथ समाज को नई दीप्ति से आलोकित कर हर प्रकार के तमस् से मुक्ति दिला सकती है।

स्वामी विवेकानन्द आधुनिक भारत के महान विचारक, चिन्तक, देशभक्त, दार्शनिक, युवा सन्यासी, प्रेरणा के स्रोत और आदर्श व्यक्तित्व के धनी, युग परिवर्तक थे। स्वामी विवेकानन्द को यदि भारतीय नवजागरण का अग्रदूत कहा जाए तो अतिश्योक्ति नहीं होगी। विवेकानन्द दो शब्दों से मिलकर बना है विवेक+आनन्द। 'विवेक' संस्कृत का मूल शब्द है। विवेक का अर्थ है उचित व अनुचित में भेद कर सकने वाली बुद्धि और आनन्द का शाब्दिक अर्थ है-प्रसन्नता। तीक्ष्ण बुद्धि और आत्मिक आनन्द से परिपूर्ण स्वामी विवेकानन्द भारतीय संस्कृति एवं हिन्दू धर्म के प्रचारक, प्रसारक एवं उन्नायक के रूप में जाने जाते है। सुभाष चन्द्र बोस ने उन्हें आधुनिक भारत के निर्माता के रूप में स्वीकार किया है। नोबल पुरस्कार

से सम्मानित गुरुदेव रविन्द्रनाथ टैगोर ने कहा था–''यदि आप भारत को जानना चाहते है तो स्वामी विवेकानन्द को पढ़िए। उनमें आप सब कुछ सकारात्मक पाएँगे, नकारात्मक कुछ भी नहीं।''

भारतीय सांस्कृतिक चेतना में नई जान डालने वाले स्वामी विवेकानन्द ने युवाओं में स्वाभिमान को जगाया और उनके अन्दर उम्मीद की नई किरण पैदा की। विश्व भर में भारतीय आध्यात्म का परचम लहराने वाले स्वामी विवेकानन्द ने भारत की गौरवशाली परम्परा और संस्कृति के प्रति न केवल भारतीयों के मन में आत्मसम्मान व आत्मविश्वास का संचार किया वरन् नव भारत के निर्माण की रूप रेखा तैयार करने के साथ ही नवजागरण की शुरुआत भी की।

युवाओं के प्रेरणास्रोत, समाज सुधारक स्वामी विवेकानन्द ने युवाओं का आह्वान करते हुए कठोपनिषद् का एक मंत्र उन्हें जीवन दर्शन के रूप में दिया था–

''उतिष्ठ, जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत्''

अर्थात् उठो, जागो और तब तक मत रूको जब तक अपने लक्ष्य तक न पहुँच जाओ। तत्कालीन किकर्त्तव्यविमृढ, मोह व अज्ञान से सुप्तवत् तत्कालीन अकर्मण्य युवाओं हेतु किया गया यह आह्वान आज भी अति प्रांसगिक है। आज का युवा दिग्भ्रमित है। अर्जुन के समान मोह से व्याकुल है। कर्त्तव्य पथ पर अग्रसर होने का साहस इसलिए नहीं जुटा पाता क्योंकि वह भयाक्रान्त है। यह भय, उसे पग–पग पर हर निर्णय पर पहुँचते समय अनुभूत होता है। सही लक्ष्य निर्धारित न कर पाने का भय, लक्ष्य निर्धारित होने पर सही मार्ग न चुन पाने का भय, मार्ग मिल जाने पर भी असफलता का भय। यह समस्त भय, उसे उस अपराजित शक्ति को विस्मृत करा देते है जिसे हम ''युवा शक्ति' कहते है। जो अपने अन्दर अदम्य साहस संजोये हुए है, जो किसी भी प्रकार के सृजन की क्षमता रखती है। विवेकानन्द इसी युवा शक्ति को जाग्रत करने का

 ISBN : 978-93-80216-07-2

आह्वान करते है। वह कहते है–''उठो मेरे शेरो, इस भ्रम को मिटा दो कि तुम निर्बल हो, तुम एक अमर आत्मा हो, स्वच्छन्द जीव हो, धन्य हो, सनातन हो, तुम तत्त्व नहीं हो, ना ही शरीर हो, तत्त्व तुम्हारा सेवक है, तुम तत्त्व के सेवक नहीं हो''।

इस प्रकार हनुमान जी के द्वारा समुद्र लाँघने में विस्मृत अपनी शक्ति के समान आज के युवाओं को भी अपनी शक्ति पहचानने की आवश्यकता है। शक्ति का बोध होना ही समस्त भ्रम का निवारण एवं समस्याओं का समाधान है। इसी प्रसंग में वह कहते है कि ब्रह्मांण की सारी शक्तियाँ पहले से ही हमारी है। वो हम है जो अपने आँखों पर हाथ रख लेते है और फिर रोते है कि कितना अन्धकार है। वस्तुतः हमें अपने नेत्र खोलने की आवश्यकता है। समस्त ब्रह्मांण की ऊर्जा हमें दिव्य ज्योति से आप्लावित करने हेतु हमारी प्रतीक्षा कर रही है। विवेकानन्द जी के अनुसार सबसे बड़ा विधर्म यह न मान पाना है कि आत्मा के लिए कुछ भी असंभव नहीं है। स्वयं व अन्य को निर्बल मानना ही पाप है तथा अपनी असीमित क्षमताओं को पहचानना और उसे सृजन में लगाना ही पुण्य है। इसीलिए ''तत्वमसि'' के वेदान्तीय वाक्य को आधार मान कर विवेकानन्द जी एक ही आदर्श को स्वीकार करते है कि तुम परमात्मा हो। हमारे अन्तस् में जब इस सत्य का साक्षात्कार हो जाता है तो हमारे लिए कुछ भी अप्राप्य या असंभव नहीं रह जाता। अतः स्वामी विवेकानन्द युवाओं को आत्म विश्वास का मूल मंत्र बताते हुए कहते है–"जब तक हम खुद पर विश्वास नहीं करते, तब तक हम परमात्मा पर भी विश्वास नहीं कर सकते।''

वस्तुतः परमात्मा में अगाध श्रद्धा और विश्वास उत्पन्न करने के लिए हमें स्वयं पर विश्वास करना होगा। हम उस परमात्मा का अंश है, यह दिव्यानुभूति हमें सृजन करने की, शिवत्व को स्थापित करने की शक्ति प्रदान करती है। हमारी विचार शक्ति हमारे व्यक्तित्व का निर्माण करने वाली है। हम वह है जो हमारी सोच ने हमें बनाया है अतः हम

क्या सोचते है यह महत्वपूर्ण है, हम क्या बोलते है यह गौण हो जाता है। विचार ही अनन्त यात्रा के स्वामी होते है। अगर हम स्वयं में दिव्यत्व के विचारों को पुष्ट कर लेते है तो हमारे विचार हमें सृजन, पालन और अशिवत्व के विध्वंश हेतु असीमित शक्तियों का प्रस्फुटन तत्क्षण करा देते है। जिस प्रकार विभिन्न स्रोतो से उत्पन्न धाराएँ अपना जल अन्ततः समुद्र में ही मिला देती है उसी प्रकार मार्ग चाहे कोई भी हो अन्ततः ''अहंब्रह्मास्मि'' की अनुभूति ही एकमात्र गन्तव्य है। इसीलिए स्वामी विवेकानन्द मानते है कि अगर आपकों तैतीस करोड़ देवी-देवताओं पर भरोसा है लेकिन खुद पर यकीन नहीं है तो आपको मुक्ति नहीं मिल सकती। खुद पर यकीन रखे, अडिग रहे और मजबूत बने। हमें इसकी ही आवश्यकता है। अपनी अन्तस्थ आत्मा को छोड़कर किसी के सामने सर न झुकायें। जब तक हम यह अनुभव नहीं करते कि हम स्वयं देव है, हम मुक्त नहीं हो सकते। मुक्ति के लिए स्वानुभूति आवश्यक है।

स्वामी विवेकानन्द जी युवा आह्वान में जिन शक्तियों के बोध के अतिरिक्त जिस एक बिन्दु पर अत्यधिक बल देते है वह है चरित्र निर्माण और कर्मण्यकता। वह कहते है–''पवित्रता, दृढ़ता और उद्यम यह तीनों गुण मैं एक साथ चाहता हूँ। साहसी होकर कार्य करते रहो। धीरज और स्थिरता के साथ कार्य करना यही एकमात्र सफलता का मार्ग है। आगे बढ़ो और हमेशा याद रखो-धीरज, साहस, पवित्रता और अनवरत कर्म।''

सीमित प्रयास से असीमित फलेच्छा रखने वाले वर्तमान युवा वर्ग के लिए विवेकानन्द जी के उपर्युक्त विचार अवश्य ही मार्गदर्शन करने वाले है। आज का अधिकांश युवा वर्ग अपनी महत्वाकांक्षाओं के बोझ से दबा हुआ है वह सफलता प्राप्ति के लिए अनवरनत परिश्रम का मार्ग नहीं अपनाना चाहता। वह शीघ्रातिशीघ्र उथले प्रयायों से येन-केन-प्रकारेण लक्ष्य की प्राप्ति चाहता है फिर चाहे वह प्रयास नैतिक हो या अनैतिक। स्वामी विवेकानन्द युवाओं को किसी अगन्तव्य मार्ग अथवा तथाकथित

 ISBN : 978-93-80216-07-2

'शार्टकट' न लेने का संदेश देते है। वह कहते है–''शक्तिमान उठो तथा सामर्थ्यशाली बनो। कर्म निरन्तर कर्म, संघर्ष निरन्तर संघर्ष। पवित्र व निःस्वार्थ बनने की कोशिश करो। सारा धर्म इसी में निहित है।'' इस प्रकार स्वामी विवेकानन्द नैतिक प्रकृति व सद् आचरण को धर्म का निहितार्थ बताते है। वस्तुतः हमारी नैतिक प्रकृति जितनी उन्नत होती है उतना ही उच्च हमारा प्रत्यक्ष अनुभव होता है तथा उतनी ही हमारी इच्छा शक्ति अधिक बलवती होती है। बलवती इच्छा शक्ति आत्म विश्वास का संचार करती है और जगत् की समस्त विध्वंसात्मक शक्तियों का दमन कर शिवत्व को स्थापित करती हैं धर्म का रहस्य आचरण से जाना जाता है, व्यर्थ के प्रतिवादों से नहीं। सच्चा बनना व सच्चा बर्ताव करना इसमें ही समग्र धर्म निहित है।

स्वामी विवेकानन्द जी के उपर्युक्त विचार आज के सन्दर्भों में अति प्रांसगिक है। आज हम धर्म के नाम पर साम्प्रदायिकता को बढ़ावा दे रहे है। धर्म के मूलार्थ का विस्मरण कर धर्म के नाम पर हिंसा, द्वेष, घृणा, असमानता जैसे असामाजिक एवं अनैतिक आचारण के नाग–पाश में बँधे हुए है। इसीलिए स्वामी विवेकानन्द युवाओं को ऐसी शिक्षा देने के पक्ष में है जो चरित्र निर्माण में सहायक हो। उनके अनुसार–''हम ऐसी शिक्षा चाहते है जिससे चरित्र निर्माण हो, मानसिक शक्तियों का विकास हो, ज्ञान का विस्तार हो और जिससे हम खुद के पैरों पर खड़े होने में सक्षम बन जाये।"

वस्तुतः स्वामी जी लौकिक व पारलौकिक दोनों प्रकार की शिक्षा के पक्ष में है। शिक्षा वह है जो व्यक्ति का सर्वांगीर्ण विकास करें। सांसारिक उन्नति व मुक्ति एक ही श्रृंखला की कड़ियाँ है अतः सांसारिक अभ्युदय भी आवश्यक है। मुक्ति तो अन्तिम गन्तव्य है ही। राष्ट्र, समाज व विश्व का अभ्दुदय भी अपरिहार्य है किन्तु यह अभ्युदय सकारात्मक एवं नैतिकता के पथ का अनुगामी होना चाहिए। इसके लिए आवश्यक है–उत्तम चरित्र, अनवरत सकारात्मक कर्म व दृढ़ इच्छाशक्ति यह त्रिशब्द स्वामी विवेकानन्द के युवा आह्वान का सार है जो आज

के सन्दर्भों में भी अत्यधिक प्रांसगिक है।

वस्तुतः स्वामी विवेकानन्द जी के नाम का स्मरण करते ही एक ऐसी ऊर्जा का संचरण होता है जो अक्षय है। उनके शब्द आज भी अनादिक और आनंदित वाणी के रूप में गुंजायमान होते है, जिनमें सत्य का साक्षात्कार करने की अनन्त ऊर्जा समाहित है। विवेकानन्द जी द्वारा किया गया विचार दर्शन युग-युगीन एवं शाश्वत है। समाज को स्वाभिमान, साहस और कर्म की प्रेरणा देनेवाले स्वामी विवेकानन्द के मंत्र से तत्कालीन मूर्छित समाज में एक नई ऊर्जा का संचार हुआ। वर्तमान सन्दर्भों में भी स्वामी विवेकानन्द का जीवन हमें यह बोध कराता है कि कैसे बिना साधन व सुविधा के सिर्फ एक संकल्प से युवा, समाज व देश की सोच बदल सकते है।

संदर्भ :

1. स्वामी विवेकानन्द, व्यक्तित्व का विकास, रामकृष्ण मठ, नागपुर।
2. स्वामी विवेकानन्द, जाति, संस्कृति और समाजवाद, रामकृष्ण, मठ नागपुर।
3. स्वामी विवेकानन्द, धर्म रहस्य, रामकृष्ण मठ, नागपुर।
4. स्वामी विवेकानन्द, ज्ञान योग पर प्रवचन, रामकृष्ण मठ, नागपुर।
5. लक्ष्मी निवास झुंझुनवाला, विश्व धर्म-सम्मेलन, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली
6. स्वामी निखिलेश्वरानन्द, शिक्षक क्रान्ति का अग्रदूत, रामकृष्ण मिशन, इन्स्टीट्यूट ऑफ कल्चर कोलकाता।

 ISBN : 978-93-80216-07-2

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में स्वामी विवेकानन्द के शैक्षिक विचारों की प्रासंगिकता

श्रीमति रंजीता रानी
असि. प्रो. बी. एड.
एस॰ एस॰ वी॰ कॉलिज
हापुड़

डॉ॰ हरिन्द्र कुमार
असि. प्रो. समाजशास्त्रा
कु॰ मा॰ रा॰ म॰ स्ना॰ महाविद्यालय
बादलपुर

भारत के पराधीन काल में जो भारत के दुर्भाग्य से सात शताब्दियों तक रहा, हमारे देश की शिक्षा-नीति विदेशी शासकों की दृष्टि से निर्धारित होती थी। अंग्रेजी राज्य की जड़ो को मजबूत बनाने के लिये लार्ड मैकाले ने जिस दुर्नीतिपूर्ण शिक्षा-प्रणाली को प्रारम्भ किया उसके घातक परिणाम हम आज स्वतन्त्रता-प्राप्ति के लगभग अड्सठ वर्ष बाद तक भी भुगत रहे है। मैकाले द्वारा प्रतिपादित शिक्षा-प्रणाली जो, क्लर्को की एक विशाल संख्या हमारे देश में तैयार करने वाली रही, वह आज भी विद्यमान है। यद्यपि स्वतंत्रता-प्राप्ति के पश्चात् शिक्षा पद्धति में कुछ सुधार हुए है, फिर भी शिक्षा का जो मूल लक्ष्य भारतीयों को उनकी संस्कृति, सभ्यता तथा उनके भूतकालिक द्वारा एवं इतिहास से परिचित कराने वाला होना चाहिये था उसकी प्राप्ति नहीं हो पाई क्योंकि इस शिक्षा में राष्ट्रीय भावना को तथा मानवता के भाव को उत्पन्न करने वाली प्रेरणा का अभाव था।

भारत में शैक्षिक क्षेत्र में विद्यमान दोषों से शिक्षा को मुक्त करने तथा उसे देश की नवीन आवश्यकताओं के अनुरूप ढालने की आवश्यकता पर स्वामी विवेकानन्द ने बल दिया है। ये शिक्षा का भारतीयकरण करना चाहते थे।

स्वामी विवेकानन्द के शिक्षा-दर्शन की पृष्ठभूमियाँ

स्वामी विवेकानन्द के समग्र जीवन पर दृष्टिपात करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि उनमें सत्य के साक्षात्कार करने की उत्कण्ठा अत्यन्त

तीव्र थी। स्वामी विवेकानन्द द्वारा रचित साहित्य भी भारत की एक अमूल्य निधि के रूप में है। स्वामी विवेकानन्द ने वेदान्त का एक नवीन स्वरूप प्रस्तुत करते हुए उसकी नवीन व्याख्या की। इसी आधार पर इसको 'नव्य वेदान्त' कहा गया। स्वामी विवेकानन्द द्वारा रचित साहित्य से यह स्पष्ट हो जाता है कि उनके जीवन का प्रत्येक क्षण उनके प्राणों का हर स्पन्दन एवं उनके हृदय की प्रत्येक धड़कन समाजोत्थान के लिये समर्पित थी। उन्होने प्रारम्भ से ही समाज को एक नई दिशा दी। इसलिए वे अपने युग के महान दार्शनिक एवं शिक्षाविद् विचारक थे। इनके विचारों का भारतीय जनमानस पर गहन प्रभाव पड़ा। जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य घोषित करके शिक्षा-शास्त्रा में ज्ञान एवं शिक्षा के अटूट सम्बन्ध की स्थापना की थी। उनके जीवन में साहित्य सृजन की अदभूत क्षमता के दर्शन होते है।

स्वामी विवेकानन्द का समग्र जीवन उच्च धर्मज्ञः, समाज सुधारक, महान् दार्शनिक, महान शिक्षा-शास्त्री तथा उच्चकोटि के साहित्यकार के रूप में भारतीय इतिहास में आलोकमान है। स्वामी विवेकानन्द के दार्शनिक, आध्यात्मिक, धार्मिक एवं शैक्षिक विचारों का प्रादुर्भाव सहसा नहीं हुआ है बल्कि ठोस एवं सबल पृष्ठभूमि में ही उनके प्रांजल तथा उदात्त चिन्तन का विकास हुआ।

स्वामी विवेकानन्द की दार्शनिक विचारधारा

स्वामी विवेकानन्द ने दर्शन की विभिन्न समस्याओं एवं प्रवृत्तियों का गहन अध्ययन करके भारतीय दर्शन-शास्त्रा में अपना महान योगदान दिया है। दर्शन का मुख्य लक्ष्य आत्म-साक्षात्कार करना है। अध्यात्म विद्या में जो मुख्य क्षेत्र सम्मिलित हैं वह है जीव विकास विज्ञान या तत्वमीमांसा अथवा तात्विकी अर्थात् जो स्वयं ही अपनी शक्ति और अधिकार से स्थित है। अध्यात्म विद्या मे दूसरा क्षेत्र ज्ञान मीमांसा सम्मिलित है। मनुष्य का मस्तिष्क निश्चित रूप से क्या-क्या जान

 ISBN : 978-93-80216-07-2

सकता है? इस पर अध्यात्म विद्या विचार करती है। स्वामी विवेकानन्द ने सितम्बर, 1893 ई0 में शिकागों में आयोजित विश्व धर्म सम्मेलन में कहा कि वेद मतानुसार आत्मा ब्रह्म स्वरूप होते हुए केवल पंचभूतों के बन्धनों में बंध गई है और इन बन्धनों के टूटने पर वह अपने पूर्व के पूर्णत्व को प्राप्त हो जायेगी। इस अवस्था का नाम मुक्ति है।

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार तत्व मीमांसा

स्वामी विवेकानन्द के तत्व मीमांसा सम्बन्धी विचार अद्वैत पर आधारित है। स्वामी विवेकानन्द ने उपनिषदों की व्याख्या करते हुए कहा है कि वह जो आपकी आत्मा का सार है वही आत्मा है। इसका अर्थ है कि तुम स्वयं ईश्वर हो। जिस मनुष्य में हम व्यक्ति देख रहे हैं वह व्यष्टित है परन्तु उसकी वास्तविकता निर्गुण है। इस सगुण को निर्गुण के माध्यम से अर्थात् विशेष को सामान्य के द्वारा जानना होगा। वह सगुण सत्ता ही सत्य है। तथा वही मनुष्य की आत्मा है।

आचार्य शंकर ने ब्रह्म को दो रूपों में माना है, एक निर्गुण ब्रह्म तथा दूसरा सगुण ब्रह्म (ईश्वर)। स्वामी विवेकानन्द के अनुसार ईश्वर उतना ही सत्य है जितना विश्व की अन्य कोई वस्तु जिसे विश्व का जन्म, स्थिति तथा प्रलय होती है वही ईश्वर है। सृष्टि अनादि है, इसलिए भी अनादि है।

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार ईश्वर व्यष्टियों की समष्टि है और साथ ही वह एक व्यष्टि भी है। ब्रह्म हम सभी की आत्मा में अपने को अभिव्यक्त करता है। आत्मा सत्य, चित्त वथा आनन्दस्वरूप का होते हुए शुद्ध स्वभाव एवं पूर्ण है। ससांर में समस्त अभिव्यक्तियाँ आत्मा के ही विभिन्न रूप मात्र है। प्रति की आत्मा के सम्मुख गतिशील है और इस गति की छाया आत्मा पर पड़ती रहने के कारण आत्मा भ्रगवश सोचती है प्रति नहीं वरन् वह स्वयं गतिशील है। जब तक वह ऐसा सोचती रहती हे तब तक वह बन्धन में रहती है लेकिन जब वह अपने इस भ्रम

को दूर कर देती है, तभी वह बन्धन मुक्त अर्थात् मुक्ति की स्थिति में आ जाती है।

स्वामी विवेकानन्द ने कारण और कार्य को इस तर्क पर अभिन्न माना है कि कार्य केवल कारण का रूपान्तर मात्र है। शून्य से किसी भी वस्तु की उत्पत्ति नहीं हो सकती। सभी वस्तुएं अनन्त काल से है और अनन्त काल तक रहेंगी।

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार ज्ञान मीमांसा

स्वामी विवेकानन्द ने मनुष्य के द्वारा अपने वास्तविक स्वरूप को समझने पर अत्यधिक बल दिया है, क्योकि माया को जान लेने से हम माया से परे जा सकते है तथा अपने स्वरूप हो पहचान लेते है। अधिकतर लोग अपनी आत्मा को नहीं पहचानते और ज्ञान की तलाश में बाहर घूमते फिरते है। स्वामी विवेकानन्द के अनुसार व्यक्तिगत अनुभूति द्वारा प्राप्त ज्ञान को तर्कना द्वारा प्राप्त ज्ञान से श्रेष्ठ बताया है।

स्वामी विवेकानन्द ने ज्ञान दो प्रकार के बताये है- प्रथम, भौतिक या लौकिक ज्ञान तथा द्वितीय आत्म प्रज्ञान। आत्म प्रज्ञान ज्ञान का सम्बन्ध अध्यात्मवाद से है।

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार मूल्य मीमांसा

कुछ दर्शन शास्त्रियों के मतानुसार इस जगत् में दु:ख ही एकमात्र वास्तविक सत्ता है। यह दृष्टिकोण नैराश्यवादी है। लेकिन अन्त में आनन्द की ही विजय होती है। यह दृष्टिकोण आशावादी है स्वामी विवेकानन्द आचार मीमांसा के अन्तर्गत आत्मानुभूति, ईश्वर-प्राप्ति अथवा मोक्ष सबको एक ही अर्थ में लेते थे। आत्म साक्षात्कार की प्राप्ति ज्ञानयोग, कर्मयोग, भक्तियोग अथवा राजयोग, किसी के द्वारा भी की जा सकती है। मूल्य मीमांसा में मूल्य तथा अमूल्य शुभ तथा अशुभ इन सबका परीक्षण होता है। वेदान्त दार्शनिकों के अनुसार ब्रह्म मूल्य-शून्य

 ISBN : 978-93-80216-07-2

है क्योंकि ब्रह्म पर शुभ–अशुभ का कोई प्रभाव नहीं है। शुभ और अशुभ माया में है, ब्रह्म में नहीं।

स्वामी विवेकानन्द की मानव स्वरूप विषयक अवधारणा

मोक्ष शब्द का अर्थ है छुटकारा पाना। ज्ञान से मोक्ष की प्राप्ति होती है। स्वामी विवेकानन्द आचार्य शंकर के समान ही मोक्ष को न तो संस्कार्य ही मानते है और न ही प्राप्य। स्वामी विवेकानन्द के मतानुसार ब्रह्मांण की समस्त चेतन तथा अवचेतन प्रति का लक्ष्य मुक्ति है और जाने या अनजाने में समस्त जगत् इसी लक्ष्य की ओर अग्रसर होने का यत्न कर रहा है। स्वामी विवेकानन्द ने अपने स्वरचित ग्रन्थों में भक्ति, कर्म व ज्ञान आदि साधन पद्धतियों का उल्लेख किया है तथा उपर्युक्त सभी मार्गो के अवलम्बन करने का लक्ष्य मुक्ति होना है।

शिक्षा का स्वरूप

स्वामी विवेकानन्द, शिक्षा को जीवन प्रयत्न चलने वाली प्रक्रिया मानते है स्वामी विवेकानन्द शिक्षा को व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक एवं आत्मिक विकास की प्रक्रिया मानते है तथा शिक्षा को ऐसा साधन मानते है जो व्यक्ति तथा समाज को प्रगति देती है एवं विकास को गति प्रदान करती है।

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार शिक्षा की उपयोगिता व्यक्ति एवं समाज दोनो के ही सन्दर्भ में है। अतः शिक्षा प्राप्त कर लेने पर व्यक्ति का जीवन उत्तरोत्तर उत्कृष्ट हो जाता है। जिससे श्रेष्ठ समाज के निर्माण को बल मिलता है। उनके अनुसार शिक्षा शाश्वत जीवन की प्राप्ति का माध्यम है। शिक्षा के द्वारा ही नैतिक विकास सम्भव है तथा शिक्षा ही आत्म विकास करने का एक सफल साधन है शिक्षा के द्वारा ही समाज में सामाजिक व आर्थिक परिवर्तन लाये जा सकते है। इससे स्पष्ट होता है कि शिक्षा का स्वरूप आध्यात्मिक एवं धार्मिक है। इनके अनुसार पूर्णनिहित पूर्णता की अभिव्यक्ति कि शिक्षा है।

शिक्षा के उद्देश्य

प्रत्येक बालक कुछ मूल शक्तियाँ एवं प्रवृत्तियां लेकर जन्म लेता है। जो मानव स्वभाव मे संस्कार रूप में निहित होती है। इन्ही निहित शक्तियों एवं प्रवृत्तियों का, जिन्हें संस्कार भी कहा जा सकता है, स्वाभाविक विकास शिक्षा के द्वारा ही होता है। शिक्षा का लक्ष्य प्रत्येक व्यक्ति को उसकी योग्यता मे वृद्धि करके उसे आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करता है।

स्वामी विवेकानन्द ने जो भारत में पुनर्जागरण के लिये अतिलोकप्रिय तथा प्रमुख कर्णधार माने जाते है, शिक्षा को महत्वपूर्ण स्थान दिया है। शिक्षा का उददेश्य मानव में अन्तर्निहित पूर्णता की अभिव्यक्ति करना हैं वेदान्त के मतानुसार ज्ञान मानव में अन्तर्निहित गुण है। कोई बाहर से थोपी हुई वस्तु नहीं है। सभी ज्ञान तथा सभी शक्तियां मनुष्य के मन में ही निहित है तथा उनको अनावरित करना ही शिक्षा है। स्वामी विवेकानन्द कहते है कि शिक्षा के उददेश्य विभिन्नता में एकता की खोज करना, विश्वबन्धुत्व, विश्व चेतना का विकास करना, आत्मविश्वास उत्पन्न करना आदि है। ज्ञान का स्रोत स्वयं बालक में होता है किन्तु शिक्षक उसको जागृत करता है। प्रेरणा बालक में होती है किन्तु शिक्षक के संकेत से यह प्रेरणा जाग्रत होती है।

शिक्षा पद्धतियाँ

स्वामी विवेकानन्द ने वेदान्त दर्शन की पुनर्व्याख्या आधुनिक परिप्रेक्ष्य में करके भारतीय जनता को एक नवीन मार्ग दिखाया। वेदान्त के मतानुसार ज्ञान आत्मा में अन्तर्निहित गुण है। बाहर के थोपे जाने वाली कोई वस्तु नहीं। स्वामी विवेकानन्द ने भौतिक ज्ञान के लिये प्रत्यक्ष, अनुकरण, व्याख्यान, निर्देशन, विचार-विमर्श तथा प्रयोगविधियों का समर्थन किया है तथा आध्यात्मिक ज्ञान के लिये अध्ययन, मनन, ध्यान एवं योग की विधियों पर बल दिया है। इस प्रकार स्वामी विवेकानन्द

 ISBN : 978-93-80216-07-2

ने उपनिषदों के आधार पर कुछ शिक्षण–विधियों का ज्ञान दिया है जैसे सूत्र विधि, शब्दार्थ विधि, उपमा विधि, शास्त्रार्थ विधि, स्वागत भाषण विधि एवं यथाकाल व्यवहार प्रणाली आदि।

इस प्रकार शिक्षा–दर्शन में स्वामी विवेकानन्द के दृष्टिकोण को समन्वयवादी कहना उचित होगा जिन्होने परम्परावादी व आधुनिक शिक्षण विधियां के मध्य समन्वय स्थापित किया है।

शिक्षक–शिक्षार्थी सम्बन्ध

शिक्षक तथा शिक्षार्थी, ये दानों शिक्षा के महत्वपूर्ण अंग है। शिक्षा इन दोनों के मध्य सम्पन्न होने वाली अन्तः क्रिया है। पाश्चात्य दर्शन के अन्तर्गत पाश्चात्य आदर्शवादी शिक्षा–दर्शन में शिक्षक को उच्च स्थान दिया गया है। आदर्शवादी शिक्षा के अनुसार बच्चों को क्रमशः पशुत्व से मनुष्यत्व की ओर तथा मनुष्यत्व से देवत्व की ओर ले जाने में शिक्षक की बहुत भूमिका होती है। प्रगतिवादी विचारधारा में शिक्षक का कार्य केवल ऐसे वातावरण का निर्माण करना है जिसमें बालक स्वयं अपने अनुभव के द्वारा ज्ञान प्राप्त कर सकें।

स्वामी विवेकानन्द नव वेदान्ती होने के कारण शिक्षा के क्षेत्र में अपने महत्वपूर्ण विचार रखते हैं। शिक्षा की प्रक्रिया में शिक्षक का महत्व बालक के आत्मविकास के मार्ग की बाधाओ को दूर करने में है, ऐसा स्वामी जी का मत है। वे गुरूकुल प्रथा के समर्थ है। क्योंकि शिक्षा के व्यक्तिगत जीवन के बिना कोई शिक्षा हो ही नहीं सकती। स्वामी विवेकानन्द के अनुसार ज्ञान बालक के ऊपर बाहर से नहीं थोपा जाता, बल्कि बालक में ही निहित ज्ञान का अनावरण करना चाहिये। ब्रह्मचर्य से इन्द्रियों का नियन्त्रण सम्भव होता है। इन्होंने शिक्षण–प्रक्रिया को बाल केन्द्रित बनाया तथा शिक्षार्थी मे कुछ योग्यताओं की अपेक्षा रखी। स्वामी विवेकानन्द का दृढ़ विश्वास था कि चरित्रवान गुरू के आदर्श जीवन का अनुकरण करके ही बालक का अन्तःसुप्त देवत्व जागृत हो सकता है।

अनुशासन

जहां तक अनुशासन का पक्ष है स्वामी विवेकानन्द अनुशासन के महत्व को भी प्रतिपादित करते है। वे गुरू व शिष्य का अनुशासन मे रहने की अपेक्षा रखते है। शारीरिक अनुशासन के साथ-साथ मानसिक अनुशासन रखना भी आवश्यक है। स्वामी विवेकानन्द के मतानुसार स्वानुशासन का सर्वोत्तम रूप है। स्वामी विवेकानन्द भारतीय आदर्शवादी होने के कारण आत्मानुशासन पर बल देते थे तथा व्यक्तिगत और सामाजिक, इन दोनों प्रकार के अनुशासनों के प्रशंसक थे। स्वामी विवेकानन्द में प्रभावात्मक अनुशासन पर बल दिया है।

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप में यही कहा जा सकता है कि स्वामी विवेकानन्द ने अपने शैक्षिक विचार अपने विभिन्न भाषणों और रचनाओं में अभिव्यक्त किये है। भारत ने दीर्घकालीन परतन्त्रता की श्रृंखलाओं को तोड़कर स्वतन्त्र वातावरण में जब अपनी श्वांसे ली तब यह आवश्यक था कि उस सामाजिक परिवर्तन के दौर में शिक्षा-व्यवस्था मे भी अपेक्षित परिवर्तन लाये जाये, पाश्चात्य तथा भारतीय दृष्टिकोणों में समन्वय स्थापित किया जाये अर्थात् भौतिक मूल्यों तथा आध्यात्मिक मूल्यों के मध्य सन्तुलन स्थापित किया जायें। इस समन्वय तथा सन्तुलन के आधार पर शिक्षा के उददेश्यों को स्पष्ट किया जाये, प्रजातान्त्रिक व्यवस्था के अनुकूल ही शिक्षा-प्रणाली के स्वरूप को ढाला जाये तथा राष्ट्रवाद को अन्तर्राष्ट्रवाद का सहयोग बनाया जाये ।इन समस्त विचारों की पृष्ठभूमि में स्वामी विवेकानन्द के शिक्षा-दर्शन का विकास हुआ। उनकी दृष्टि में समाज के नवनिर्माण का कार्य आध्यात्मिक मूल्यों के द्वारा ही सम्भव है। आध्यात्मिक मूल्यों का लक्ष्य है,स्व की प्राप्ति अर्थात् आत्मसाक्षात्कार। यही आत्म साक्षात्कार मुक्ति है जो मानव-जीवन का लक्ष्य है। इस लक्ष्य की प्राप्ति में शिक्षा का मुख्य योगदान है, जिसके

 ISBN : 978-93-80216-07-2

अभाव में हमारी सम्पूर्ण व्यावसायिक, वैज्ञानिक तथा औद्योगिक उपलब्धियाँ अर्थहीन रहेगी। नवजागरण के लिये शिक्षा एक महत्वपूर्ण साधन है।

आधुनिक शैक्षिक सन्दर्भ में स्वामी विवेकानन्द के शैक्षिक विचारों की महान उपयोगिता है। इसमें ऐसे शैक्षिक सिद्धान्तों, मान्यताओं तथा अवधारणाओं का समायोजन मिलता है। जिसके आधार पर इसे आधुनिक भारत की शैक्षिक आवश्यकताओं के सन्दर्भ में एक सजीव शिक्षा-दर्शन कहा जा सकता है तथा इसकी उपयोगिता भविष्य में भी अक्षुण्ण रहेगी।

संदर्भ :

1. शर्मा रामनाथः, समकालीन भारतीय शिक्षा विनीत पब्लिकेशन मेरठ।
2. विवेकानन्द साहित्य, अष्टम खण्ड, अद्वैत आश्रम, कलकत्ता।
3. तिवारी भरत कुमार, विवेकानन्द का दार्शनिक चिन्तन, भारतीय भाषा पीठ, नई दिल्ली।
4. उपाध्याय आचार्य पण्डित बलदेव, भारतीय शारदा मन्दिर, दुर्गा कुण्ड, वाराणसी।
5. लाल रमन बिहारीः शिक्षा के दार्शनिक और समाजशास्त्रीय विद्धान्त, रस्तौगी पब्लिकेशन, मेरठ।
6. विवेकानन्द स्वामी- वेदान्त, रामकृष्ण मठ, नागपुर।

युग प्रणेता-स्वामी विवेकानन्द

डॉ॰ अर्चना सिंह
एसो. प्रो., हिन्दी
कु.मा.रा.म.स्ना. महाविद्यालय
बादलपुर

डॉ॰ रिचा
असि. प्रो., भौतिक विज्ञान
कु.मा.रा.म.स्ना. महाविद्यालय
बादलपुर

''हमें तीन चीजों की जरूरत है। वे हैं, अनुभव करने के लिए हृदय, विचार करने के लिए मस्तिष्क और काम करने के लिए हाथ। खुद को शक्ति का स्रोत बनाओ।''

-'स्वामी विवेकानन्द'

प्रागैतिहासिक काल से लेकर मानव के क्रमिक विकास में बौद्धिक क्षमता अर्जित करते हुए मानव आज नित नई खोजों, जिज्ञासाओं, परिकल्पनाओं, प्रतिद्वन्दताओं एवं चुनौतियों के आगोश से व्यवस्था परिवर्तन से साक्षात्कार करता हुआ अपने प्रभुत्व को स्थापित करने को संघर्षशील है। सामाजिक अस्तित्व कायम करना भी एक बड़ी चुनौती है। समाज में व्याप्त निरक्षरता, पाखण्ड, अन्धविश्वास, आडम्बर, दासता, अत्याचार, सती-प्रथा, बाल-विवाह, विधवा-विवाह निषेध इत्यादि सामाजिक कुरीतियों से मुक्ति दिलाने के लिए इस भूमि पर अनेक महापुरूष अवतरित हुए। जहाँ संत कबीर ने अत्यन्त सरलता व निर्भयता से जीवन दर्शन को समाज के आगे प्रस्तुत किया, महात्मा गाँधी ने सत्य और अहिंसा के रूप में दो अमोघ अस्त्रों का महत्व अपने जीवन के माध्यम से चरितार्थ किया वहीं स्वामी विवेकानन्द जी ने अंधविश्वास व रूढ़िवादिता से ग्रसित समाज को धर्म की व्यावहारिक और वैज्ञानिक व्याख्या दी तथा सुसंस्कृत, शांतिपूर्ण व समृद्ध समाज के सृजन का मार्गप्रशस्त किया। स्वामी जी उस समय हमारे सामने आये जब समाज रूढ़िवादिता एवं अंधविश्वास से पीड़ित था। इस स्थिति का गहरा प्रभाव स्वामी जी की विचारधारा पर पड़ा और उन्होंने इन समस्याओं के

 ISBN : 978-93-80216-07-2

समाधान का सूत्रपात किया। उन्नीसवीं शताब्दी में विदेशी शासन की दासता से दु:खी और शोषित हो रही भारतीय जनता को स्वामी जी ने अंग्रेजों के विरूद्ध संघर्ष के लिए प्रोत्साहित किया। अपनी ओजस्वी वाणी से उन्होंने जन-मानस के मन में स्वतंत्रता का शंखनाद किया। भारत माता की गुलामी और तिरस्कार को देखकर स्वामी जी का मन व्याकुल हो जाता था। उनके मन में राष्ट्रप्रेम कूट-कूट कर भरा था। मद्रास के अनेक युवा शिष्यों को उन्होंने लिखा था कि ''भारत माता हजारों युवकों की बलि चाहती है, याद रखो, मनुष्य चाहिए पशु नहीं''

देश को सम्पन्न बनाने के लिए धन से ज्यादा हिम्मत, ईमानदारी और प्रोत्साहन की आवश्यकता होती है। स्वामी जी के अमृत वचन आज भी देशवासियों को प्रोत्साहित करते हैं। उनमें चिंतन व सेवा का संगम था। विवेकानन्द जी ने भारतीय चिंतन से विदेशों में भारत का सम्मान बढ़ाया। भारत माता के प्रति उनके मन में अपार श्रद्धा थी। जब वे सन् 1896 में विदेश से भारत लौटे तब जैसे ही जहाज किनारे लगा उन्होंने दौड़कर भारत-भूमि को साष्टांग प्रणाम किया और रेत में ऐसे लोटने लगे जैसे कोई बच्चा माँ की गोद में पहुँचा हो।

आज हमारा-देश स्वतंत्र होने के बावजूद अनगिनत समस्याओं से जूझ रहा है। बेकारी, प्रदूषण, अन्न-जल तथा महँगाई की समस्याओं से देश की जनता त्रसित है। ऐसी विपरीत परिस्थितिओं में भी स्वामी विवेकानन्द जी का विश्वास था कि हमारा देश उठेगा, संपूर्ण ऊपर उठेगा और इसी जनता के बीच से ऊपर उठकर विश्व में चेतना का संचार करेगा। स्वामी जी ने भजन में भी अपनी इस आस्था को व्यक्त करते हुये युवाओं को आह्वान किया है-

जागो फिर एक बार यह तो केवल निन्द्रा थी, मृत्यु नहीं थी
नव जीवन पाने के लिए कमल नयनों के विरा के लिए।
एक बार फिर जागो, अतुल विश्व तुम्हें निहार रहा है हे सत्य

तुम अमर हो। (अगस्त 1898 में 'प्रबुद्ध भारत' पत्रिका के (मद्रास में, स्वामी जी द्वारा स्थापित भ्रात मण्डल के हाथों में अल्मोड़ा स्थानांतरित होने के अवसर पर लिखित)।

स्वामी जी प्रबल राष्ट्र भक्त थे। वे देश की स्वाधीनता के कट्टर समर्थक थे। उनके जीवन का प्रमुख उद्देश्य था 'भारत का विकास'। स्वामी जी कहते थे कि 'जननी जन्मभूमि' भारत माता ही हमारी मातृभूमि है। हमें भारतीय होने पर गर्व होना चाहिए। उन्होंने अनुभव किया कि भारत का पुनर्जागरण हो सकता है यदि यहाँ की आध्यात्मिक शक्ति का सदुपयोग हो सके। उन्होंने भारतीय आध्यात्म को विश्व भर में फैलाने की आवश्यकता भी प्रतीत की और इस पृष्ठभूमि में विश्व भ्रमण का निर्णय किया। स्वामी जी के संदेश युवाओं के लिए प्रेरणा स्रोत है, उन्होंने युवाओं को सन्देश दिया – 'हे भाग्यशाली युवा अपने महान कर्तव्य को पहचानो। इस अद्भुत सौभाग्य को महसूस करो। इस रोमांच को स्वीकार करो। ईश्वर तुम्हें कृपादृष्टि के साथ देखता है और तुम्हारी सहायता और मार्गदर्शन के लिए सदैव तत्पर है। मैं तुम्हारे महान बनने की कामना करता हूँ। विश्व ने अपना विश्वास तुम्हारे ऊपर जताया है। तुम्हारे बड़े तुम से उम्मीद रखते हैं। तो युवा का अर्थ है स्वंय में विश्वास रखना अपने आशावादी, निश्चय एवं संकल्प का अभ्यास करना और स्वसंस्कृति के इस सुन्दर कार्य में अच्छे इरादों की इच्छा रखना .....'सफल जीवन' के सन्दर्भ में सफल होने की बात करते हो तो इसका मतलब मात्र उन कार्यों में सफल होना नहीं जिसे तुमने पूरा करने का बीड़ा उठाया था या उठाया है। इसका अर्थ सभी आवश्यकताओं या इच्छाओं की पूर्ति कर लेना भर नहीं है। इसका तात्पर्य केवल नाम कमाना या पद प्राप्त करना या आधुनिक दिखने के लिए फैशनेबल तरीकों की नकल करना या 'अप–टू–डेट' होना नहीं है।

स्वामी विवेकानन्द जी ने दासता की बेड़ियों जकड़े भारत देशवासियों के अंतर्मन में जीवन प्राण फूँका उन्होनें कहा–''हे अमृत के अधिकारीगण।

 ISBN : 978-93-80216-07-2

तुम ईश्वर की संतान हो, अमर आनंद के भागीदार हो, पवित्र और पूर्ण आत्मा हो, तुम ज्ञान मर्त्य भूमि पर देवता हो। उठो। आओ। ए सिंहों। इस मिथ्या भ्रम को झटककर दूर फेंक दो कि तुम भेड़ हो। तुम जरा मरण रजित नित्यानंदमय आत्मा हो'' स्वामी विवेकानन्द ने युवाकाल में ही भारत के गौरव को पूरे विश्व में गौरवान्वित किया। स्वामी विवेकानन्द जी ने हीनता में ग्रस्त भारत देश को यह अनुभव कराया कि इस देश के संस्कृति अब भी अपनी श्रेष्ठता में अद्वितीय है। दासता में जकड़े भारतवासियों का आह्वान स्वामी जी अपने भजन में करते हैं –

वह देखो, वे घने बादल छंट रहे हैं,
जिन्होंने रात को, धरती को, अशुभ छाया से ढ़क लिया था,
किन्तु तुम्हारा चमत्कारी पूर्ण स्पर्श पाते ही
विश्व जाग रहा है।
ओ देवता निर्बाध बढ़ो अपने पथ पर
तब तक
जब तक कि यह पूर्ण आकाश के मध्य में न आ जाय।
जब तक तुम्हारा आलोक विश्व में प्रत्येक देश में प्रतिफलित न हो।।

(सन् 1898 में के रचित कविता जो स्थिरा माता के पास सुरक्षित रही।)

विवेकानन्द बड़े स्वप्न द्रष्टा थे। उन्होंने ऐसे समाज की परिकल्पना की जहाँ धर्म या जाति के आधार पर मनुष्य-मनुष्य के भेद न रहे। उन्होंने वेदान्त के सिद्धान्तों को इस रूप में रखा, आध्यात्मवाद बनाम भौतिकवाद के विवाद में पड़े बिना भी यह कहा जा सकता है कि समता का जो सिद्धान्त विवेकानन्द ने दिया उस से सबल बौद्धिक आधार शायद ही ढूँढ़ा सके। शिकागो वार्ता में स्वामी जी ने कहा –

''साम्प्रदायिकता, हठधर्मिता और उनकी वीभत्स वंशधर धर्मांधता इस सुन्दर पृथ्वी पर बहुत समय तक राज्य कर चुकी है। वे पृथ्वी को हिंसा से भरती रहती है व उसके बारम्बार मानवता के रक्त से बहलाती

रहती है, सभ्यताओं को ध्वस्त करती हुई पूरे देशों को निराशा की गर्त में डालती रहती है। यदि ये वीभत्स दानवी शक्तियाँ न होती तो मानव समाज आज की अवस्था से कही अधिक उन्नत हो गया होता।''

विवेकानन्द पुरोहितवाद, धार्मिक आडम्बरों, कठमुल्लापन और रूढ़ियों के सख्त खिलाफ थे। उन्होंने धर्म को मनुष्य की सेवा में रखकर आध्यात्मिक चिन्तन किया था। उन्होंने अपने देशवासियों को सर्वव्यापी विराट की पूजा करने का आह्वान किया। विवेकानन्द के अनुसार निःस्वार्थ भाव से जीवरूपी शिव की सेवा करना ही सर्वोत्तम धर्म साधना है तथा मुक्ति का मार्ग है –

''सर्वतः प्राणीवाद तत् सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम्।
सर्वतः श्रुतिमल्लो के तिष्ठतः।। (गीता)

''तुम लोग निरर्थक देवताओं की खोज में भटक रहे हो क्यों अपने सम्मुख तथा चारो ओर जिस देवता को देख रहे हो, उस विराट की उपासना क्यों नहीं करते।''

उनका हिन्दु धर्म अत्यन्त, लिजलिजा और वायवीय नहीं था। उन्होंने यह विद्रोही ब्यान दिया था कि इस देश के तैंतीस करोड़ भूखे, दरिद्र और कुपोषण के शिकार लोगों को देवी देवताओं की तरह मन्दिर में स्थापित कर दिया जाय और मन्दिरों से देवी देवताओं की मूर्तियों को हटा दिया जाय। उनकी दृष्टि में हिन्दू धर्म के सर्वश्रेष्ठ चिन्तकों के विचारों का निचोड़ पूरी दुनिया के लिए ईर्ष्या का विषय है। उन्होंने ऐसे धर्म को मानने से मना कर दिया जो हमें निर्धन अँधविश्वासी अथवा आलसी बनाए। उनका मानना था कि निर्धनता समाज का सबसे बड़ा शाप है और निर्धन का पहला धर्म अपनी भौतिक आवश्यकताएँ पूरी करना है। भारत भ्रमण के दौरान उन्होंने देशवासियों की निर्धनता को निकट से देखा था किन्तु उनकी आंतरिक समृद्धता को समझा था। भारत भ्रमण के दौरान उन्होंने विभिन्न धर्मों को समझा और उन्होंने पाया सभी धर्मों में शाश्वत एकता है –

 ISBN : 978-93-80216-07-2

''ईसाई को हिन्दू या बौद्ध नहीं बनना होगा और न हिन्दू अथवा बौद्ध को ईसाई ही। पर हाँ प्रत्येक धर्म को अपनी स्वतंत्रता और वैशिष्ट्य को बनाए रखकर एक दूसरे धर्मों का भाव ग्रहण करते हुए उन्नत होना होगा। उन्नति और विकास का यही एकमात्र नियम है।''

स्वामी विवेकानन्द जाति प्रथा के घोर-विरोधी थे। वे चाहते थे कि दलित वर्ग अपनी शक्ति पहचाने तथा अपने व्यक्तित्व का विकास करें। अल्मोड़ा में 1897 ई. मई में सुप्रसिद्ध देशभक्त नेता 'श्रीयुत अश्विनी कुमार दत्त से वार्तालाप के मध्य जातिवाद को लेकर स्वामीजी ने कहा-''अछूत मोची, मेहतर तथा इसी तरह के सभी लोगों के पास जाकर कहिए तुम्ही लोग तो राष्ट्र के प्राण हो। तुम्हारे भीतर ऐसी असीम शक्ति विद्यमान है जो दुनिया उलट सकती है। उठो, बन्धन को तोड़ के फेंको और सारा संसार तुम्हें देखकर विस्मित हो जाएगा। श्रीयुत नगेन्द्रनाथ की स्मृति कथा में भी एक रोचक घटना का पता चलता है। गृहस्वामी श्री जय श्री राम ने विवेकानन्द जी के आतिथ्य में धूम्रपान हेतु एक सुन्दर नया हुक्का दिया, परन्तु हुक्के को मुँह लगाने से पूर्व ही स्वामी जी ने उन्हें सावधान करते हुए कहा ''यदि जाति भेद के विषय में आपकी दृढ़ आस्था हो तो अपना हुक्का मुझे मत दीजिएगा, क्योंकि कल यदि कोई अछूत भी धूम्रपान के लिए मुझे अपना हुक्का दे तो आनंदपूर्वक पिऊँगा। कारण यह है कि मैं जाति पाँति की सीमा से परे जा चुका हूँ।''

स्वामी जी के समाज को दिए गए महत्वपूर्ण संदेशों से यह बात समझ में आती है कि दृढ़ता पूर्वक लिए हमारे सब सद्भावपूर्ण संकल्प अवश्य पूरे होते हैं। इसके लिए हमें मात्र अपना सर्वोत्तम प्रयास करना होता है और इस कार्य में प्रकृति भी हमारी सहायता करती है। स्वामी जी के जीवन में अनिश्चितताएँ सामान्य से अधिक थी किन्तु उनके संकल्प दृढ़ थे और उद्देश्य व्यापक हित में था। वे अपने व्यक्तित्व की स्पष्ट प्रत्यानुभूति द्वारा मन के ऊपर अधिकार जमा लेते थे। उनके

ज्वलन्त नेत्र, मुख-मुद्राएँ और अंगविन्यास का लालित्य मानव चित्त को संचेतन करने में समर्थ था। स्वामी विवेकानन्द जी मात्र 39 वर्ष जिए किन्तु इस अवधि में उन्होंने शताब्दियों का कार्य किया। उनके विचार, उनके कार्य आज भी विश्व के लिए प्रेरणास्रोत हैं।

सन्दर्भ :

1. युग नायक विवेकानंद, स्वामी गम्भीरानन्द
2. सार्वलौकिक नीति तथा सदाचार, स्वामी विवेकानन्द
3. विवेकानन्द साहित्य, स्वामी तत्वविदानन्द
4. विद्यार्थी जीवन में सफलता, ए.आर.के. शर्मा
5. विवेकानन्द का अमर संदेश, विवेक मोहन
6. परम लक्ष्य की प्राप्ति हेतु कतिपय, स्वामी गोकुलानन्द दिशा-निर्देश

 ISBN : 978-93-80216-07-2

लोकनायक स्वामी विवेकानन्द का नारी विषयक दृष्टिकोण

डॉ॰ मिन्तु
असि. प्रो. हिन्दी
कु.मा.रा.म.स्ना. महाविद्यालय, बादलपुर

हमारे देश में नारी पूजनीय है। स्त्री को सम्मान देते हुए महाकवि प्रसाद ने भी कहा है–

नारी तुम केवल श्रद्धा हो।
विश्वास रजत नग पग तल में।
पीयूष स्रोत सी बहा करो,
जीवन के सुन्दर समतल में।''[1]

भारतीय समाज में पुरुष घर के बाहर के कार्यों का प्रबन्धक रहा है और स्त्रियाँ गृह लक्ष्मी के रूप में गृहस्थी की अधिकारिणी रही हैं। स्त्री पुरुष की अर्धांगिनी और सहधर्मिणी मानी जाती है।

''आरम्भ से ही पुरुष ने अपने अधिकारों के चलते स्त्री–पुरुष के सम्बन्धों को लेकर कुछ सामाजिक धारणाएं बनाई। सारे नियम और सिद्धान्त पुरुष ने अपने हक में रख लिए। स्त्री को राज्य और पुरुष की पूँजी समझा गया।''[2] प्राचीन काल में भारत के ऋषि–मुनियों ने नारी शिक्षा के महत्व को भली–भाँति समझा था। वैदिक काल में नारी शिक्षा का सर्वांगीर्ण विकास हुआ। गार्गी और मैत्रेयी जैसी विदुषियों ने इस देश की भूमि को अलंकृत किया तदुपरान्त समय परिवर्तित हुआ। हमारे समाज में अनेक कुप्रथाएं फैलनी शुरू हुई और नारी का महत्व घटना शुरू हुआ। मुस्लिम काल में पर्दा–प्रथा आरम्भ हुई।

नारी की शिक्षा प्राप्त से वंचित कर दिया गया। उसे केवल घूंघट की ओट में घर की चारदीवारी में बंद कर दिया गया। तभी से नारी विवशता की बेड़ियों में जकड़ी स्वाधीनता की बाट जोह रही थी। वही नारी जिसने शिक्षा प्राप्त कर महान विद्वानों से अपने पति की पराजय से

क्षुब्ध होकर शास्त्रार्थ किया था, घर की सीमित परिधि में बंद हो गयी। वह सामाजिक, ताड़नाओं को मूक पशु के समान सहन करने लगी। उसके हृदय से विकास की भावना लुप्त हो गयी। पति की मनस्तृप्ति करने, उसकी उचित अनुचित प्रत्येक इच्छा के सामने सिर झुकाने के लिए ही मानो विधाता ने उसकी सृष्टि की है।

पतित नारी का और पतन हुआ किन्तु पतन के बाद उत्थान प्रकृति का नियम है। बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में भारत के राष्ट्रीय आन्दोलन के साथ ही सामाजिक आन्दोलन भी आरम्भ हुआ। राजा राममोहन राय, स्वामी दयानन्द सरस्वती एवं स्वामी विवेकानन्द जैसी विभूतियों ने समाज की कुप्रथाओं को समाप्त करने का बीड़ा उठाया।

भारत एवं विदेशों में अपनी साधुता, स्वदेश भक्ति, सम्पूर्ण मानव जाति के आध्यात्मिक उत्थान एवं प्राच्य तथा पाश्चात्य के मध्य भ्रातृभाव के सार्वभौमिक संदेश के लिए सुपरिचित स्वामी विवेकानन्द को किसी भूमि की आवश्यकता नहीं है। प्राचीन परम्पराओं और अन्तर्निहित प्रतिभाओं के अनुरूप अपनी मातृभूमि को पुनः सशक्त करना उनका ध्येय था। स्वामी विवेकानन्द स्त्री को देवी रूप में देखते थे। उनके समय में नारी की स्थिति बहुत दयनीय थी। **भारत में जनसाधारण समस्त स्त्रीत्व को मातृत्व में ही केन्द्रीभूत मानते हैं। पूर्व की स्त्रियों को पश्चिमी मानदंड से जाँचना उचित नहीं हैं। पश्चिम में स्त्री पत्नी है, पूर्व में वह माँ है।''**[3]

भारत में स्त्री जीवन के आदर्श का आरम्भ मातृत्व में ही होता है। 'प्रत्येक हिन्दू के मन में स्त्री शब्द के उच्चारण से मातृत्व का स्मरण हो आता है। हमारे यहाँ बाल्यावस्था में प्रत्येक बालक प्रतिदिन प्रातःकाल एक कटोरी में जल भरकर अपनी माता के पास ले जाता है। माता उसमें अपने पैर का अंगूठा डुबा देती है और पुत्र उस जल का पान करता है।

स्वामी विवेकानंद का मानना था कि किस शास्त्र में ऐसी बात हैकि

 ISBN : 978-93-80216-07-2

स्त्रियां ज्ञान–भक्ति की अधिकारिणी नहीं होगी। भारत का अध:पतन उसी समय से हुआ जब ब्राह्मण पण्डितों ने ब्राह्मणेतर जातियों को वेदपाठ का अनाधिकारी घोषित किया था और साथ ही स्त्रियों के सभी अधिकार छीन लिये।

एक विशेष सभा में स्वामी विवेकानन्द ने पूर्व की स्त्रियों के वर्तमान और भविष्य पर विचार किया। उन्होंने कहा कि किसी भी राष्ट्र की प्रगति का सर्वोत्तम थर्मामीटर है वहाँ की महिलाओं के साथ होने वाला व्यवहार। प्राचीन यूनान में पुरुष और स्त्री की स्थिति में कोई भी अन्तर नहीं था। समानता का विचार प्रचलित था। कोई हिन्दू बिना विवाह किए पुरोहित नहीं हो सकता। आशय यह है कि अविवाहित, एकाकी मनुष्य केवल आधा और अपूर्ण होता है। आदर्श स्त्रीत्व का अर्थ पूर्ण स्वाधीनता है। सतीत्व आधुनिक हिन्दू नारी के जीवन की केन्द्रीय भावना है। पत्नी एक वृत्त का केन्द्र है जिसका स्थायित्व उसके सतीत्व पर निर्भर है। इस आदर्श की अति के कारण हिन्दू विधवाएँ जलायी गयीं। हिन्दू स्त्रियाँ बहुत ही आध्यात्मिक और धार्मिक होती हैं।

स्त्रियों की पूजा करके सभी जातियां बड़ी बनी है। जिस देश में, जिस जाति में स्त्रियों की पूजा नहीं वह देश, वह जाति ने कभी बड़ी बन सकी और ना ही बनेगी। भारत में स्त्रीय मातृत्व का ही बोधक है। मातृत्व में महानता, स्वार्थशून्यता, कष्ट सहिष्णुता और क्षमाशीलता का भाव निहित है।

स्वामी विवेकानन्द का मानना था कि ''भारत में माँ परिवार का केन्द्र और हमारा उच्चतम आदर्श है। वह हमारे लिए ईश्वर की प्रतिनिधि है क्योंकि ईश्वर ब्रह्मांड की मां है। एक नारी ऋषि ने ही सबसे पहले ईश्वर की एकता को प्राप्त किया और इस सिद्धान्त को वेदों की प्रथम ऋचाओं में कहा।''[4]

स्त्री और पुरुषों में असमानता पर स्वामी विवेकानन्द ने कटाक्ष

किए। उनकी दृष्टि में दोनों एक दूसरे के पूरक है। एक के बिना दूसरे का अस्तित्व सम्भव ही नहीं है। स्वामी जी पूछते हैं कि–''इस देश में पुरुष और स्त्रियों में इतना अन्तर क्यों समझा जाता है। यह समझना कठिन है। वेदान्त शास्त्र में तो कहा है कि एक ही चित्त सत्ता सर्वभूत में विद्यमान है। तुम लोग स्त्रियों की निन्दा ही करते हो। उसकी उन्नति के लिए तुमने क्या किया। बोलो तो? स्मृति आदि लिखकर, नियम नीति में आबद्ध करके इस देश के पुरुषों ने स्त्रियों को एकदम बच्चा पैदा करने की मशीन बना डाला है। महामाया की साक्षात मूर्ति इन स्त्रियों को उत्थान न होने से क्या तुम लोगों की उन्नति सम्भव है।''[5]

भारत में स्त्री जीवन के आदर्श का आरम्भ और अन्त मातृत्व में ही होता है। प्रत्येक हिन्दू के मन में स्त्री शब्द के उच्चारण से ही मातृत्व का स्मरण और हमारे यहां परमात्मा को भी जगन्माता, जगजननी आदि नामों से पुकारा जाता है। पाश्चात्य देशों में गृह की स्वामिनी और शासिका पत्नी है। भारतीय गृहों में घर की स्वामिनी और शासिका माता है। स्वामी विवेकानन्द ने भारतीय और पाश्चात्य नारी के गुण व दोषों पर बेबाक टिप्पणी की। वे कहते हैं कि यदि आप पूछें कि पत्नी के रूप में भारतीय स्त्री का क्या स्थान है तो इसके प्रत्युत्तर में भारतीय आपसे पूछ सकता है कि माता के रूप में अमेरिकन स्त्री का क्या स्थान है। उनका मानना था कि क्या स्त्री संज्ञा किसी भौतिक शरीर मात्र को दी गयी है। व्यक्ति का मन उन आदर्शों के प्रति सशंकित रहता है जिनमें यह कहा जाता है कि मांस को मांस से ही संलग्न रहना चाहिए। नहीं, देवि तुम्हारा मांसलता से कोई सम्बन्ध नहीं है। तुम केवल शरीर ही नहीं उससे परे भी कुछ हो। तुम्हारा नाम तो सदा पवित्रता का प्रतीक रहा है। विश्व में जननी नाम से अधिक पवित्र और निर्मल दूसरा कौन सा नाम है। जिसके पास कभी वासना और पाशविक तृष्णाएँ फटक भी नहीं सकती। यही मातृत्व भारतीय नारीत्व का आदर्श है।

समाज में व्याप्त बाल विवाह जैसी कुरीति पर स्वामी विवेकानन्द

 ISBN : 978-93-80216-07-2

जी ने तीक्ष्ण कटाक्ष किए। वे बाल विवाह के सन्दर्भ में कहते थे कि बाल विवाह होने से असामयिक सन्तानोत्पत्ति होती है और अल्पायु में ही सन्तान धारण करने के कारण हमारी स्त्रियाँ अल्पायु होती हैं। उनकी दुर्बल और रोगी स्तान देश में भिखारियों की संख्या बढ़ाने का कारण बनती है क्योंकि यदि माता पिता स्वस्थ नहीं होंगे तो उनकी संतान कैसे स्वस्थ हो सकती है। उनका मानना था कि यदि कन्याओं का विवाह कुछ अधिक आयु में हो और उनका लालन-पालन सुसंस्कृत वातावरण में हो तो वे ऐसी सन्तानों को जन्म देंगी जिससे देश का यथार्थ कल्याण हो सकेगा। इसके लिए वे समाज के प्रत्येक घटक को चाहे वह स्त्री हो या पुरुष शिक्षित और सुसंस्कृत बनाना चाहिए। जनता के शिक्षित हो जाने पर वह स्वयं अपनी लाभ हानि का विचार कर इस प्रकार की कुरीतियों को समाज से बाहर निकाल फेकेंगी।

नर-नारायण के एकनिष्ठ सेवक स्वामी विवेकानन्द जी के निर्मल चित्त में अतीत, वर्तमान तथा भावी समाज का जो चित्र प्रतिफलित हुआ था उसका एक ऐसा सनातन रूप है जो काल के विपर्यय में ग्लान नहीं होता। नारी समाज के सम्बन्ध में उनकी उक्तियाँ आज भी इसलिए समभाव से उज्ज्वल तथा समाज जीवन के लिए उपयुक्त हैं कि वे 'आमूल संस्कारक' थे सदा समाज की परिवर्तनशीलता की क्षणित तृप्ति के लिए उन्होंने संस्कार के कृत्रिम प्रसवण की रचना कर प्रशंसा अर्जित नहीं की। वे समाज की जीवनी शक्ति को प्रबुद्ध करना चाहते थे। जिससे उसके हृदय के आनन्द की शतधारा स्वतः ही उच्छ्वासित हो सके।

सन्दर्भ :

1. आधुनिक हिन्दी निबन्ध : भुवनेश्वरी सक्सेना पृ. 227
2. नागार्जुन का उपन्यास साहित्य : समसामयिक सन्दर्भ : डॉ॰ सुरेश कुमार यादव पृ. 151
3. विवेकानन्द साहित्य : खण्ड 1 पृ. 131
4. विवेकानन्द साहित्य : खण्ड 10 पृ. 302
5. विवेकानन्द साहित्य : खण्ड 6 पृ. 181

स्वामी विवेकानन्द के विचारों का महत्व एवं प्रासंगिकता

श्रीमती सीमा चौधरी
असि. प्रो. राजनीति विज्ञान
वी.एम.एल.जी. कॉलेज, गाजियाबाद

स्वामी विवेकानन्द एक महान देशभक्त, चिन्तक, आध्यात्मिक नेता, मानवता प्रेमी एवं जीवात्माओं को जागृत करने वाले महान संन्यासी थे। उनका आदर्श उच्चकोटि का है। इस आदर्श ने विश्व को एक नया आलोक प्रदान किया है। उनकी 150वीं जयंती पर देश के अन्दर और बाहर यह प्रश्न विचारणीय बन गया है कि भारत को अपने विकास और समृद्धि के लिए मात्र नए उपभोगवादी लक्ष्यों को सामने रखना चाहिए या प्रेम, सहअस्तिव और आध्यात्मिक ऊर्जा के इस आदर्श को सामने रखना चाहिए, जो हमारी विरासत रही है। वर्तमान युग युवा-जुनून और उसकी ई-तकनीक और प्रबंधकीय मेघा का है। भारतीय युवाओं की उपलब्धियाँ वैश्विक स्तर पर सराही एवं स्वीकारी जा रही है। तथापि इसके देश के समय, समाज और परिवेश को बदलने में उनका कोई बड़ा क्रान्तिकारी अवदान सामने नहीं आ रहा है। इसके विपरीत चिन्ता यह जताई जा रही है कि देशकाल और अपने मूल्यबोध को लेकर नई पीढ़ी गम्भीर नहीं है। ऐसी परिस्थितियों में स्वामी विवेकानन्द का चिन्तन, आदर्श उनके विचार एवं उनके द्वारा किया गया विशेषकर युवाओं का आह्वान अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं प्रासंगिक है। प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य वर्तमान समय में स्वामी विवेकानन्द के विचारों का महत्व एवं उनकी प्रासंगिकता का विश्लेषण करना है।

स्वामी विवेकानन्द अध्यात्म, दर्शन व चिन्तन के क्षेत्र में एक अविस्मरणीयन नाम है। उन्होंने 19वीं सदी के अन्तिम एवं बीसवीं सदी के प्रारम्भिक वर्षों के दौरान बंगाल एवं भारत के अन्य भागों में सांस्कृतिक पुनरुत्थान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उनके व्याख्या एवं लेख महात्मा गांधी, जवाहर लाल नेहरू एवं सुभाषचन्द्र बोस जैसे

 ISBN : 978-93-80216-07-2

स्वतंत्रता के पूर्व के बहुत से राजनीतिक नेताओं के लिए प्रेरणा का स्रोत बने। वह उन पहले आध्यात्मिक सन्तों में से थे जिन्होंने जन सामान्य के समर्थन में आवाज उठाई। उन्होंने देश में गरीबों की दुर्दशा के बारे में राष्ट्रीय जागरूकता उत्पन्न की। उन्होंने इस उद्घोष से सैकड़ों युवाओं को समाज सेवा को जीवन पद्धति के रूप में अपनाने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने माना कि भारत के पिछड़ेपन का वास्तविक कारण इसकी उस जनता की उपेक्षा और शोषण है, जो देश की सम्पदा पैदा करती है। उनक मानना था कि उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार लाने के लिए उन्हें उक्त खेती, ग्रामीण उद्योगों एवं स्वच्छतापूर्ण जीवन जीने के लिए तरीको को सिखाया जाना आवश्यक है। सदियों से शोषण व सामाजिक निरंकुशता सहने के कारण ये लोग अपनी गरिमा, आशा और पहल की अपनी भावना को खो चुके है। उन्हें शक्ति के ऐसे संदेशों की आवश्यकता है जो उनमें आत्मविश्वास का संचार कर दे। उनका कहना था इन सब प्रश्नों का उत्तर हमारी प्राचीन आध्यात्मिक संस्कृति की देन अर्थात् वेदान्त में विद्यमान है।

स्वामी विवेकानन्द ने माना कि दरिद्रता एवं अशिक्षा भारत की दो प्रमुख समस्याएँ हैं। दरिद्रता का प्रमुख कारण भी हमारी अशिक्षा ही है। इसलिए वे जहाँ कहीं भी गए उन्होंने शिक्षा का प्रचार एवं प्रसार किया। शिक्षा के विषय में उनका कहना था कि शिक्षा धर्म का ही एक अंग है। जिस प्रकार धर्म न बेचा जा सकता है और न ही खरीदा जा सकता है, वैसे ही शिक्षा का भी व्यापार नहीं हो सकता। उन्होंने माना कि शिक्षा की सर्वश्रेष्ठ पद्धति भारत की प्राचीन गुरूकुल प्रणाली है। उनका कहना था कि हमें अपने प्राचीन ज्ञान का त्याग नहीं करना है। किन्तु नये ज्ञान को उसके साथ जोड़ना भी अनिवार्य है। स्वामी जी की आराध्या देवी उनकी मातृभूमि है उनकी शिक्षा का आधार प्रेम एवं शक्ति है। निर्भीकता उसका प्रमाण है व आत्मविश्वास उसका कर्म है। उनके अनुसार शिक्षा का प्रधान उद्देश्य है–मनुष्य के चरित्र का विकास हो। मानव आचरण में

सुधार हो एवं यह सुधार मानवहित में हो। वर्तमान में हमें विवेकानन्द द्वारा बताई गई ऐसी ही आदर्श एवं मूल्यप्रेरित शिक्षा की आवश्यकता है। इस बात पर सभी विचारक एकमत हैं।

आज जब हम अपने समाज में प्रतिदिन महिलाओं के विरूद्ध हिंसक घटनाओं को देखते एवं सुनते हैं तो स्वामी विवेकानन्द का यह कथन सार्थक एवं प्रासंगिक हो जाता है जब वे समस्त स्त्री-पुरूषों व विशेष रूप से युवाओं से सात्विक चरित्र की मांग करते हैं। आज जब दुश्चरित्रता समाज पर राज कर रही है, ऐसे में सात्विक चरित्र का महत्व उतना ही बढ़ जाता है। वे महिलाओं के सम्मान एवं अभ्युत्थान के पक्षधर थे। उन्होंने महिलाओं को सम्मान देने की अद्भुत मिसाल प्रस्तुत की। वर्तमान की घृणित, हिंसक घटनाएं सभ्य समाज को हतप्रभ करती हैं तथा प्रमाणित करती हैं कि समाज के प्रति स्वामी विवेकानन्द की जो चिन्ताएं थीं वे अब भी प्रासंगिक बनी हुई हैं। वे इस निष्कर्ष पर पहुँच थे कि समाज की दुर्दशा के कारणों में से एक प्रमुख कारण महिलाओं की अशिक्षा एवं उनकी अवेहलना है। उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा कि महिलाओं को ऐसी शिक्षा देनी होगी जिससे उनके मन की ताकत बढ़े। वे स्वयं अपने पैरों पर खड़ी हो सकें। ऐसी शिक्षा मिलने पर महिलाएं अपनी समस्याओं का समाधान कर सकती हैं। उन्हें आत्मरक्षा की शिक्षा देने की आवश्यकता है। वे स्त्री-शिक्षा के लिए भगिनी निवेदिता को शिक्षा-मिशनरी बना कर भारत लाए।

स्वामी विवेकानन्द 'शिकागो में विश्व धर्म संसद' में भाग लेने के लिए सितम्बर, 1893 में अमेरिका गए। वे कहाँ भारत के ऐसे सुपुत्र के रूप में गए जो अंग्रेजों की गुलामी में जो रही उसकी पद्दलित जनता के लिए बहुत चिंतित था। उन्होंने 19वीं सदी के अंतिम दशक में अमेरिका की जनता को बहुत गहराई तक प्रभावित किया। आज हम पश्चिमी देशों में पूर्व की आध्यात्मिक परम्पराओं के प्रति जो रूचि एवं रूझान देखते हैं, उसका श्रेय मुख्यत: स्वामी विवेकानन्द को ही जाता

 ISBN : 978-93-80216-07-2

है। उनकी दृष्टि समदर्शी थी। वे स्त्रियों एवं कमजोर वर्ग के लोगों के पक्ष में स्पष्ट तौर पर मुखर थे। वे प्रत्येक धर्म का सम्मान करते थे। उन्होंने शिकागो में विश्व से आए विभिन्न धर्मों के 6500 प्रतिनिधियों की सभा को सम्बोधित करते हुए कहा था कि हम विश्व के सभी धर्मों को न केवल स्वीकार करते हैं वरन् सभी धर्मों को सत्य मानकर उन्हें स्वीकार भी करते हैं। उन्होंने कहा प्रत्येक धर्म को उद्घोषणा करनी होगी कि विवाद नहीं सहायता, विनाश नहीं परस्पर सहयोग, संघर्ष नहीं सौहार्द तथा शांति। उन्होंने वास्तविक सीख दी थी कि आध्यात्मिक ज्ञान से हमारी समस्त परेशानियाँ कम हो सकती हैं, अन्य प्रकार के ज्ञान से हमें केवल सामयिक राहत ही मिलती है। वे साम्प्रदायिकता एवं कट्टरता के प्रखर विरोधी थे। उन्होंने इनकी कड़ी निंदा करते हुए कहा कि मानव सभ्यता की असहनीय क्षति करने वाली इन प्रवृत्तियों की अब मृत्यु हो जानी चाहिए। वे साम्प्रदायिकता के जितने बड़े विरोधी थे, विभिन्न धर्मों में आपसी सद्भावना के उतने ही बड़े समर्थक थे। उनके अनुसार धर्म के मूल में दुखी, कमजोर एवं निर्धन लोगों एवं अन्य जीवों की सेवा करना है। सही अर्थों में ईश्वर की सेवा वे करते हैं जो दुखी मानवता व अन्य संकटग्रस्त जीवों की सेवा व रक्षा करते हैं। उनके अनुसार यही सबसे बड़ा राष्ट्रीय कर्तव्य भी है।

उन्होंने स्पष्ट शब्दों में विश्व से कहा कि मात्र भाषण देने से विश्व का कल्याण नहीं होगा। उसमें परिवर्तन लाकर समता स्थापित करनी होगी। उन्होंने जीवन को एक संघर्ष माना व स्पष्ट कहा कि संघर्ष बंद होने का अर्थ है–मृत्यु। जीवन यदि जीने का नाम है तो संघर्ष उसकी संजीवनी है। यह बात उन्होंने परतंत्र भारत में कहीं भी परन्तु स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी समाज की परिस्थितियां कमोवेश उसी प्रकार की है, जिन पर उन्होंने चिंता व्यक्त की थी। स्वामी विवेकानन्द कहा करते थे कि कठोर श्रम के माध्यम से ही विश्व में बड़े-बड़े कार्य सम्भव हो पाए हैं। उन्होंने विपरीत परिस्थितियों में भी सत्य का मार्ग नहीं छोड़ा।

उनका स्पष्ट कहना था कि सत्य के लिए सबकुछ परित्याग किया जा सकता है परन्तु सब कुछ के लिए सत्य का परित्याग नहीं करना चाहिए। उनके अनुसार सत्य बोलना तपस्या के समान है। वे भारत में प्रचलित जातिगत भेदभाव से बहुत व्यथित थे। सभी देशों, जातियों एवं मतों के गरीबों एवं शोषित लोगों के प्रति उनमें गहरी संवेदना थी। स्वामी जी की एक प्रमुख चिंता थी ''मानवता का आध्यात्मिक उत्थान''। समाज सेवा के लिए उनका वेदवाक्य था–''मानव सेवा ही ईश्वर सेवा है।'' उनका लक्ष्य था प्रत्येक व्यक्ति को उसके विकास की स्वाभाविक प्रक्रिया के अनुसार प्रगति करने एवं अपनी आन्तरिक सम्भावना को साकार करने में सहायता प्रदान करना। उन्होंने सम्पूर्ण मानवता की एकात्मकता का संदेश दिया।

स्वामी विवेकानन्द ने युवाओं में आध्यात्मिक एवं राष्ट्रीय चेतना जागृत करने उनमें अपनी सांस्कृतिक विरासत के प्रति गौरव का भाव उत्पन्न करने का प्रयास किया। उन्होंने अशिक्षित, उपेक्षित व शोषित जनता की दुर्दशा की ओर शिक्षित लोगों का ध्यान आकर्षित किया तथा उन्हें अपने देशवासियों की सेवा करने के लिए प्रेरित किया। उनका यह स्पष्ट मत था कि जनता के उत्थान के लिए उनमें पंथनिरपेक्ष एवं आध्यात्मिक दोनों प्रकार की शिक्षा का प्रसार आवश्यक है व इसके लिए एक ऐसे संगठन या मिशनरी की आवश्यकता है जो निर्धनतम एवं दीन-हीन व्यक्ति तक महानतम विचारों को ला सके। इसी उद्देश्य से उन्होंने 1897 में रामकृष्ण मठ एवं रामकृष्ण मिशन की स्थापना की। जिस दौर में विदेश जाना पाप समझा जाता था, उस दौर में उन्होंने व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाते हुए भारत को पश्चिम की दिशा में रूख करने को कहा। उनका मानना था कि चूंकि वहाँ आधुनिक ज्ञान व नवीन तकनीक है अतः उसका प्रयोग भारत की अनेक समस्याओं के निराकरण में सहायक हो सकता है। उन्होंने अपने लिए यही काम निर्धारित कर लिया था परन्तु उनके लिए एक चुनौती यह थी कि

 ISBN : 978-93-80216-07-2

उपरोक्त काम उन्हें भारत के आध्यात्मिक धरोहर की नींव पर खड़े होकर करना था। उनका मानना था कि भारत के पास एक अतुलनीय आध्यात्मिक धरोहर है जिसे अपने साथ लेकर ही भारत आगे बढ़ सकता है। उन्होंने माना कि आधुनिक ज्ञान मनुष्य को आधुनिक तौर-तरीके से संगठित होना एवं प्रभावशाली तरीके से प्रतिस्पर्धा करना सिखाता है। वे मात्र जीवाश्मी वेदांती नहीं थे वरन् वे 20वीं सदी में भारत व इसके पार देखने की अपनी उत्कृष्ट चिंतन एवं दूरदर्शिता को लेकर बेहद स्पष्ट थे। उन्होंने पश्चिमी देशों के लिए तय किया था कि वह हमारे लोगों को आधुनिक खेती, उद्योग व अन्य तकनीकी, विज्ञान के क्षेत्र में अपने संसाधनों से भारत की सहायता करें। निसंदेह आज के दौर में आई.आई.टी, कृषि विश्वविद्यालयों, इंजीनियरिंग व प्रबंधन कॉलेजों, विज्ञान तकनीक के अन्य अनेक संस्थान एवं उद्योग-धन्धों की कतारें, स्वामी विवेकानन्द के मानस के वास्तविक चित्र थे।

तत्कालीन भारतीय विरासत के क्षरण का खतरा उनकी एक प्रमुख चिंता थी। छात्र नौजवानों का एक उल्लेखनीय भाग हिन्दू धर्म की रूढ़ियों से तंग आ चुका एवं ईसाइयत की ओर रूख कर रहा था। इसको रोकना आवश्यक था। चूंकि छात्र नौजवान का धर्मांतरण भविष्य में भारतीय स्वतंत्रता संग्राम को कमजोर बना देता यह दूर दृष्टि विवेकानन्द को थी। वे केवल धर्म के दृष्टिकोण से इस समस्या को नहीं देख रहे थे। आज पुनः हम अपने राष्ट्रिय इतिहास के दो मुहाने पर खड़े हैं। हमें अपनी अर्थनीति के जीर्णोद्धार के लिए पश्चिम की ओर देखना पड़ रहा है। दूसरी ओर हमारी राष्ट्रीय पहचान लुप्त होती जा रही है। यह एक विषम परिस्थिति है। हम अपनी सांस्कृतिक पहचान का बचाव किन उपायों से करें। पारिवारिक एकजुटता, नारियों के प्रति आदर भाव एवं उनका सम्मान, बच्चों की उचित परवरिश ताकि आगे चलकर वे समाज के जिम्मेदार सदस्य बनें, ये सब भी विचारणीय प्रश्न हैं। आधुनिक समाज, धन एवं बल के पीछे प्रभावित हो रहा है, बगैर यह

समझे कि यह दौड़ हमें कहाँ ले जा रही है। हम अपने स्वार्थों के लिए क्रूरता की सीमाएं पार करने के लिए तैयार हैं। महानतम विचारधाराओं के नाम पर जघन्यतम अपराध किए जा रहे हैं। यह रक्तपाती समय है। हर पल भारत की संस्कृति, भारत की पहचान एवं भारत के मूल्यों का क्षरण हो रहा है जिसे हमें अनदेखा नहीं करना चाहिए। ऐसी विषय परिस्थितियों में स्वामी विवेकानन्द का जीवन, उनका चिंतन एवं संदेश हमारे लिए आदर्श प्रस्तुत करता है। स्वामी विवेकानन्द के विचार समाज के निमित्त सदैव ही मार्गदर्शक की भांति पथ-प्रशस्त करते रहेंगे। आवश्यकता केवल उनके विचारों को आचरण में उतारने की है। स्वामी विवेकानन्द की 150वीं जयंती मनाने के लिए तत्त्कालीन वित्त मंत्री श्री प्रणव राव मुखर्जी की अध्यक्षता में एक राष्ट्रीय समिति गठित की गई है। इन समितियो के मार्गदर्शन में लगभग 200 करोड़ रूपये के अनुमानित व्यय पर लगभग 20 गतिविधियां आयोजित की जा रही हैं।

स्वामी विवेकानन्द के स्मरणोत्सव के उपलक्ष्य में आयोजित गतिविधियों में विभिन्न मे स्वामी विवेकानन्द के जीवन और उनके उपदेशों पर नवीन पुस्तकों का प्रकाशन् पुरानी पुस्तकों का पुनः मुद्रण, बच्चों के बीच पुस्तकों का वितरण, स्वामी विवेकानन्द पर दृश्य-श्रव्य सामग्री का परिचालन एवं राष्ट्रीय व क्षेत्रीय टेलीविजन चैनलों द्वारा स्वामी जी के उपदेशों का प्रचार-प्रसार जैसे कार्यकलाप शामिल हैं। धार्मिक सहिष्णुता पर स्वामी विवेकानन्द के दृष्टिकोण के सम्मान में भारतीय पुरात्व सर्वेक्षण द्वारा पोथीमालार बिल्डिंग (पंजाब), फतेहपुर मस्जिद (दिल्ली), कूडलमणिकम मंदिर (केरल) तथा राचोल सेमिनारी (गोवा) जैसे विभिन्न धर्मों के चार स्मारकों के जीर्णोद्धार का कार्य शुरू किया गया है। इसके अतिरिक्त पटना साहिब गुरूद्वारा (बिहार) एवं तवांग बौद्ध मठ (अरूणाचल प्रदेश) नामक दो दूसरे स्मारकों का नवीनीकरण करने की योजना पर कार्य किया जा रहा है। रामकृष्ण मिशन से जुड़े बहुत से संस्थानों को उनकी अवसंरचना में सुधार के लिए वित्तीय सहायता भी

 ISBN : 978-93-80216-07-2

प्रदान की जा रही है। भारत सरकार ने विवेकानन्द पीठ की स्थापना के लिए शिकागो विश्वविद्यालय को 1.5 मिलियन डॉलर का अनुदान दिया है, जिसके अन्तर्गत अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के विद्वान, स्वामी जी द्वारा प्रतिपादित अध्ययन क्षेत्रों में से किसी एक पर कार्य करेंगे। शिकागो विश्वविद्यालय भारतीय अनुसंधानकर्त्ताओं एवं विदेशी अनुसंधानकर्ताओं के आदान-प्रदान की भी सुविधा प्रदान करेगा। इसके साथ ही व्याख्यान के वास्तविक स्थान पर स्थित आर्ट इंस्टि्टयूट ऑफ शिकागो द्वारा विवेकानन्द 'मेमोरियल प्रोग्राम फॉर म्यूजियम एक्सीलेंस' का संचालन किया जाएगा जिसके अन्तर्गत वह संग्रहालयों के आधुनिक संचालन पर व्यापक ज्ञान प्रदान करने के लिए भारत सरकार के सहयोग से कार्य करेगा।

स्वामी विवकेनन्द हमारे जीवन के आकाश में पूरी मानवता के लिए प्रकाश और उम्मीद के नक्षत्र के रूप में आए। उन्होंने यह वचन दिया था कि वे अनन्त काल तक एक शरीर रहित आवाज बनकर संपूर्ण मानवता को प्रेरणा देते रहेंगे। आज हम उनके बताए पथ पर चलें एवं उनके विचारों को आत्मसात् करें यही उनके प्रति हमारी सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

सन्दर्भ :

1. डा. वी. पी. वर्मा-आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन, 2000, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल आगरा।
2. डा. जीवन मेहता-प्रतिनिधि राजीनीतिक विचारक, 2005, साहित्य भवन प्रकाशन, आगरा।
3. डा. आनन्द प्रकाश अवस्थी-भारतीयय राजनीतिक विचारक, 2006, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा।
4. डा. कल्पना मोहपात्रा- पॉलिटिकल फिलॉसफी ऑफ विवेकानन्द, 1996 नार्थन बुक्स प्रकाशन, दिल्ली।
5. डा. पी.आर. भुयान-मसीहा ऑफ इंडिया, 2003 अटलांटिक प्रकाशन, दिल्ली।
6. राष्ट्रीय सहारा दिल्ली-12 जनवरी, 2013

स्वामी विवेकानन्द : एक विचारधारा

डॉ॰ अजय चतुर्वेदी
विभागाध्यक्ष, इतिहास
वर्धमान कॉलेज, बिजनौर

12 जनवरी 1863, पौष कृष्ण सप्तमी, संक्रमण काल का शुभ समय, अर्थात् सूर्य का धनु राशि से मकर राशि में प्रवेश, के दिन कोलकाता में एक महान विभूति का जन्म हुआ। समस्त संसार उन्हें स्वामी विवेकानन्द के नाम से जानता है। पश्चिमी जगत के लिए विवेक भारतीय दर्शन और वेदान्त का ठीक उसी प्रकार का परिचय थे जैसा कि 5-6 वीं शताब्दी में भारत के लिए गौतम बुद्ध। उन्होंने भारतीय लोगों के दीन दुखी जीवन को उन्नत बनाने का संकल्प लिया और उसे पूर्ण करने के लिए तूफानी वेग से अपने आप को इस विचारधारा से आत्मसात किया और उसका आत्म साक्षात्कार भी किया। जन्म के समय से ही शायद वह विलक्षण प्रतिभा सम्पन्न थे और नटखट भी तथा खोजी स्वभाव के धनी। उनकी इस प्रकार की सोच, कि सत्य क्या है, क्या ईश्वर है? यदि वह है तो क्या हम उस को देख सकते हैं, ने ही उन्हें नरेन्द्र से स्वामी विवेकानन्द बना दिया। शिकागो की धर्म संसद में स्वामी जी ने जिस प्रकार हिन्दू दर्शन एवं वेदान्त की व्याख्या की, वह अविस्मरणीय है। उसी का फल था कि पूर्ण विश्व भारत की सर्वोच्चता जो कि वेदान्त में, वर्षों से लुप्त-सुप्त अवस्था में थी, पड़ी हुई सो रही थी, को जाग्रत कर दिया।

स्वामी जी का बचपन एवं शिक्षा

स्वामी जी का जन्म कोलकाता के अभिजात्य वर्ग के विश्वनाथ दत्त के पैतृक मकान में हुआ। उनके पिता ब्रिटिश भारत की राजधानी कोलकाता में सन् 12 जनवरी सन् 1863 को हुआ उनके पिता कोलकाता उच्च न्यायालय के प्रतिनिधि थे। उनकी माता भुवनेश्वरी देवी

 ISBN : 978-93-80216-07-2

एक धार्मिक महिला थी। बचपन से ही नरेन्द्र उदार व्यक्तित्व था। यहाँ तक कि अपने वस्त्र भिखारियों को देने में कोई हिचक न थी। केवल 14 वर्ष की आयु में कुछ समय के लिए उन्हें रामपुर रहना पड़ा। जहाँ किशोर को प्रकृति के साथ समय बिताने का पर्याप्त अवसर मिला, कारण वहाँ कोई विद्यालय न था। उनके बचपन की एक घटना से हमें पता चलता है कि किन संस्कारों में नरेन्द्र की परवरिश हुई। यह घटना थी, एक बार किसी सम्बन्धी के उकसाने पर उन्होंने अपने पिता से पूछा कि आपने मेरे लिए क्या सम्पत्ति इकट्ठी की है? इस पर पिता उन्हें दर्पण के सामने लेकर गए और कहा कि तुम स्वयं देख लो कि तुम्हारा सौष्ठव शरीर, तुम्हारी आँखों का तेज, तीक्ष्ण बुद्धि तथा निडर मन, क्या ये मेरा दिया हुआ नहीं है। इस प्रकार के विचारों ने ही नरेन्द्र को उनकी युवावस्था तक पहुँचाया। दूसरी घटना नरेन्द्र बचपन से ही शिव, राम और सीता की कल्पना का ध्यान करते थे, कि क्या वे वास्तव में हैं और यदि वे हैं तो कैसे हैं और क्या उनको देखा जा सकता है। एक बाद बचपन में उनकी शरारतों को देखकर और उनके कैसे नियन्त्रित किया जाए पर उनकी माता ने कहा था कि मैंने तो भगवान शिव से पुत्र माँगा था और उन्होंने अपना एक दैत्य भेज दिया। लेकिन कौन जानता था कि यही बालक एक दिन भारत को विश्व में गौरवान्वित करेगा। सन् 1971 में नरेन्द्र ईश्वरचन्द्र विद्यासागर संस्थान में नामांकित हुए। जहाँ उन्होंने 1877 तक अध्ययन किया। पुनः जब वे 1873 में उन्होंने कलकत्ता लौटे तो वह अकेले बालक थे जिन्होंने प्रेसिडेंसी कॉलेज की प्रवेश परीक्षा में प्रथम श्रेणी प्राप्त की। वह विभिन्न विषयों में रूचि रखने वाला बालक था। जैसे दर्शन, धर्म, इतिहास, सामाजिक, विज्ञान, कला, साहित्य। इसके अलावा वेद, उपनिषद्, भगवद् गीता, रामायण तथा महाभारत और पुराणों में उनकी गहरी रूचि थी। उनको भारतीय शास्त्रीय संगीत में भी दीक्षित किया गया। जिसका वे नियमित रूप से अभ्यास करते थे तथा वे नियमित रूप से अभ्यास करते थे तथा वे नियमित रूप से शारीरिक व्यायाम करते थे। दूसरी ओर नरेन्द्र ने पश्चिमी तर्क,

पश्चिमी दर्शन और यूरोपीय इतिहास का भी अध्ययन किया। सन् 1884 में वे स्नातक हो गये। नरेन्द्र ने डेविड ह्यूम, इमेन्यूअल कान्ट, जोहानन तथा गोरलिब, आदि के कार्यों को भी पढ़ा। वे वास्तव में बुद्धिमान थे। वे असाधारण स्मरण शक्ति के स्वामी थे। कहते हैं कि एक बात को सुन लेते थे कभी भूलते नहीं थे। वे प्रारम्भ में ब्रह्म समाज के गुप्त समुदाय के एक सदस्य थे और जो निराकार ब्रह्म में विश्वास करता था और मूर्ति पूजा को नकारता था। एक उदाहरण विशेष है कि जब उनकी मुलाकात देवेंद्र नाथ टैगोर से हुई तो उन्होंने उनसे पूछा कि क्या आपने भगवान को देखा है? टैगोर ने कहा बेटे तुम्हारी आँखें योगियों जैसी हैं। इसके बाद उन्होंने कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण लोगों से भी जानना चाहा कि क्या उन्होंने ईश्वर को आमने-सामने देखा है। किन्तु कोई उचित उत्तर न मिल सका।

रामकृष्ण परमहंस से भेंट–

नरेन्द्र की रामकृष्ण परमहंस से मुलाकात के पीछे एक महत्त्वपूर्ण कारण था। जब William Hastie सामान्य सभा संस्थान में William Words worth की एक कविता "The Excursion" जिसका अर्थ है ''भ्रमण'' पर एक व्याख्यान दे रहे थे। और ''उपसमाधि" शब्द (Trace) की व्याख्या कर रहे थे तब उन्होंने कहा कि बच्चों यदि इस शब्द का वास्तविक व्याख्या जानना चाहते हो तो तुम्हें दक्षिणेश्वर के रामकृष्ण परमहंस के पास जाना होगा। रामकृष्ण परमहंस से नरेन्द्र के मिलने का समय जब आया वह घटना कुछ इस प्रकार है कि सुरेन्द्र नाथ मित्रा के घर पर जिस समय रामकृष्ण व्याख्यान दे रहे थे, नरेन्द्र भी वहाँ उपस्थित थे। रामकृष्ण ने नरेन्द्र से कुछ गाने के लिए कहा और उनकी गायन प्रतिभा से प्रभावित होकर उन्हें दक्षिणेश्वर आने को कहा। सन् 1881 में नरेन्द्र दक्षिणेश्वर गये और इसके बाद भी प्राय: उनका वहाँ आना जाना होता रहा। परन्तु वह मूर्तिपूजा, बहुदेववाद तथा रामकृष्ण द्वारा काली पूजा से असहमत थे! चूँकि वह ब्रह्मसमाज के सदस्य थे। उन्होंने रामकृष्ण परमहंस की बार-बार परीक्षा

 ISBN : 978-93-80216-07-2

ली। जिसको रामकृष्ण परमहंस ने धैर्यपूर्वक सुना और उत्तर दिया कि ''सच को सभी दृष्टिकोणों से जाने का प्रयत्न करो।'' अब यहाँ एक दुःखपूर्ण घटना घटित होती है कि नरेंद्र के पिता का सन् 1884 में निधन हो जाता है और उनका परिवार मुसीबतों से घिर जाता है और उनका परिवार मुसीबतों से घिर जाता है तथा कर्ज की स्थिति आ जाती है। और साहूकार उनसे ऋण वसूलने का दबाव बनाते हैं और रिश्तेदार भी उनको पैतृक भवन से निकाल देते हैं। अब यहाँ उनकी जानने की इच्छा बढ़ जाती है कि क्या वास्तव में भगवान का अस्तित्व है कि उनकी इच्छा से ऐसा हुआ। इन घटनाओं से उनकी रामकृष्ण के प्रति आस्था बढ़ जाती है क्योंकि उनके पास उन्हें शांति का अनुभव होता है। एक अन्य घटना नरेन्द्र रामकृष्ण से विनती करते हैं कि वे देवी काली से उनके परिवार को वित्तीय संकटों से उबारने की प्रार्थना करें। रामकृष्ण के सुझाव पर वे तीन बार काशी मंदिर गये किन्तु वो सांसारिक भौतिक सुखों को मांगने में असफल रहे और उनका ध्यान बार बार सत्य ज्ञान एवं ईश्वर की खोज में लग जाता था। इन लगातार होने वाले सुखद एवं शांतिपूर्ण अनुभवों ने नरेन्द्र को रामकृष्ण के प्रति अधिक आकर्षित किया एवं उन्होंने रामकृष्ण परमहंस को गुरु के रूप में स्वीकार किया। पुनः एक दुःख पूर्ण घटना घटित हुई कि सन् 1885 में रामकृष्ण को गले में परेशानी विकसित हो गयी और उनको कलकत्ता स्थानान्तरित होना पड़ा। रामकृष्ण को अंतिम समय में नरेन्द्र और अन्य शिष्यों ने देखभाल की। इसी दौरान नरेन्द्र को ''निर्विकल्प समाधि का अनुभव हुआ। नरेन्द्र और अन्य शिष्यों ने यहीं पर रामकृष्ण से साधुवेश धारण किया। जो कि उनका पहला साधु स्वरूप था। रामकृष्ण ने नरेन्द्र को कहा कि उनके सभी शिष्यों का ध्यान रखेंगे और उनके पथ प्रदर्शक होंगे। 16 अगस्त 1886 में काशीपुर में रामकृष्ण का निर्वाण हुआ।

बारानगर में रामकृष्ण मठ की स्थापना–

रामकृष्ण की मृत्यु के पश्चात् पुनः नरेन्द्र को वित्तीय संकटों का

सामना करना पड़ा तथा उन्हें दक्षिणेश्वर छोड़ना पड़ा। तत्पश्चात् उनके मन में विचार आया कि क्यों न बारानगर में रामकृष्ण मठ की स्थापना की जाए और उन्होंने वहाँ रामकृष्ण मठ की स्थापना की। बारानगर के पुराने खंडहर में बहुत से युवा शिष्य नरेन्द्र के नेतृत्व में एकत्रित हुए और कठोर आत्मसंयम और आध्यात्मिक साधना के जीवन के बीच रामकृष्णमठ की स्थापना हुई।

रोमा रोलाँ के शब्दों में

एक महाप्रयाण था। एक गोताखोर की तरह वो भारतरूपी महासागर में डूब गए और उस मार्ग में अपने आपको छिपा लिया। बहते माल और फेंके माल की तरह सहस्त्रों संन्यासियों में से वे भी एक दिन बिना नाम के भगवाधारी सन्यासी से अधिक कुछ नहीं थे। परन्तु कुछ विद्वत्ता का तेज उनके नेत्रों में प्रज्वलित था। वेश बदलकर भी वे राजकुमार से कम न थे।

मठ सम्बन्धी प्रतिज्ञा–

सन् 1886 में बाबूराम की माँ ने नरेन्द्र और उनके साधु भाईयों को अंतपुर गाँवों में आमन्त्रित किया। नरेन्द्र और उनके साधु भाईयों द्वारा कुछ दिन अंतपुर गाँव में व्यतीत करने के बाद सन् 1886 में संध्या पर नरेन्द्र और अन्य आठ शिष्यों ने औपचारिक रूप से साधु शपथ ग्रहण की, कि वे अपना जीवन साधु की तरह व्यतीत करेंगे और यहीं उन्होंने अपना नाम ''स्वामी विवेकानन्द'' रखा।

भारत भ्रमण (सन् 1888-1893)–

स्वामी विवेकानन्द का 1888-1893 तक का समय भारत भ्रमण का रहा। जिसमें उन्होंने हिमालय, राजपूताना, पश्चिमी भारत तथा दक्षिण भारत की यात्राएँ कीं। इन यात्राओं में हरिद्वार, ऋषिकेष, यात्रा के दौरान हाथरस में शरतचन्द्र गुप्ता से उनकी भेंट हुई। स्वामी विवेकानन्द से प्रभावित होकर उन्होंने स्वामी जी से दीक्षा ली और स्वामी सदानंद के

 ISBN : 978-93-80216-07-2

नाम से जाने गये। 1888और 1890 की यात्राओं के दौरान गाजीपुर में उनकी मुलाकात पवहारी बाबा से हुई। एक अद्वैत वेदान्त तपस्वी थे और अपना ज्यादातर समय ध्यान साधना में ही व्यतीत करते थे। उनसे मुलाकात के बाद स्वामी जी ने उन्हें अपना गुरु बनाना चाहा तब बाबा ने कहा, अभी कुछ समय यहीं रूको।

रात्रि में ध्यान के समय पुनः एक घटना घटित हुई। स्वामी जी ने स्वप्नवत रामकृष्ण परमहंस का निराशाजनक चेहरा देखा और वे समझ गये कि उनके अलावा उनका कोई गुरु नहीं हो सकता। अतः उन्होंने अपना विचार त्याग दिया। 1890 की हिमालय भारत यात्रा के दौरान बालाराम बोस और सुरेशचन्द्र मित्रा की मृत्यु हो गयी जिससे उन्हें बीच में ही बारा नगर लौटना पड़ा। इसके पश्चात् इन्होंने नैनीताल, अल्मोड़ा, श्रीनगर, देहरादून, ऋषिकेष हरिद्वार आदि स्थानों की यात्राएँ कीं जिसमें उनकी मुलाकात स्वामी ब्रह्मानन्द, शारदानन्द, तुरियानन्द और अद्वैतानन्द से हुई कुछ दिन के लिए वे मेरठ रूके। जनवरी 1891 में उन्होंने अपने सभी साथियों को छोड़ दिया। और दिल्ली में कुछ ऐसा ऐतिहासिक स्थानों का भ्रमण किया और यही से गौतम बुद्ध के शब्दों ने उन्हें प्रेरणा दी कि:–

बिना पथ के आगे बढ़ो
किसी से डरो नहीं, कोई चिन्ता मत करो
अकेले भ्रमण करो, किसी श्रिंगी की तरह।
शेर की तरह, बिना डरे बिना कांपे
हवा की तरह, जिसे न बाँधा जा सके
कमल की तरह जो बेदाग है।

यहीं से उन्होंने अलवर की यात्रा की, जहाँ हिन्दु और मुस्लिमों ने उनका स्वागत किया। यहीं पर उन्होंने एक मुसलमान धार्मिक विद्यार्थी के प्रश्न का उत्तर दिया कि कुरान हजारों वर्ष पूर्व लिखी गई और अन्य किसी प्रक्षेप से मुक्त रही और इसने अपनी मूल पवित्रता को बनाए

रखा। यही पर स्वामीजी की मुलाकात अलवर के राजा मंगल सिंह से हुई। जिन्होंने भारतीय मूर्तिपूजा का मजाक उड़ाया, परन्तु स्वामी जी ने उनके पिता के चित्र के माध्यम से उचित उत्तर दिया। यहाँ से जयपुर की यात्रा में स्वामी जी ने पश्चिम, दक्षिण, यात्राओं में अनेक अनुभव किए। खेतरी के राजा अजीतसिंह ने स्वामी जी को अत्यधिक सहयोग किया। दक्षिण पश्चिम में भी अनेकानेक राजा उनके सम्पर्क में रहे।

विश्वधर्म संसद :– 11 सितम्बर 1893 को शिकागो के कला संस्थान में विश्वधर्म संसद आरम्भ हुई। भारत और हिन्दु धर्म का प्रतिनिधित्व करते हुए उन्होंने एक संक्षिप्त भाषण दिया। उन्होंने अपने भाषण का आरम्भ ''मेरे अमेरिकी भाईयों और बहनों'' इन शब्दों से किया जिसका वहाँ बैठै हुए सात हजार लोगों की भीड़ ने खड़े होकर तालियाँ बजाकर स्वागत किया। आगे उन्होंने दुनिया के सबसे युवा देश को सम्बोधित किया। स्वामी जी ने बड़े पैमाने पर प्रैस में सबका ध्यान आकर्षित किया और ख्याति प्राप्त की। अमेरिकी अखबार जेम दमूलवता ब्तपजपुनम ने स्वामी को ''तूफानी भारतीय तपस्वी'' कहा। The NewYork Herald ने छापा ''विवेकानन्द नि:सन्देह रूप से धर्म संसद में महानतम व्यक्तित्व हैं। उनको सुनने के बाद हमें महसूस होता है, कि हम कितने मूर्ख हैं जो इस ज्ञानी देश में धर्म प्रचारकों को भेजते हैं।''

इस तरह अमेरिका के विभिन्न अखबारों एवं पत्रिकाओं में स्वामी जी के सम्मान में बातें कहीं गईं।

अमेरिका और इंग्लैंड में व्याख्यान यात्रायें :– Brooklyar Ethical Society में प्रश्नोत्तर के दौरान उन्होंने कहा ''मेरे पास पश्चिम के लिए सन्देश हैं। जैसे बुद्ध के पास पूरब के लिए था।'' स्वामी जी ने लगभग दो साल पूरब और मध्य अमेरिका में व्याख्यानों में दिए। उन्होंने 1894 में न्यूयॉर्क की यात्राओं के दौरान वो दो बार (1895–1896 में) इंग्लैंड गये।

1895 में उनकी मुलाकात एक Irish महिला Margert Elizabeth

 ISBN : 978-93-80216-07-2

Noble से हुई। जो स्वामी जी के व्यक्तित्व से अत्यधिक प्रभावित हुई और बाद में भगिनी निवेदिता हुई। उनकी दूसरी इंग्लैंड यात्रा में स्वामी जी की मुलाकात Max Muller (Irdologist) से हुई। जो विश्वविद्यालय के विश्वविख्यात इतिहासकार थे। जिन्होंने पश्चिम में रामकृष्ण परमहंस की (जीवनी) जीवन चरित्र पहली बार लिखी।

इसके पश्चात भी उन्होंने विभिन्न देशों की यात्राएँ की। और जीवन एवं दर्शन पर व्याख्यान दिए। विश्व की विभिन्न हस्तियों से उनकी मुलाकात हुई। पश्चिम में रहकर भी उन्होंने अपने भारतीय कार्यों को पुनर्जीवित रखा। उनके इस काल के पत्र उनके समाज सेवा के कार्यों को दर्शाते हैं।

भारत वापसी (1897-1899)

यूरोप से पानी के जहाज द्वारा 15 जनवरी 1897 को स्वामी जी कोलम्बो पहुँचे जहाँ स्वामी जी का बहुत ही गर्मजोशी से स्वागत किया गया। स्वामी जी ने कोलम्बो में, अपना पहला आम भाषण दिया। जहाँ से वो रामेश्वरम्, मदुरई, में मद्रास में व्याख्यान देते हुए कलकत्ता पहुँचे। जहाँ स्वामी जी ने पश्चिम में भारत की महान आध्यात्मिक विरासत के बारे में कहा। वहीं भारत में रहते हुए उन्होंने सामाजिक मुद्दों वर्णव्यवस्था को खत्म करने, विज्ञान को बढ़ावा देने, औद्योगिकरण को बढ़ावा देने और व्यापक रूप से फैली हुई गरीबी को हटाने की बात कही।

1 मई 1897 को सामाजिक कार्यों को पूरा करने के लिए स्वामी जी ने रामकृष्ण मिशन की कलकत्ता में स्थापना की। जिसका मुख्यालय वैलूर मठ में बनाया गया।

अन्तिम समय में स्वामी जी की दूसरी पश्चिमी यात्राः– गिरते हुए स्वास्थ्य के बावजूद स्वामी जी एक बार पुनः जून 1899 में पश्चिम के लिए रवाना हुए। इस बार उनके साथ भगिनी निवेदिता और स्वामी तुरियानन्द थे। सन् 1900 में स्वामी जी ने धर्म काँग्रेस में अपने व्याख्यान

दिएं जहाँ उन्होंने लिंगम की पूजा एवं भागवतगीता की प्रमाणिकता के ऊपर व्याख्यान दिया। 9 दिसंबर 1900 में कलकत्ता वापस आने तक उन्होंने यूरोप में Brittany, Vienna, Istanbul, Athens, Egypt तथा कई अन्य शहरों की यात्राएँ कीं।

निर्वाण :- 4 जुलाई 1902 को स्वामी जी सुबह जल्दी जागे, बैंलूर मठ में पूजा स्थल पर गये और तीन घण्टे ध्यान साधना की। उन्होंने संस्कृत व्याकरण, दर्शन योग, विभिन्न वेदों की शिक्षाऐं अपने शिष्यों को दी। शाम को 7:00 बजे स्वामी जी अपने कक्ष में गए, जहाँ 9:10 पर उनका ध्यानावस्था में निर्वाण हुआ। उनके शिष्यों के अनुसार स्वामी जी ने महासमाधि प्राप्त की स्वामी जी की भविष्यवाणी (कि वो चालीस साल नहीं जीवित रहेंगे) पूरी हुई। उनका अन्तिम संस्कार बैलूर में गंगा के किनारे, जहाँ सोलह साल पहले स्वामी रामकृष्ण परमहंस का अन्तिम संस्कार किया गया था, के पास चन्दन की लकड़ियों से किया गया।

उपसंहार :– स्वामी विवेकानन्द के बारे में आज भी जो पढ़ते, लिखते या सुनते हैं, उनसे भारत की युवाशक्ति को निःसन्देह एक विशिष्ट उर्जा प्राप्त होती है। वो शेर के समान निर्भीक थे, और एक श्रंगी के समान आगे बढ़ने वाले थे। जब वो अद्वैत चिन्तन एवं आध्यात्मिक दर्शन के मार्ग पर आगे बढ़े तो कभी उन्होंने पीछे मुड़कर नहीं देखा। वे बेहद विलक्षण प्रतिभा सम्पन्न एवं अपने ओजस्वी भाषणों में निर्विवाद रूप से तूफानी थे।

उन्होंने भारत में दीन दुखियों का चिन्तन किया तो पश्चिमी जगत में भारतीय विरासत को स्थापित किया। वो निःसन्देह रूप से प्रगतिवादी थे और आधुनिकता के पक्षधारी थे। उनका भारतीय युवाओं के लिए कथन–''उत्तिष्ठः जाग्रतः प्रापन्नवरान्निबोधयत्'' आज भी प्रासंगिक एवं अनुकरणीय है। भारतीय युवा शक्ति उनके बताए मार्ग पर आगे बढ़े यही इस महान तपस्वी को सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

 ISBN : 978-93-80216-07-2

सन्दर्भ :

1. George 2002
2. Clarke 2006
3. Badrinath 2006
4. Mukharji 2011
5. Banhatli 1995
6. Sen 2003
7. Paul 2003
8. Von dense 1999
9. Nikhilanand 1964
10. Malagil Nailk 2003
11. Vivekanand -Adarsh Naari
12. Swami Vivekanand-An Intoduction

आज का युवा और स्वामी विवेकानन्द : विचार एवं मूल्य

डॉ॰ बॉबी यादव
असि. प्रो., हिन्दी
मा.कां.रा. महाविद्यालय
गाजियाबाद

निशा यादव
असि. प्रो., भूगोल
कु.मा.रा.म.स्ना. महाविद्यालय
बादलपुर

स्वामी विवेकानन्द आधुनिक भारत के उन चिंतकों में हैं जिन्होंने अपने विचारों के प्रकाश से युवा-वर्ग को सर्वाधिक बल दिया ताकि हमारे देश का भविष्य संस्कारों की पीठिका पर दैदिप्यमान हो। वे युवाओं के भौतिक और आध्यात्मिक दोनों प्रकार के विकास के प्रबल समर्थक थे ताकि उनका नैतिक उत्थान भी हो सके। वे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अद्वैत की स्थापना पर बल देने और उसके परिपालन का संदेश देते हैं।

जिस समय स्वामी विवेकानन्द की मृत्यु हुई, उस समय वे 39 वर्ष के थे अतः हम कह सकते हैं कि वह युवावस्था में ही थे। स्वामीजी ने अपना संपूर्ण जीवन युवा के रूप में ही व्यतीत किया। उन्होंने अपने युवा मित्रों के साथ अनेक बार सार्थक विचार-विमर्श किया तथा उस समय के युवा-वर्ग को ध्यान में रखकर युवाओं को प्रेरित करने के लिए अपने मूल्यवान विचार प्रकट किए। ये विचार आज के संदर्भ में भी प्रासंगिक हैं। उनकी मृत्यु की एक शताब्दी से भी अधिक समय बीत जाने के बाद भी उन्हें पढ़ कर ऐसा लगता है कि वे आज के युवा को ही संबोधित कर रहे हैं। हमारा देश विश्व की सर्वाधिक युवा जनसंख्या वाले देशों में गिना जाता है। युवा ही किसी भी देश का भविष्य होते हैं तथा वे ही आगामी पीढ़ियों के लिए मार्ग प्रशस्त करते हैं परंतु आज हम देखते हैं कि भारतीय युवा-वर्ग का अधिसंख्य भटक गया प्रतीत होता है। लगता है कि जैसे भविष्य के प्रति उसकी कोई दृष्टि ही नहीं है।

 ISBN : 978-93-80216-07-2

कहीं तो राजनीति ने उसे भटका रखा है, कहीं सिनेमा की चकाचौंध वाली दुनिया ने, और कहीं लगता है कि 'समय का सिर' पकड़ते-पकड़ते वह स्वयं 'गंजा' हो गया है। आज का युवा स्वयं को इस अरबों के महासागर में अकेला पाता है और अनेक बार नशाखोरी तथा गंदी आदतों में डूब जाता है, जिसका कोई अंत नहीं। वह स्वयं को पथभ्रष्ट पाता है तथा उन्हें रास्ता दिखाने का दावा करने वाले राजनेता, साधु-सन्यासी-बाबा लोग, धर्म तथा समाज के ठेकेदार मौका पाकर उसका शोषण करने से नहीं चूकते और वह स्वयं को टूटा हुआ, बिखरा हुआ महसूस करता है।

आज का युवा दो दिशाओं में जा रहा है। एक वर्ग तो वह है जो सूचना-प्रौद्योगिकी की राह पर चलकर आसमान की बुलंदियों की ओर बढ़ता जा रहा है, जिसके कदम रूकने का नाम नहीं लेते और वह लाखों-करोडों कमाता बेतहाशा रफ्तार से भागा जा रहा है, वह अपने मां-बाप, पत्नी-पुत्र, यार-दोस्त , सगे-संबंधी सब को पीछे छोड़कर बस भागा जा रहा है, अनंत आकाश की सरहदों को छूने, जिसका कोई अंत नहीं है।

वहीं दूसरी तरफ दूसरा वर्ग है जो हमारे गाँवों, कस्बों, छोटे शहरों, दूर-दराज में रहता है, जिसके पास आज भी बिजली-पानी-कपडा-मकान की समस्या है, वह बेरोजगारी-मंहगाई-गफलत-संत्रस से पीड़ित होकर स्वयं से बेजार होता जा रहा है। स्वामी जी ने ऐसे युवाओं को ही प्रेरणा देने का काम किया है। वे चाहते हैं कि हमारे देश के युवा प्रबुद्ध नागरिक बनकर उभरें तथा उनके लिए उत्तम आदर्श स्थापित किए जाएं। वे चाहते हैं कि युवा देश के उत्थान में अपना सर्वस्व योगदान करें तथा देश को प्रगति की ओर अग्रसर करें और यहां से बेरोजगारी, जहालत, बीमारी, असमानता आदि समस्याओं का निराकरण करने में महत्ती भूमिका निभाएं तथा देश की परिस्थितियों में परिवर्तन को अपना दायित्व समझें और उसमें सकारात्मक परिवर्तन का प्रयास करें।

हम देश के युवाओं से अपील करते हैं कि वे अपने विचारों में परिवर्तन करें, वे सकारात्मक विचारों को ग्रहण करने का साधन बनें तथा नकारात्मक विचारों को अपने मन से बाहर निकाल दें। यह सकारात्मकता ही उसे ऊर्जा से ओत-प्रोत करेगी। यह सकारात्मक दृष्टिकोण ही उसे दिशा दिखाएगा और 'सत' की ओर प्रेरित करेगा तथा वह न केवल अपने लिए अपितु समाज तथा राष्ट्र के लिए भी भविष्य की दिशाएं तय करने का मार्ग प्रशस्त करेगा।

स्वामी जी का मानना है कि 'इस देश का पुनरूत्थान युवाओं द्वारा ही होगा'। आज के युवा को चाहिए कि वह स्वयं पर विश्वास रखे, अपना धैर्य न खोए और सतत रूप से अपनी मंजिल की ओर बढ़ता चला जाए। उन्हें पूरा विश्वास है कि वह उसे प्राप्त करके ही रहेगा। हाँ यह बात जरूर है कि उसे प्राप्त करने में उसे थोड़ी मुश्किलों का सामना करना पड़ेगा, अनेक समस्याएं आकर इसका रास्ता रोकेंगी तथा उसका मार्ग भ्रष्ट करने का भी प्रयास करेगी परंतु युवा में इतनी शक्ति है कि वह उन सब को पीछे छोड़ कर अपने लक्ष्य को सफलतापूर्वक प्राप्त कर सकता है। स्वामी जी का मानना है कि-''मेरा विश्वास युवा पीढ़ी में, नयी पीढ़ी में है, मेरे कार्यकर्ता उसमें से आएंगे। सिहों की भांति वे समस्त समस्या का हल निकालेंगे। मैंने अपना आदर्श निर्धारित कर लिया है, और उसके लिए अपना समस्त जीवन दे दिया है। यदि मुझे सफलता नहीं मिलती, तो मेरे बाद कोई अधिक उपयुक्त व्यक्ति आएगा और इस काम को संभालेगा, और मैं अपना संतोष प्रयत्न करने में ही मानूंगा।

चरित्रवान, बुद्धिमान, दूसरों के लिए सर्वस्व त्यागी तथा आज्ञाकारी युवकों पर ही मेरे भविष्य का कार्य निर्भर है। उन्हीं पर मुझे भरोसा है, जो मेरे भावों को जीवन में परिणत कर अपना और देश का कल्याण करने में जीवनदान कर सकेंगे। नहीं तो झुण्ड के झुण्ड कितने ही लड़के आ रहे हैं और आएंगे, पर उनके मुख का भाव तमपूर्ण है : हृदय में उद्यम की आकांक्षा नहीं, नचिकेता की तरह श्रद्धावान दस-बारह लड़के

 ISBN : 978-93-80216-07-2

पाने पर मैं देश की चिंतन-धारा और प्रयत्न को नवीन पथ पर परिचालित कर सकता हूँ।'' (विवेकानन्द साहित्य खण्ड 6, पृ.स 195) इस प्रकार हम देख सकते हैं कि स्वामी जी को देश के युवाओं पर इतना विश्वास था कि वे एक दर्जन युवाओं के ही सहयोग से सम्पूर्ण देश की विचारधारा को बदलने में स्वयं को सक्षम पाते हैं। यह युवा वर्ग केवल उसी समय उपस्थित नहीं था अपितु आज का युवा भी यदि ठान ले तो वह केजरीवाल बन सकता है वह चाहे तो धोनी, सानिया, मैरीकम, मलाला, जुकरबर्ग आदि बन सकते हैं।

स्वामी विवेकानन्द पर गीता का काफी प्रभाव था । वे युवाओं को बार-बार 'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन:' की याद दिलाते हैं तथा निष्काम कर्म की प्रेरणा देते हैं। वे युवाओं से अपील करते हैं कि ''चट्टान की तरह दृढ़ रहो। सत्य की हमेशा जय होती है। -------- कदाचित हम लोग उसका फल देखने के लिए जीवत न रहें, परंतु जैसे इस समय हम जीवित हैं, इसमें कोई संदेह नहीं है कि देर या सवेर इसका फल अवश्य प्रकट होगा। भारत को नव-विद्युत-शक्ति की आवश्यकता है, जो जातीय धमनी में नवीन स्फूर्ति उत्पन्न कर सके।'' (विवेकानन्द साहित्य खण्ड 3, पृष्ठ 344) इस नवीन शक्ति की अपेक्षा हमें आज भी है। हमारा देश इसी शक्ति से विकसित भारत बन सकता है। इसी शक्ति ने हमें सूचना-प्रौद्योगिकी के संसार के शिखर पर पहुँचाया तथा यही शक्ति हमें बैंकिग, खेल-कूद, मनोरंजन आदि क्षेत्रों में अग्रसर करती जा रही है और एक दिन यही युवा-शक्ति हमारे देश को महानता के शिखर पर पहुँचाएगी।

परंतु इसे प्राप्त करने के लिए युवा-वर्ग को कुछ यत्न करने होंगे। स्वामी जी के शब्दों में यह 'नौकरी दो- नौकरी दो' से प्राप्त नहीं होगा अपितु हमें अध्यवसाय करना होगा। हमें विदेशी बहुराष्ट्रीय कंपनियों के आगे नौकरियों के लिए हाथ फैलाने की अपेक्षा अपनी स्वयं की कंपनियां बनाकर पूरे विश्व में संचालन करना होगा। स्वयं को कड़ाई से

खड़े रखना होगा तथा दूसरों को स्वयं में विलिन करना होगा तथा हर स्तर पर अद्वैत की स्थापना करने का प्रयास करना होगा।

संदर्भ

1. विवेकानन्द की जीवनी, रोमा रोला, अद्वैत आश्रम, कोलकाता 2013
2. मेरी जीवन कथा, स्वामी विवेकानन्द, रामकृष्ण मठ नागपुर, 2014
3. विवेकानन्द साहित्य, खण्ड 1 से 6, अद्वैत आश्रम कोलकाता 2014
4. भारत जागरण, स्वामी विवेकानन्द, रामकृष्ण मिशन, नई दिल्ली 2011
5. व्यक्तित्व का विकास, स्वामी विवेकानन्द रामकृष्ण मठ, नागपुर 2014
6. शिकागो वक्तृता, स्वामी विवेकानन्द, रामकृष्ण मठ, नागपुर 2014
7. भारत जागरण स्वामी विवेकानन्द, रामकृष्ण मिशन नई दिल्ली 2011

 ISBN : 978-93-80216-07-2

स्वामी विवेकानन्द : कर्मयोग

नीलम शर्मा
असि. प्रो. संस्कृत
कु.मा.रा.म.स्ना. महाविद्यालय, बादलपुर

आधुनिक भारतीय दार्शनिक विचारधारा को नूतन दिशा प्रदान करने वाले स्वामी विवेकानन्द एक महान विभूति हैं। बहुमुखी प्रतिभा के धनी स्वामी विवेकानन्द के धर्म, दर्शन, शिक्षा, संस्कृति, साहित्य, संगीत, कला, विज्ञान, इतिहास, अर्थनीति, समाजवाद, राष्ट्रवाद, समाजसुधार नारी जागरण आदि नानाविध विषयों पर मौलिक, अद्वितीय और कालजयी विचार प्राप्त होते हैं। इसीलिए इन्हें युगनायक, युगप्रवर्तक, युगाचार्य, विश्वविवेक, विश्वमानव, राष्ट्रद्रष्टा, विचारनायक, योद्धा, संन्यासी आदि उपाधियों से उपहित किया गया है। शंकराचार्य के अद्वैतवेदान्त का बोधगम्य और वैज्ञानिक भाषा में प्रस्तुतीकरण, वेदान्त के, व्यावहारिक स्वरूप का प्रकाशन और भारत के राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक विकास के लिए गीता के निष्काम कर्मयोग की उपादेयता का प्रतिपादन करना विवेकानन्द का आधुनिक भारतीय दर्शन को अमूल्य योगदान है।

स्वामी विवेकानन्द का दर्शन कर्म पर सर्वाधिक बल देता है। स्वामी विवेकानन्द का सर्वप्रमुख वक्तव्य है–

''उठो, जागो और तब तक मत रूको
जब तक लक्ष्य की प्राप्ति न हो जाए ।''

नि:संदेह उनका यह कथन कर्म की महत्ता प्रतिपादित करता है। विवेकानन्द ने सदैव भारतीयों को कर्म की भावना से आन्दोलित करने की चेष्टा की। वे सर्वदा कर्म के लिये प्रेरित करते थे। इस सन्दर्भ में एक दृष्टान्त दृष्टव्य है –एक बार कोई नवयुवक स्वामी जी के समीप गया और बोला–**''स्वामी जी ! मुझे गीता समझा दीजिये। स्वामी जी ने सच्चे मन से कहा–गीता समझने का वास्तविक स्थान फुटबाल**

का मैदान है। जाओ, घन्टे भर खेल-कूद लो। गीता तुम स्वयं समझ जाओगे।''[1] यहाँ विवेकानन्द ने गीता के ज्ञान को व्यावहारिक रूप में अनुभव करने के लिये प्रेरित किया है।

विवेकानन्द के कर्मयोग को कतिपय बिंदुओं के माध्यम से समझा जा सकता है।

कर्मयोग का तात्पर्य :-श्रीमद्भगवद्गीता के अनुसार कर्मयोग का अर्थ है -'योगः कर्मसु कौशलम्।[2] अर्थात् कुशलता और वैज्ञानिक प्रणाली से कर्म करना। यहाँ जिज्ञासा हो सकती है कि कर्म करने की शैली जानने से क्या लाभ है? क्योंकि संसार में प्रत्येक मनुष्य किसी न किसी प्रकार से काम करता ही रहता है। यहाँ विवेकानन्द का तर्क है कि शक्तियों का निरर्थक क्षय भी हो सकता है। अतः कुशलता से अथवा वैज्ञानिक प्रणाली से कर्म करना आवश्यक है। कर्मानुष्ठान की विधि सम्यक् रूप से जानकर मनुष्य श्रेष्ठ फल प्राप्त कर सकता है।

विवेकानन्द के अनुसार समस्त कर्मों का उद्देश्य है- मन के भीतर पहले से ही स्थित शक्ति को प्रकट कर देना। आत्मा को जागृत कर देना। प्रत्येक मनुष्य के अन्दर पूर्ण शक्ति और पूर्ण ज्ञान विद्यमान है। भिन्न-भिन्न कर्म इन महान् शक्तियों को जागृत करने तथा बाहर प्रकट कर देने में साधन मात्र हैं।[3]

योग शब्द सामान्यतः दो अर्थों में प्रयुक्त होता है। प्रथम - मिलन और द्वितीय-विशेष प्रकार की साधना। विवेकानन्द ने योग शब्द को व्यापक अर्थ में प्रयुक्त किया है, जिसमें उपर्युक्त दोनों अर्थ समाविष्ट हैं। अतः विवेकानन्द के अनुसार योग साधना तथा मिलन का वह मार्ग है, जिसके द्वारा अमरत्व की अनुभूति संभव है। इसके अन्तर्गत विशेष प्रकार के अनुशासन आते हैं।[4] इस प्रकार विवेकानन्द के मत में कर्मयोग नीतिविषयक तथा धर्मशास्त्रीय एक निश्चित व्यवस्था है। इस व्यवस्था में मूलतः दो प्रकार की अनुशंसा है। प्रथम-शुभ कर्मों का आचरण और

 ISBN : 978-93-80216-07-2

द्वितीय स्वार्थ से ऊपर उठना। वस्तुतः यह मार्ग किसी तात्विक सिद्धांत पर बल नहीं देता, अपितु स्वार्थ से ऊपर उठकर कुछ शास्त्र सम्मत एवं कुछ नैतिक दृष्टि से शुभ कर्मों को करना ही कर्म मार्ग है।[5]

अतः कर्मयोग निस्वार्थपरता और सत्कर्म द्वारा मुक्ति लाभ करने की एक विशिष्ट प्रणाली है।

विवेकानन्द ने कर्मयोग को कर्म के रहस्य का ज्ञान भी कहा है। तद्नुसार बिना फल उत्पन्न किये कोई भी कर्म नष्ट नहीं हो सकता। प्रकृति की कोई भी शक्ति उसे फल उत्पन्न करने से नहीं रोक सकती। विवेकानन्द के अनुसार कर्मयोग के सम्बन्ध में एक सूक्ष्म एवं गम्भीर प्रश्न यह भी है कि सत् और असत् कर्म परस्पर घनिष्ट रूप से सम्बद्ध हैं। इन दोनों के मध्य में एक रेखा खींचकर निश्चित रूप से यह नहीं बताया जा सकता कि अमुक कार्य नितान्त शुभ है और अमुक अशुभ। ऐसा कोई भी कर्म नहीं है, जो एक ही समय में शुभ और अशुभ फल उत्पन्न न करे। इसीलिए जो शुभ कर्मों में भी कुछ ना कुछ अशुभ तथा अशुभ कर्मों में भी कुछ ना कुछ शुभ देखते हैं, वस्तुतः वे ही कर्म का रहस्य समझ पायें हैं।

यहाँ यह भी ध्यातव्य है कि कर्त्तव्य और सदाचार की अवधारणा देशकाल परिस्थिति सापेक्ष है। जो कर्म किसी एक परिस्थिति, देश, काल में शुभ है वही अन्यत्र अशुभ हो सकता है। अतएव कर्त्तव्याकर्त्तव्य का विभाग निर्देश नहीं किया जा सकता। फिर भी विवेकानन्द ने आन्तरिक दृष्टिकोण से कर्त्तव्य की व्याख्या प्रस्तुत की है। तद्नुसार जिस किसी कर्म से भगवान् की ओर गति हो वह सत् कर्म है और वही कर्त्तव्य है। इसके विपरीत जो कर्म नीचे की ओर ले जाये, पशुवत् बना दे उन्हें अकर्तव्य की श्रेणी में रखा गया है।[6]

कर्म सम्पादन में किसी भी प्रकार की शंका का अवकाश नहीं रहे, एतदर्थ स्वामी विवेकानन्द ने स्वयं शंका कर उसका समाधान प्रस्तुत

किया है। संभवतः यह शंका हो सकती है कि एक ओर तीव्र कर्म है और दूसरी ओर शांति। यदि मनुष्य सतत कर्म में ही लगा रहे तो आराम एवं शान्ति कैसे अनुभूत होगी। वस्तुतः इस शंका के समाधान में स्वामी विवेकानन्द ने कर्म का आदर्श एवं रहस्य प्रस्तुत कर दिया है। उनके यह वक्तव्य सार्वकालिक एवं सार्वभौमिक हैं। विवेकानन्द ने कहा है कि ''आदर्श पुरूष तो वे हैं, जो परम् शान्त एवं निस्तब्धता के बीच भी तीव्र कर्म का, तथा प्रबल कर्मशीलता के बीच भी मरूस्थल की शान्ति एवं निस्तब्धता का अनुभव करते हैं। उन्होंने संयम का रहस्य जान लिया है– अपने ऊपर विजय प्राप्त कर चुके हैं। किसी बड़े शहर की भरी हुई सड़कों के बीच से जाने पर भी उनका मन उसी प्रकार शान्त रहता है, मानो वे किसी निःशब्द गुफा में हों, और फिर भी उनका मन सारे समय कर्म में तीव्र रूप से लगा रहता है। यही कर्मयोग का आदर्श है और यदि तुमने यह प्राप्त कर लिया है, तो तुम्हें वास्तव में कर्म का रहस्य ज्ञात हो गया है।''[7]

कर्मयोग का आदर्श :–विवेकानन्द के अनुसार कर्मयोग का सर्वोच्च आदर्श है– ''अप्रतिकार''[8] उनके अनुसार कर्मयोगी वही है, जो यह जानता है कि यह अप्रतिकार ही मनुष्य की आन्तरिक शक्ति का उच्चतम विकास है। साथ ही वह यह भी समझता है कि जिसे 'अन्याय का प्रतिकार' कहा जाता है, वह अप्रतिकार रूप उच्चतम शक्ति की प्राप्ति के मार्ग में केवल एक सीढ़ी मात्रा है। इस सर्वोच्च आदर्श को प्राप्त करने के लिये सर्वप्रथम अन्याय का प्रतिकार करना मनुष्य का कर्तव्य है। यहाँ ध्यातव्य है कि सर्वप्रथम यह विचारणीय है कि मनुष्य में प्रतिकार की शक्ति है भी या नहीं। जो मनुष्य शक्ति सम्पन्न होते हुए भी प्रतिकार नहीं करता वास्तव में वही महान कार्य करता है। किन्तु यदि मनुष्य में प्रतिकार की क्षमता ही नहीं है और वह भ्रमवश यह सोचता है कि वह उच्च प्रेम की प्रेरणा से कार्य कर रहा है तो यह प्रथम के सर्वथा विपरीत है। इसलिये द्वितीय मनुष्य सर्वप्रथम कार्य करे, संघर्ष

 ISBN : 978-93-80216-07-2

करे, यथाशक्ति प्रतिद्वन्दिता करे। जब उसमें प्रतिकार की शक्ति आ जायेगी, केवल तभी अप्रतिकार उसके लिए गुण स्वरूप होगा।

अतः मनुष्य की आन्तरिक शक्ति का उच्चतम विकास अर्थात् पूर्णता ही समस्त योगों का अन्तिम लक्ष्य है। कर्मयोग भी मनुष्य को इस लक्ष्य की ओर ले जाता है। यह वह आदर्श है जिसमें चिरकाल के लिए सम्पूर्ण रूप से आत्मत्याग हो जाता है। जिसमें किसी प्रकार का 'मैं' नहीं रहता है, केवल 'तू' ही रहता है।

कर्मयोग में सिद्धिः–कर्मयोग के उद्देश्य 'आत्मत्याग' के प्राप्त हो जाने पर ही कर्मयोग में सिद्धि प्राप्त हो जाती है। इस स्थिति में मनुष्य दूसरों के लिये स्वशरीर, मन यहाँ तक की सर्वस्व न्यौछावर कर देता है। समस्त सत् कार्यों का यही सर्वोच्च फल है। विवेकानन्द के अनुसार इस स्थिति की प्राप्ति के लिये यह आवश्यक नहीं है कि व्यक्ति ने दर्शनशास्त्रों का अध्ययन, ईश्वर में विश्वास और प्रार्थना आदि की हो, केवल सत् कार्यों की शक्ति से ही यदि वह व्यक्ति उस अवस्था को प्राप्त कर ले, जिसमें वह दूसरों के लिये अपने जीवन और सबकुछ का उत्सर्ग करने को तत्पर हो, तो वह उसी लक्ष्य पर पहुँच गया है, जहाँ एक भक्त भक्ति के द्वारा और एक ज्ञानी अपने ज्ञान द्वारा पहुँचता है।[9]

कर्मयोग में सिद्धि का उपाय :–यह पूर्व में भी स्पष्ट किया जा चुका है कि कोई भी कर्म न तो पूर्णतः शुभ है और न ही अशुभ। बिना कुछ अशुभ किये न तो शुभ किया जा सकता है और न ही शुभ किये बिना अशुभ ही। तो यहाँ एक समस्या उत्पन्न होती है कि सबकुछ जानते हुए कर्म कैसे किये जायें। कर्मानुष्ठान आवश्यक है और पूर्णता की प्राप्ति लक्ष्य, तो कैसे उसे प्राप्त कर सकते हैं। इस प्रश्न का सम्यक् और सटीक उत्तर श्रीमद्भगवद्गीता में प्राप्त होता है। गीता में यह स्पष्टतः प्रतिपादित है कि कोई भी मनुष्य क्षणभर भी कर्म से विरत नहीं हो सकता।[10] तो फिर कैसे वह लक्ष्य की प्राप्ति करे? इसके लिये गीता में निष्काम कर्मयोग का प्रतिपादन है–

''कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते संगोऽस्त्वकर्मणि।।''[11]

कर्म का रहस्य जानते हुए कर्मों का अनुष्ठान अनासक्तिपूर्वक किया जाना चाहिये। विवेकानन्द ने विशद् रूप में अनासक्ति के स्वरूप और प्राप्ति के उपायों पर चर्चा की है। विवेकानन्द के शब्दों में – 'कर्मयोग हमें शिक्षा देता है कि संसार को मत छोड़ो, संसार में ही रहो, जितना चाहो सांसारिक भाव ग्रहण करो। परन्तु यदि यह सब तुम्हारे ही भोग के लिये हो तो फिर तुम्हारा कर्म करना व्यर्थ है। तुम्हारा लक्ष्य भोग नहीं होना चाहिये। पहले अहम् भाव को नष्ट कर डालो और फिर समस्त संसार को आत्मस्वरूप देखो।'[12]

विवेकानन्द ने दृढ़ शब्दों में कहा है कि – 'कर्म करो, अवश्य करो पर उस कर्म अथवा विचार को अपने मन के ऊपर कोई गहरा प्रभाव न डालने दो। लहरें आयें और जायें, मांसपेशियों और मस्तिष्क से बड़े-बड़े कार्य होते रहें पर देखना वे आत्मा पर किसी प्रकार का गहरा प्रभाव न डालने पायें।[13]

स्वामी विवेकानन्द ने सभी को एक स्वामी के समान कार्य करने के लिये प्रेरित किया, न कि एक दास के समान। क्योंकि दास का कार्य स्वार्थ के लिये किया गया कार्य है। कोई कार्य स्वार्थ के लिये है अथवा नहीं? इसकी पहचान बताते हुए वे कहते हैं कि प्रेम के साथ किया गया कार्य आनन्ददायक होता है। सच्चे प्रेम के साथ किया हुआ कोई भी कार्य ऐसा नहीं है जिसके फलस्वरूप शान्ति और आनन्द न आये। दासवत् कार्य करने से स्वार्थपरता और आसक्ति उत्पन्न होती है, इसके विपरीत अपने मन का स्वामी बनकर कार्य करने से अनासक्ति उत्पन्न होती है। जब कर्म निस्वार्थ भाव से किये जायें, किसी से प्रत्युपकार की आशा नहीं हो तो उस कर्म में किसी प्रकार की आसक्ति नहीं होगी। आसक्ति तभी आती है जब प्रत्युपकार की आशा रहती है। मनुष्य समस्त प्राणियों से निस्वार्थ प्रेम करे। ऐसा प्रेम जिसमें दुख, ईर्ष्या अथवा

 ISBN : 978-93-80216-07-2

स्वार्थपरता रूप कोई प्रतिक्रिया नहीं हो, मनुष्य तभी सम्यक् रूप से अनासक्त हो सकता है। क्लेश आसक्ति से ही उत्पन्न होता है, कर्म से नहीं। ज्यों ही हम अपने कर्म से अपने आपको एक कर डालते हैं, त्यों ही क्लेश उत्पन्न होता है, परन्तु यदि हम अपने को उससे पृथक रखें तो हमें वह क्लेश छू तक नहीं सकता।[14]

विवेकानन्द ने आसक्त और अनासक्त व्यक्ति में भेद स्पष्ट किया है। वह व्यक्ति जिसकी कर्मफल में आसक्ति है वह अपने भाग्य में आये हुये कर्तव्य पर भिनभिनाता है। वह उस कर्म को करने में अनिच्छुक होता है। इसके विपरीत अनासक्त पुरूष को सब कर्तव्य एक समान है। उसके लिये तो वे कर्तव्य स्वार्थपरता तथा इन्द्रिय परायणता को नष्ट करके आत्ममुक्ति के शक्तिशाली साधन हैं।

अतः यह तो स्पष्ट हो गया कि अनासक्ति पूर्वक कर्म करना ही कर्मयोग की शिक्षा है, किन्तु समस्त प्राणियों की कर्मफल में आसक्ति होती है। कोई भी मनुष्य बिना उद्देश्य के कर्म नहीं करना चाहता। तो इस आसक्ति को कैसे छोड़ा जा सकता है। इस जिज्ञासा का निवारण स्वामी विवेकानन्द ने किया है। उनके अनुसार आसक्ति का सम्पूर्ण त्याग के दो उपाय हैं- प्रथम उपाय उन मनुष्यों के लिये है जो न तो ईश्वर में विश्वास करते हैं और न ही किसी बाहरी सहायता में। स्वामी विवेकानन्द ऐसे मनुष्यों को अपने-अपने कौशल एवं उपायों का अवलम्बन करने के लिये कहते हैं। उन्हें अपनी ही इच्छा शक्ति, मनःशक्ति एवं विचार का अवलम्बन करके कार्य करना होगा, उन्हें दृढ़तापूर्वक कहना होगा - 'मैं अनासक्त होंऊंगा ही।[15] द्वितीय उपाय उन मनुष्यों के लिये है जो ईश्वर में विश्वास करते हैं। वे समस्त कर्मफलों को ईश्वर को अर्पित करके कर्म करते हैं, तो वे कर्मफल में कभी आसक्त नहीं होते हैं। उनका दर्शन, अनुभव, श्रवण, क्रिया सभी कुछ भगवान के लिये होता है, सबकुछ प्रभु का ही है, उन्हें ही अर्पित कर देना चाहिये-

'यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत्।
यत्तपस्यसि कौन्तेय तत्कुरूष्व मदर्पणम्।।'[16]

अतः मनुष्य अपने स्वभाव एवं रूचि के अनुसार किसी भी प्रकार से कर्मफल में आसक्ति का त्याग कर सकता है। निस्वार्थ भाव से अनासक्त होकर किया गया कर्म ही कर्मयोग के आदर्श आत्मत्याग, पूर्णता या मोक्ष की प्राप्ति करा सकता है।

यहाँ ध्यातव्य है कि विवेकानन्द के कर्मयोग का लक्ष्य मोक्ष है, आत्मत्याग है, किन्तु यह वर्तमान भौतिकतावादी युग में इस परम् लक्ष्य से अनुप्राणित नहीं भी हो, तो भी अत्यन्त प्रासंगिक है। गीता के उद्देश्य सार्वभौमिक हैं। उन्हीं को विवेकानन्द ने सरल और स्पष्ट शब्दों में विशब्द व्याख्या कर सर्वग्राह्य बना दिया है। स्वामी जी के विचार समय सापेक्ष नहीं थे, वे सार्वभौमिक और सार्वकालिक सत्य हैं। सब देशों में, सब कालों में उनकी महिमा अक्षुण्ण है। गीता के कर्मयोग की वर्तमान समय में उपादेयता के सन्दर्भ में एम. हिरियन्ना के विचार दृष्टव्य हैं– 'अब इस बात की बहुत कम सम्भावना है कि लोग अपने कर्तव्य को छोड़कर संन्यासी बन जायेंगे जैसा कि अर्जुन ने चाहा था। खतरा तो दूसरी ओर है। अपने अधिकारों को मांगने और उनका उपयोग करने की व्यग्रता में हमारे अपने कर्तव्यों को भूल जाने की आशंका है। अतः गीता के उपदेश की आवश्यकता अब भी उतनी ही अधिक है, जितनी कभी थी। समय बीतने के साथ इनका मूल्य घटा नहीं है और यही इसकी महत्ता का प्रमाण है।'[17]

यही स्थिति श्रीमद्भगवदगीता का समर्थन और उसके विचारों का विशद् प्रकाशन करने वाले स्वामी विवेकानन्द के सन्दर्भ में है। आधुनिक युग में निवृत्ति का भय तो नहीं है, लेकिन प्रवृत्ति के आधिक्य से आशंका है कि व्यक्ति स्वकीय कर्तव्यों को विस्मृत कर सकता है। आज के भौतिकतवादी युग में भौतिक सुख सम्पत्तियों के संग्रह के लिये नैतिकता पर प्रश्न चिन्ह लग रहे हैं। इस स्थिति में कर्मयोग के द्वारा

 ISBN : 978-93-80216-07-2

कर्तव्याकर्तव्य का ज्ञान परमावश्यक है। किस भावना से कर्म किये जायें कि सर्वत्र शांति और आनन्द का वातावरण रहे। निष्काम कर्मयोग मोक्ष का हेतु ही नहीं वरन् वैयक्तिक एवं सामाजिक जीवन में भी सुख शान्ति के लिये अति प्रासंगिक प्रतीत होता है। क्योंकि प्रायः मनुष्य कोई भी कार्य किसी न किसी फल की इच्छा से ही करता है, चाहे वह कर्म शुभ हो अथवा अशुभ। यदि कर्म अशुभ है तो उसके फलस्वरूप वास्तविक सुख शान्ति प्राप्त ही नहीं हो सकती है, क्योंकि वह केवल शुभ कर्मों से ही सम्भव है। शुभ कर्मों में भी यदि मनुष्य अभीष्ट फल प्राप्त करने में सफल नहीं होता है, तो उसके समक्ष दो स्थितियाँ होती हैं- प्रथम वह निराश, हताश होकर कर्म को त्याग सकता है, द्वितीय अनैतिक मार्ग की ओर अग्रसर हो सकता है, किन्तु यदि वह निष्काम भाव से, निस्वार्थ भाव से कर्म करे तो वह संवेगात्मक रूप से परिपक्व होकर फल के प्रति तटस्थ हो सकता है। जिससे स्वकर्म का समुचित फल प्राप्त नहीं होने पर भी वह विचलित हुए बिना श्रेष्ठ प्रयास हेतु तत्पर हो जाता है। अतः श्रीमद्भगवदगीता और तदानुरूप स्वामी विवेकानन्द का कर्मयोग सार्वकालिक, सार्वभौमिक और सार्वदेशिक है।

सन्दर्भ

1. स्वामी विवेकानन्द और उनका अवदान, सम्पा. स्वामी विदेहात्मानन्द, अद्वैत आश्रम, कोलकाता, 2002 पृ.-36.
2. श्रीमद्भगवद्गीता 2/50, गीता प्रैस, गौरखपुर।
3. कर्मयोग, स्वामी विवेकानन्द, रामकृष्ण मठ, नागपुर, 29वां संस्करण, 2013, पृ.-6.
4. समकालीन भारतीय दर्शन, बसंत कुमार लाल, मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली, 1991 पृ.-40.
5. समकालीन भारतीय दर्शन, बसंत कुमार लाल, मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली, 1991 पृ.-44.
6. कर्मयोग, स्वामी विवेकानन्द, रामकृष्ण मठ, नागपुर, 29वां संस्करण, 2013, पृ. -48-49.
7. कर्मयोग, स्वामी विवेकानन्द, रामकृष्ण मठ, नागपुर, 29वां संस्करण, 2013, पृ.-10.
8. कर्मयोग, स्वामी विवेकानन्द, रामकृष्ण मठ, नागपुर, 29वां संस्करण, 2013, पृ.-16.

9. कर्मयोग, स्वामी विवेकानन्द, रामकृष्ण मठ, नागपुर, 29वां संस्करण, 2013, पृ.–77.
10. श्रीमद्भगवद्गीता 3/5, गीता प्रैस, गौरखपुर।
11. श्रीमद्भगवद्गीता 2/47, गीता प्रैस, गौरखपुर।
12. कर्मयोग, स्वामी विवेकानन्द, रामकृष्ण मठ, नागपुर, 29वां संस्करण, 2013, पृ.–79.
13. कर्मयोग, स्वामी विवेकानन्द, रामकृष्ण मठ, नागपुर, 29वां संस्करण, 2013, पृ.–39.
14. कर्मयोग, स्वामी विवेकानन्द, रामकृष्ण मठ, नागपुर, 29वां संस्करण, 2013, पृ.–94.
15. कर्मयोग, स्वामी विवेकानन्द, रामकृष्ण मठ, नागपुर, 29वां संस्करण, 2013, पृ.–96.
16. श्रीमद्भगवद्गीता 9/27, गीता प्रैस, गौरखपुर।
17. भारतीय दर्शन की रूपरेखा, हिरियन्ना, एम., अनु. गोवर्धन भट, मंजू गुप्त और सुखवीर चौधरी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1965, पृ.–123

 ISBN : 978-93-80216-07-2

बहुमुखी प्रतिभा के धनी-स्वामी विवेकानन्द

डॉ॰ शालिनी वर्मा
असि. प्रो., संगीत
राजकीय स्ना॰ महाविद्यालय, नोएडा।

स्वामी विवेकानन्द बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। वे महान सन्यासी शिक्षा शास्त्री देशभक्त समाज सुधारक तथा संगीतज्ञ थे। उनके विचारों से समाज से क्रान्तिकारी परिवर्तन उपस्थित हुए।

विवेकानन्द जी का जीवन दर्शन अत्यन्त ही गौरवपूर्ण व प्रेरणादायक है। उनके अनुसार डरपोक और उदासीन व्यक्ति जीवन में कोई कार्य नही कर सकता। अतः प्रत्येक नर-नारी के लिये स्वामी जी का सन्देश था-''जीवन संग्राम में वीर बनो। कहो, सबसे कहो, कि तुम निर्भय हो। भय का त्याग करो, क्योंकि भय मृत्यु है, भय पाप है, भय अधोलोक है, भय अधार्मिकता है, भय का जीवन में कोई स्थान नहीं है।''

महान भारतीय सन्त और चिन्तन स्वामी विवेकानन्द का जन्म 1863 ई॰ में कलकत्ता में हुआ था। स्वामी जी बंगाली क्षत्रिय परिवार से थे। उनका प्रारम्भिक नाम नरेन्द्रनाथ था। स्वामी जी प्रारम्भ से ही प्रतिभाशाली थे। उनके प्रधानाचार्य हेस्टी ने कहा था-''नरेन्द्र एक वास्तविक प्रतिभाशाली युवक है। मैंने दूर की यात्रा की है परन्तु ऐसी प्रतिभा एवं सम्भावनाओं वाला लड़का कहीं भी नही मिला, यहाँ तक कि जर्मन विश्वविद्यालयों के दर्शन के छात्रों में भी कोई नही दिखा। वह जीवन में निश्चत ही कुछ कर दिखायेगा।''[1]

जब स्वामी जी दक्षिणेश्वर की यात्रा पर गए तथा इन्हें श्री रामकृष्ण परमहंस से साक्षात्कार करने का अवसर मिला। स्वामी जी को उनके उत्तरों से परम् सन्तोष की प्राप्ति हुई तथा उन्हें दिव्य शक्ति का अनुभव हुआ। इस प्रकार जीवन पर्यन्त थे उनकी शिक्षाओं का प्रसार करते रहे। 31 मई 1893 को विश्व-धर्म सम्मेलन में सम्मिलित होने के लिये

स्वामी जी अमेरिका गए थे। वहां स्वामी जी ने अपने भाषण से जनता को बहुत प्रभावित किया। उसके बाद स्वामी जी इंग्लैण्ड गए तथा पुनः अमेरिका गए परन्तु अल्पायु में ही 5 जुलाई 1902 को उनका शरीर ब्रह्मतत्व में लीन हो गया।

स्वामी जी का कहना था कि–मनुष्य के जीवन में संघर्ष की प्रधानता होनी चाहिए। जो कोई प्रकृति के विरुद्ध लड़ता है, उसमें ही चैतन्य का विकास होता है। जहां चेष्टा या पुरुषार्थ है, वहीं जीवन का चिन्ह और चेतना का प्रकाश है। स्वामी जी ने अतीत और वर्तमान, पूर्व और पश्चिम स्वप्न और यथार्थ की विरोधी महाशक्तियों में समन्वय स्थापित करने के लिये आजीवन अविराम संघर्ष किया और अन्त में इसी संघर्ष में अपने जीवन की आहुति दे दी।

शिक्षा दर्शन–विवेकानन्द जी वर्तमान शिक्षा प्रणाली के कटुतम आलोचक और व्यावहारिक शिक्षा के प्रबल समर्थक थे। उनके अनुसार वर्तमान शिक्षा केवल बाबुओं का उत्पादन कर रही है। स्वामी जी कहते थे–''हमें उस शिक्षा की आवश्यकता है जिसके द्वारा चरित्र का निर्माण होता है, मस्तिष्क की शक्ति बढ़ती है, बुद्धि का विकास होता है और मनुष्य अपने पैरों पर खड़ा हो सकता है।'' वे सैद्धान्तिक शिक्षा की तुलना में व्यावहारिक शिक्षा पर अधिक बल देते है और कहते है–''तुमको कार्य के क्षेत्रों में व्यावहारिक बनना पड़ेगा। सिद्धान्तों के ढ़ेरों ने सम्पूर्ण देश का विनाश कर दिया है'' वे चाहते थे शिक्षा व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक और आत्मिक विकास में योग दे। बालक व बालिकाओं को समान शिक्षा मिले। स्त्री शिक्षा का केन्द्र धर्म हो जिससे वे धर्मधारिणी और धर्मपालिका बनें। धार्मिक शिक्षा पुस्तकों से नही अपितु व्यवहार, आचरण और संस्कारों द्वारा दी जाये। शिक्षा से चरित्र का गठन हो, मन का बल बढ़े, बुद्धि का विकास हो और मनुष्य स्वावलम्बी बने। राष्ट्रीय और मानवीय शिक्षा घर से प्रारम्भ होनी चाहिए जहाँ बच्चे अपने सम्बन्धियों से प्रेम करना सीखें और बाद में समाज के सदस्य

 ISBN : 978-93-80216-07-2

बनकर अपने छोटे से प्रेम को विश्व प्रेम में बदल दें। स्वामी विवेकानन्द के अनुसार–''शिक्षा की व्याख्या, शक्ति के विकास के रूप में की जा सकती है। शिक्षा मनुष्य की अन्तर्निहित पूर्णता की अभिव्यक्ति है।'' उनके अनुसार मानव में कुछ शक्तियाँ विद्यमान रहती है। शिक्षा इसकी इन्हीं शक्तियों का उसमें उपस्थित गुणों का विकास करती है। शिक्षा पूर्णता बाहर से नही आती है, वरन् मनुष्य के भीतर छिपी रहती है। सब प्रकार का ज्ञान, मनुष्य की आत्मा में ही निहित रहता है।

शिक्षक के विषय में विवेकानन्द जी के विचार है–''वास्तव में किसी को किसी के द्वारा कभी शिक्षा नहीं दी गई है, हममें से प्रत्येक को अपने आप को शिक्षा देनी पड़ती है। बाह्य शिक्षक केवल ऐसे सुझाव देता है, जिनसे आत्मा कार्य करने और समझने के लिए चैतन्य हो जाती है।'' स्वामी जी ने शिक्षक को बालक का मित्र, परामर्शदाता और पथ–प्रदर्शक का स्थान दिया है। शिक्षा विधि के सम्बन्ध में प्रोफेसर लक्ष्मी नारायण गुप्त ने अपनी पुस्तक 'महान भारतीय शिक्षा शास्त्री में लिखा है–''शिक्षा की विधि में स्वामी विवेकानन्द का अपना एक विशिष्ट स्थान है। उनकी शिक्षा विधि एकमात्र आध्यात्मिक कही जा सकती है, जिसका आधार धर्म है। इस विचार से उन्होंने धर्म की विशेष पद्धति को अपनाकर शिक्षा देने के लिए कहा है।''[2]

स्वामी जी नारी शिक्षा तथा नारी स्वातन्त्रय के प्रबल समर्थक थे यदि स्त्री, शिक्षित होगी तब वह भले–बुरे की स्वयं पहचान कर सकती है।

"Educate your women first, then they will tell you what reformer are necessary for them. In matters concerning them, who are you?"[3]

देश के पुनरूत्थान के लिए स्वामी जी ने जन साधारण की शिक्षा को अनिवार्य बताते हुए कहा है ''मेरे विचार से जन साधारण की अवहेलना करना महान् राष्ट्रीय पाप और हमारे पतन का कारण है। जब तक भारत की सामान्य जनता को एक बार फिर अच्छी शिक्षा, अच्छा भोजन और

अच्छी सुरक्षा नहीं प्रदान की जायेगी, तब तक अधिक से अधिक, राजनीति भी व्यर्थ होगी। वे हमारी शिक्षा के लिए धन देते हैं, वे हमारे मन्दिरों का निर्माण करते है, पर इनके बदले में उनको ठोकरें मिलती हैं। वे हमारे दासों के समान हैं। यदि हम भारत का पुनरुत्थान करना चाहते है, तो हमें उनको शिक्षित करना होगा।'' स्वामी जी जन साधारण के लिये किस प्रकार की शिक्षा और शिक्षा की व्यवस्था चाहते है, इस विषय पर डॉ॰ कीर्ति देवी सेठ ने अपनी पुस्तक ''भारतीय शिक्षा-दर्शन'' में लिखा है-जनता को शिक्षित करने के लिए गाँव-गाँव, घर-घर जाकर ही शिक्षा देनी होगी। कारण यह है कि गाँव के बालकों को जीविकोपार्जन के हेतु अपने पिता के साथ खेत पर काम करने के लिये जाना पड़ता है। वे शिक्षा प्राप्त करने विद्यालय नहीं जा पाते हैं। इस सम्बन्ध में स्वामी जी सुझाव देते हैं कि यदि सन्यासियों में से कुछ को धर्मेतर विषयों की शिक्षा प्रदान करने के लिए संगठित कर लिया जाये तो बड़ी सरलता से घर-घर घूमकर वे अध्यापन तथा धार्मिक शिक्षा-दोनों काम कर सकते है। कल्पना कीजिए कि दो सन्यासी कैमरा, ग्लोब और कुछ मानचित्रों के साथ संध्या समय किसी गांव में पहुंचते हैं। इन साधनों के द्वारा वे जनता को भूगोल, ज्योतिष आदि की शिक्षा देते हैं। इसी प्रकार कथा-कहानियों के द्वारा दूसरे देश के सम्बन्ध में अपरिचित जनता को वे इतनी बाते बताते है, जितनी वे पुस्तक द्वारा अपने जीवन-भर में भी नहीं सीख सकते हैं। क्या इन वैज्ञानिक साधनों द्वारा आज की जनता के अज्ञानमय अन्धकार को शीघ्र दूर करने का यह एक उपयुक्त सुझाव नही है? यह सन्यासी स्वयं इस लोकसेवा द्वारा अपनी आत्मा की ज्योति को अधिक प्रदीप्त नहीं कर सकते हैं।''

आधुनिक काल में राष्ट्रीयता की भावना के प्रचार और प्रसार का श्रेय विवेकानन्द जी को जाता है। स्वामी जी के अनुसार-''आगामी पचास वर्ष के लिये हमारे मस्तिष्क से अन्य सभी देवी-देवताओं को निकल जाने दो। हमारा राष्ट्र ही हमारा एकमात्र जाग्रत देवता है। ये

 ISBN : 978-93-80216-07-2

मनुष्य और पशु, जिन्हें हम आस-पास और आगे-पीछे देख रहे है ये ही हमारे ईश्वर है और इनमें सबसे पहले पूज्य हैं हमारे अपने देशवासी।''[4]

स्वामी जी संगीत में भी निपुण थे एक बार स्वामी विवेकानन्द जी ग्वालियर आये तो शंकर राव पंडित जी (ग्वालियर घराने के प्रसिद्ध संगीतज्ञ) से मिलने व उनका गायन सुनने के लिये स्वयं शंकर राव जी के घर गए। प्रो॰ लक्ष्मण कृष्ण राव (प्रसिद्ध संगीतज्ञ ग्वालियर घराना) जी बताते है-''देशाटन के दौर में जब स्वामी जी ग्वालियर पधारे (सन् 1892 ई॰) तब इन्हें पखावज बजाने की इच्छा हुई। भक्त उन्हें पंडित परिवार के घर ले गए। पंडित शंकरराव जी और पंडित एकनाथ जी ने स्वामी विवेकानन्द जी के पखावज की संगति में गायन किया, जोकि कई घंटे चला। स्वामी जी गायन सुनकर, आत्मविभोर हो गये।''[5] स्वामी जी की दृष्टि में ज्ञान, कर्म और भक्ति का पारस्परिक सम्बन्ध है।

स्वामी जी शिक्षा-प्रणाली में आमूल परिवर्तन करना चाहते थे। स्वामी जी चाहते थे, छात्रा पाश्चात्य, ज्ञान-विज्ञान को तो सीखें परन्तु उनकी सांस्कृतिक चेतना मूलतः भारतीय ही रहे। ''मेरा विचार है कि मैं भारत में कुछ ऐसे शिक्षालय स्थापित करूँ, जहाँ हमारे नवयुवक अपने शास्त्रों के ज्ञान में शिक्षित होकर भारत तथा भारत के बाहर अपने धर्म का प्रचार कर सके। आवश्यकता है वीर्यवान, तेजस्वी, श्रद्धासम्पन्न और दृढ़ विश्वासी निष्कपट नवयुवकों की। ऐसे सौ मिल जाएं, तो संसार का कायाकल्प हो जाये।''[6] वे समाज के निम्न स्तर के व्यक्तियों को शिक्षित करने के पक्ष में थे। स्वामी जी के शिक्षा-दर्शन से प्रभावित होकर जवाहर लाल नेहरू ने लिखा है-''भारत के अतीत में अटल आस्था रखते हुए और भारत की विरासत पर गर्व करते हुए भी, विवेकानन्द का जीवन की समस्याओं के प्रति आधुनिक दृष्टिकोण था और वे भारत के अतीत तथा वर्तमान के बची एक प्रकार के संयोजक थे।''

''सुप्रसिद्ध गायिका मादाम एम्मा काल्वे ने स्वामी जी का वास्तव में

ईश्वर के साथ चलने वाले व्यक्ति के रूप में वर्णन किया है। मादाम काल्वे ने बाद में कहा था–''मैं उनकी वाणी और व्यक्तित्व से अत्यन्त प्रभावित होकर वापस लौटी। ऐसा लगता था मानो उन्होंने मेरे व्यधिग्रस्त मन की सारी कुष्ठाओं को दूर कर उसे पवित्र और शान्तिमय भावों से परिपूर्ण कर दिया है उनके चरित्र की दृढ़ता और उनके उपदेशों की पवित्रता के अमोध प्रभाव ने मेरे मन में विश्वास जगा दिया।''[7]

इस प्रकार स्वामी विवेकानन्द जी उच्च कोटि के आध्यात्मिक योगी चिन्तक और विचारक थे। उनके समान द्वितीय होने की कल्पना करना भी असम्भव है।

संदर्भ

1. विवेकानन्द, एक जीवनी–स्वामी निखिलानन्द, पृष्ठ.13
2. महान भारतीय शिक्षा शास्त्री–लक्ष्मी नारायण गुप्त
3. Our women-Swami Vivekanand , P-38
4. भारत का भविष्य–स्वामी विवेकानन्द
5. भारतीय संगीत के अमर साधक–प्रो. लक्ष्मण कथणराव पंडित, पृष्ठ.14
6. विवेकानन्द, एक जीवनी–स्वामी निखिलानन्द, पृष्ठ.250
7. विवेकानन्द, एक जीवनी–स्वामी निखिलानन्द, पृष्ठ.180

 ISBN : 978-93-80216-07-2

विवेकानन्द एवं सार्वभौमिक धर्म

डॉ॰ शकुन्तला
असि. प्रो. राजनीति विज्ञान
रा.म. महाविद्यालय, फतेहपुर

अमूल्य रत्नो से परिपूर्ण भारत वसन्धुरा का अंचल कितना पवित्र कितना सौभाग्यशाली और कितना अनोखा है यह किसी से छिपा नहीं है। यह रत्न गर्भा भारत भूमि अपने अन्दर जहाँ अंसख्य मणि मुक्तांए छिपाये बैठी है वही उसके अंचल में समय-समय पर ऐसे नवरत्न पैदा हुए है जिनकी जीवन ज्योति से जगतीताल जगमगा उठा, जो अपने लिए नहीं वरन् विश्व के लिए जिए और जिनके पवित्र तेज के समक्ष समस्त अमानवीय व अपावन विचारों ने घुटने टेक दिए। उनका जीवन आज भी सफलता के सर्वोच्च शिखर पर पहुँच कर वह ज्ञान ज्योति बिखेर रहा है जिसके प्रकाश पर संसार सब कुछ न्यौछावर करने को आतुर है। ऐसे विलक्षण पुरुष भारत में एक दो नहीं हुए हैं इनकी एक विशाल मालिका है। इस दिव्य मालिका के एक ज्योतिर्मान रत्न है स्वामी विवेकानन्द जी।

स्वामी विवेकानन्द भारत की महान आत्मा थे जिनके प्रति वर्तमान पीढ़ी ऋणी है और भावी पीढ़ी सदैव रहेगी। इन्होंने सामाजिक जड़ता और धार्मिक मूढ़ता को दूर करने का उन्होंने वैसा ही प्रयास किया जैसा किसी तालाब के सड़े हुए पानी को साफ करने के लिए किया जाता है।

विवेकानन्द ने धर्म के सम्बन्ध में कहा कि हिन्दू धर्म भारत की सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों की उपज है। समाज में धार्मिक कट्टरता के कारण अनेक कुरीतियां व्याप्त है। उनके अनुसार धर्म मानव समाज का मार्गदर्शन करता है। विवेकानन्द ने धर्म को जीवन की आवश्यकता समझा है। वस्तुतः उन्हीं चीजों को जीवन के लिए आवश्यक माना जाता है जो हमारे दैनिक जीवन एवं भौतिक जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति करता है किन्तु जब मनुष्य की आवश्यकताओं

की पूर्ति हो जाती है तब भी मानव बेचैन रहता है। मनुष्य के अन्दर कुछ ऐसी बेंचैनी रहती है जिसे भौतिक अवश्यकताओं की पूर्ति के द्वारा शान्त नहीं किया जा सकता है। यह पर धर्म जीवन की आन्तरिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता है।

धर्म उनकी दृष्टि में एक प्रबल शक्ति थी। उन्होंने कहा कि– ''मेरे धर्म का सार शक्ति है। जो धर्म हृदय में शक्ति का संचार नहीं करता वह मेरी दृष्टि में धर्म नहीं है। शक्ति धर्म से भी बड़ी वस्तु है और शक्ति से बढ़कर कुछ नहीं है।''

विवेकानन्द के अनुसार– ''मानव जाति के भाग्य निर्माण में जितनी शक्तियों ने योगदान दिया है और दे रही है उन सब में धर्म के रूप में प्रकट होने वाली शक्ति से अधिक कोई महत्वपूर्ण नहीं है। विवेकानन्द ने धर्म को सामाजिक संगठन और सहयोग की मूल शक्ति माना। धार्मिक एकता का सम्बन्ध प्रायः जातिगत, जलवायुगत तथा क्षेत्रागत एवं वंशानुगत एकता के सम्बन्धों से भी दृढ़तर होता है। यह एक सर्वविदित तथ्य है कि एक ईश्वर को पूजने वाले तथा एक धर्म में विश्वास करने वाले लोग जिस दृढ़ता तथा शक्ति से एक–दूसरे का साथ देते है वह एक ही वंश के लोगों की बात ही क्या भाई–भाई में भी देखने को नहीं मिलता।''

धर्म के सार और सर्वस्व को स्वामी विवेकानन्द ने इन शब्दों में व्यक्त किया– ''प्रत्येक आत्मा ही अव्यक्त ब्रह्म है। बाह्य एवं अन्तः प्रकृति दोनों का नियमन कर इस अर्न्तनिहित ब्रह्म स्वरूप को अभिव्यक्त करना ही जीवन का ध्येय है। कर्म, भक्ति, योग या ज्ञान के द्वारा इनमें से किसी के द्वारा या एक से अधिक के द्वारा या सबके सम्मिलन के द्वारा यह ध्येय प्राप्त कर लो और मुक्त हो जाओ। यही धर्म का सर्वस्व है। मत–मतान्तर, विधि या अनुष्ठान, ग्रन्थ, मन्दिर– ये सब गौण हैं।''

विवेकानन्द कुरीतियों के विरोधी थे। विवेकानन्द धर्म की संकीर्णता

 ISBN : 978-93-80216-07-2

और रूढ़िवादिता को समाप्त करना चाहते थे। धर्म, अंधविश्वास का विषय है जिसमें तर्क के लिए कोई स्थान नहीं है, वे इस धारणा से सहमत नहीं थे। उन्होंने धर्म को भी विज्ञान की संज्ञा दी। जिस प्रकार प्राकृतिक विज्ञान भौतिक जगत के नियमों का अनुसन्धान करता है उसी प्रकार धर्म नैतिक और तत्व मीमांसीय जगत के सत्यों से सम्बद्ध है और मनुष्य के आन्तरिक स्वाभाव के भव्य नियमों की खोज करता है। दोनों ही एकता के लिए अभियान करते है और दोनों ही- यद्यपि विभिन्न दिशाओं से-व्यक्ति और जाति के लिए मुक्ति की खोज करते है। एक अर्थ में समस्त ज्ञान ही धर्म है और एक अन्य अर्थ में समस्त ज्ञान ही विज्ञान है।

स्वामी विवेकानन्द ने धर्म का व्यापकतम अर्थ लेते हुए सार्वभौम धर्म का प्रतिपादन किया। उन्होंने कहा कि विभिन्न दर्शन पद्धतियों मे कोई विरोध नहीं है और वेदान्त अन्तिम एकता को खोजने के प्रयास के अतिरिक्त कुछ नहीं है तथा वह एक सफल प्रयास है। उन्होनें वैश्विक प्रेम प्यार और सेवा की भावना में प्रवाहित होते हुए स्पष्ट शब्दों में कहा कि धर्म विध्वंसात्मक नहीं निर्माणात्मक है। सार्वभौम धर्म को प्राप्त करने का मार्ग यह नहीं है कि किसी एक धर्म को अपनाकर दूसरे धर्म की निन्दा की जाय। प्रत्येक धर्म में अपना-अपना दर्शन, पुराण और कर्मकाण्ड है। सबका अपना-अपना महत्व है। फिर भी यह नहीं भूलना चाहिए कि मनुष्यों के स्वभाव भी भिन्न-भिन्न है अर्थात् कोई विचारक है तो कोई दार्शनिक कोई भक्तिवादी है तो कोई रहस्यवादी और कर्मकाण्डी। यही कारण है कि योग के ध्यानयोग, राजयोग, हठयोग, भक्तियोग और कर्मयोग आदि कितने ही भेद बताये गये है, जबकि लक्ष्य सबका एक ही है वह है आत्मा की प्राप्ति। स्वामी विवेकानन्द के अनुसार- ''समस्त धर्म ईश्वर की अनन्त शक्ति का केवल विभिन्न प्रकाश है और वे मनुष्यों को कल्याण साधन कर रहे है।

विवेकानन्द का स्पष्ट मत है कि सभी धर्मों में समानता को देखकर

कोई सार्वभौम धर्म मान लेना उचित नहीं है। विवेकानन्द ने सार्वभौम का अर्थ सभी धर्मों की समानता से नहीं समझा है। उनकी मान्यता है कि सर्वमान्य सार्वभौम धर्म का विचार एक कपोल कल्पना है। उन्होंने कभी ऐसा नहीं चाहा कि हिन्दू ईसाई बन जाय और ईसाई मुसलमान बन जाय या मुसलमान बौद्ध बन जाय। हर व्यक्ति को अपने धर्म के प्रति निष्ठावान होना चाहिए। दूसरे धर्म के प्रति घश्णा ने रखते हुए अपने धर्म के प्रति निष्ठा रखी जा सकती है।

विवेकानन्द के अनुसार सभी धर्मों के कर्मकांड भिन्न-भिन्न होते है। एक दूसरे के पूर्णतः अलग होते हुए भी सभी धर्मों में कुछ प्रतीक होते हैं जो 'पवित्रता' के द्योतक है। सर्वाभौम का लक्ष्य तभी प्राप्त किया जा सकता है जब हम मान कर चलें कि भिन्न-भिन्न धर्म एक ही आध्यात्मिक सत्य को प्रकाशित करते है। धर्म कोई सिद्धान्त या कर्मकाण्ड नहीं है बल्कि धर्म का सही अर्थ आत्मानुभूति में है। विवेकानन्द मानव को आध्यात्मिक मानते है। सार्वभौम धर्म का लक्ष्य इसी आध्यात्मिक को प्राप्त करना है। धर्म साधक को अपने धर्म के प्रति आस्था अवश्य होनी चाहिए। लेकिन दूसरे धर्म के प्रति घृणा या अनास्था नहीं होनी चाहिए। किसी विशेष धर्म को सत्य का अधिष्णता मान लेना सही नहीं है।

विवेकानन्द, वास्तविक धर्म तथा साम्प्रदायिक धर्म में भेद करते है। साम्प्रदायिक धर्म मानव को मानव से, एक सम्प्रदाय को दूसरे सम्प्रदाय से पश्थक करता है। सार्वभौमिक धर्म सदा वास्तविक धर्म होता है और सभी धर्मों का आदर्श सार्वभौम है।

डॉ॰ भगवान दस इस मत को मानते है कि सार्वभौम धर्म के लिए दो शर्तों का पालन करना होगा। पहली बात कि जन्म से धर्म निश्चित नहीं होना चाहिए। दूसरी बात है कि सार्वभौम धर्म सभी सम्प्रदायों को समान रूप से सन्तुष्ट करता है क्योंकि वह किसी भी साम्प्रदायिक धर्म से अधिक व्यापक है। सार्वभौम धर्म ईसाई धर्म, बौद्ध धर्म, हिन्दू धर्म के

 ISBN : 978-93-80216-07-2

तत्वों तक सीमित नहीं रहता है। सार्वभौम धर्म सभी धर्मों का योगफल भी नहीं है। यह तो उन सभी से व्यापक है।

सामन्य तत्वों के रहते हुए भी सभी धर्मों में एकता नहीं उत्पन्न हो सकती। इस्लाम 'अल्लाह' में विश्वास करता है। 'अल्लाह' को ईश्वर माना है। वह व्यक्तित्वपूर्ण ईश्वर है परन्तु इस्लाम घोर कर्मकाण्ड में विश्वास करता है। उसमें आन्तरिक तत्व की कमी है। अतः इसे हम सार्वभौमिक धर्म की संज्ञा नहीं दे सकते है।

वही बौद्ध धर्म ईश्वर में विश्वास नहीं करता। यह नास्तिक धर्म हैं यह एक जीवन दर्शन है तथा नैतिक पक्ष पर बल देता है परन्तु बौद्ध धर्म एक अत्यन्त कठोरवादी धर्म है, जो जीवन से विरक्त होने का दर्शन प्रतिपादित करता है यह भावना का दमन करता है। अतः यह भी अपने आप में पूर्ण धर्म नहीं है।

ईसाई धर्म मानव प्रेम की बात करता है परन्तु इसके मानव और ईश्वर में सदा एक लम्बी दूरी बनी रहती है। अतः यह भी सार्वभौम धर्म नहीं है।

विवेकानन्द हिन्दू धर्म के समर्थक थे। उनके अनुसार हिन्दू धर्म आन्तरिक पक्ष पर बल देता है। वेदान्त पर आधारित हिन्दू धर्म ज्ञानकाण्ड पर अधिक बल देता है तथा वैदिक कर्मकाण्ड को कम महत्व देता है। हिन्दू सहनशील है। यह सभी धर्मों को अपने अन्तर्गत समाहित करता है। हिन्दू धर्म की आधारशिला उसकी आध्यात्मिकता हैं यह निषेधात्मक या कठोरवादी धर्म नहीं है। वेदांत धर्म मानव और ईश्वर के साथ तादाम्य की बात करता है तथा सभी प्राणियों के साथ प्रेम की भी बात करता है। वेदांत धर्म ही सार्वभौम धर्म का स्थान ग्रहण कर सकता है। सभी धर्म साम्प्रदायिक तथा लौकिक तथ्यों पर आधारित होते है किन्तु वेदांत साम्प्रदायिक तथा लौकिक तथ्यों की घेराबंदी में नहीं रहता है। विवेकानन्द वेदान्त धर्म को व्यापक, सर्वमान्य एवं सहनशील

मानते है। उन्होंने वेदान्त की मूल बातों की शिक्षा दी जो सभी को मान्य है। वेदान्त धर्म मानव निर्माण का धर्म है, शक्ति का धर्म है जिसका पालन करने से मनुष्य साहसी, पवित्र, प्रेमी, सेवी, त्यागी बन सकते है।

सर जदुनाथ सरकार ने शिकागो धर्म सम्मेलन के सन्दर्भ में 1943 में अपने लेख में लिखा कि, ''तब से पचास वर्ष बीत चुके जब एक अज्ञात और विचित्र वेषधारी युवा भारतीय सन्यासी ने विश्व के सर्वाधिक प्रगतिशील लोगों के समक्ष यह दावा किया कि हिन्दू धर्म आधुनिक सभ्य जगत के सामने लज्जित, लाचारी से कांपने वाला, ईसाई मिशनरियों के आक्रमण के समक्ष पीठ दिखाने वाला दिवालोक से भयभीत एक उल्लू के समान अपने रूढ़िवाद के कोटर में रहने वाला एक अपमानित और भ्रष्ट अंधविश्वास मात्रा नहीं है। उन्होंने साहस पूर्वक यह दावा किया कि हिन्दू धर्म के पास विश्व को देने के लिए एक सन्देश है, जिसकी आधुनिक सभ्यता को नितान्त आवश्यकता है और जिसकी उपेक्षा करने में जगत का अपना ही नुकसान है।''

निष्कर्षतः हम कह सकते है कि विवेकानन्द ने सार्वभौम धर्म के द्वारा धार्मिक जड़ता को समाप्त करके धर्म एवं विज्ञान के समन्वय की पुरजोर वकालत की ताकि पाश्चात्य देशों की तरह निर्धनता को दूर करके हम अपना विकास कर सके। उन्होंने भारतीयों को सन्देश दिया कि : गर्व से कहो मैं भारतीय हूँ और भारतीय मेरे बन्धु है– चाहे उनमें कोई दरिद्र और पतित हो, चाहे कोई सम्पन्न और माननीय हो– हर कोई मेरा बंधु है। भारत की मिट्टी मेरे लिए परम स्वर्ग है, भारत के कल्याण में मेरा कल्याण है।''

सन्दर्भ :

1. आधुनिक भारतीय सामाजिक एवं राजनीतिक चिन्तन, अवस्थी एवं अवस्थी
2. राजनीति विचारक विश्वकोश, ओ0पी0 गावा
3. राजनीति चिंतन की रूपरेखा, ओ0पी0 गावा
4. आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन, डॉ॰ वी0पी0 वर्मा
5. भारतीय राजनीति चिन्तन, डॉ॰ बी0 एल फडिया

 ISBN : 978-93-80216-07-2

6. आधुनिक भारतीय रजानीतिक, जे0सी0 जौहरी चिन्तन
7. क्रानिकल, जनवरी 2015
8. योजना, जनवरी 2013
9. क्रानिकल, जून 2014

विवेकानन्द एवं शिकागो धर्म यात्रा (1893) ई॰

सचिन कुमार
शोध छात्र, इतिहास
चौ.च. सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ

गुरु रामकृष्ण ने मृत्यु से पहले एक धर्म संघ की स्थापना की थी, जिसका उद्देश्य संसार के दीन–हीन लोगों की सेवा करना था। इस संघ के प्रमुख कार्यकर्ता नरेन्द्र (विवेकानन्द) ही थे। ये बिना भोजन, बिना शयन सभी प्रकार के सांसारिक सुखों को छोड़कर गुरु के उपदेश, दर्शनशास्त्र, वेदान्त, पुराण भागवत आदि के पाठ, जप करना, कठोर तपस्या आदि में रत रहने लगे।[1] वेदान्त परम्परा में यह एक नया प्रयोग था।

नरेन्द्र अपने मित्रों के साथ मठ में रहकर उपदेश देना और वाद–विवाद आयोजित करते थे। उसी दौर में उनके साथियों की तीर्थयात्रा की इच्छा हुई पर वे बिना बताये तीर्थ यात्रा को चले गये, जिससे नरेन्द्र को दुःख तो हुआ पर तीर्थयात्रा की प्रेरणा भी हुई। अस्तु वह परिव्राजक संन्यासी के वेष में मठ छोड़कर भारत यात्रा के लिए निकल पड़े।[2]

1888ई॰ में विवेकानन्द संन्यासी वेष में उत्तर भारत के प्रमुख स्थानों जैसे वाराणसी, हरिद्वार, अयोध्या, वृंदावन, आगरा गये। हिमालय क्षेत्र में कुछ समय तक रहने के बाद पहले वे बिहार के प्रमुख नगरों, राजस्थान में जयपुर, अलवर, गुजरात,में अहमदाबाद, भोज, सोमनाथ, पोरबन्दर से द्वारिका, माहवी, पाली, टाना, काठियावाड़, बम्बई पूना होते हुए कोचीन से त्रिवेन्द्रम पहुंचे। अन्त में मदुरै से कन्याकुमारी पहुंचे। इस अविराम भ्रमण के बीच में उन्होंने भारत के विभिन्न प्रांतों के रीति–रिवाजों आचार–विचारों का परिचय पाया। इससे उन्हें भारत उन्हें भारत की जनता की निर्धनता, अशिक्षा तथा कुसंस्कारों आदि का पता लगा।[3]

 ISBN : 978-93-80216-07-2

हिमालय से लेकर कन्याकुमारी तक की यात्रा में उन्होंने देखा कि भारत दुर्भिक्ष, महामारी, दुःख, रोग, शोक से जर्जरित है। धनिक लोग गरीबों का शोषण कर रहे है। अनाहार से भूख-प्यासे लोग अन्न के लिए तरस रहे है। शिक्षा के अभाव के कारण पुरोहित वर्ग धर्म से भयभीत कर रहे है। धर्म के बारे में अज्ञान होने के कारण भारतीयों के हृदय में न आशा है न विश्वास और न ही नैतिक बल। इस सबको देखकर विवेकानन्द ने कन्याकुमारी के श्री मन्दिर के पास शिलासन पर ध्यान मग्न होकर उपरोक्त बुराईयों को दूर करने का व्रत लिया। अपनी यात्रा के बीच में जब वे खंडवा में थे तब उन्हें 1893 ई॰ में अमेरिका के शिकागो नगर में होने वाले धर्म-संसद की बैठक के बारे में पता चला उन्होंने इस सभा में भाग लेने की इच्छा व्यक्त की और धर्म संसद में भाग लेने के लिए उनके दो उद्देश्य थे हिन्दू धर्म की अन्य धर्मो के ऊपर श्रेष्ठता का प्रतिपादन करना और भारत की गरीबी के निवारण के लिए अमेरिका की समृद्धि का सहयोग प्राप्त करना।[4] विवेकानन्द के मन में गुरु रामकृष्ण की वह मौलिक शिक्षा अंकित थी कि ''सभी धर्म सत्य है, और वे ईश्वर की उपलब्धि के विभिन्न उपाय मात्र है।''[5]

''मैं सारे भारत में घूम चुका हूँ पर हे बन्धुओं यह मेरे जिए दारूण कष्ट था, मैने जनसाधारण की भयंकर निर्धनता और पीड़ी को अपनी आंखों से देखा और में अपने आंसू न रोक सका। अब मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि बिना पहले उनकी गरीबी और कष्ट दूर किये, उनमें धर्म का प्रचार करना व्यर्थ है। इसी कारण दरिद्र भारत की मुक्ति के साधन जुटाने के जिए मैं अब अमेरिका जा रहा हूँ।''[6]

31 मई 1893 ई॰ को विवेकानन्द बम्बई से अमेरिका के लिए पी0 एण्ड0 ओ0 कम्पनी के पेनिनसुलर नामक जहाज द्वारा प्रस्थान किया। जहाज बम्बई से श्रीलंका, पेनांन, सिंगापुर और हांगकांग होते हुए बढ़ चला। इसके बाद कैन्टन, नागासाकी, ओसाका, क्योटो और टोकियो देखते हुए वे स्थल-मार्ग से याकोहामा आये। याकोहामा से जहाज बैंकुवर

बन्दरगाह पहुँचा। यहाँ से रेलगाड़ी द्वारा कनाडा के बीच में से तीन दिन चलने के बाद शिकागो पहुंचे। दूसरे दिन उन्होंने विश्वविख्यात प्रदर्शनी देखी।[7]

विवेकानन्द को विदेश में लोग मनमाने ढंग से ठग रहे थे। उन्हें पैसे की भी चिन्ता होने लगीं उनकी चिन्ता तब और बढ़ गई जब उन्हें पता चला कि धर्म–महासभा सितम्बर मास के पहले प्रारम्भ न होगी। तथा जो लोग इस सभा की नियमावली के अनुसार परिचय पत्र नहीं लाये है वे सभा के प्रतिनिधि के रूप में स्थान नहीं पा सकेंगे और उस समय व्यतीत हो चुका था। अतः विवेकानन्द को हिन्दू धर्म के प्रतिनिधि के रूप में लिये जाने की कोई संभावना नही दिखाई दी। अत्यधिक व्यय से बचने के लिए विवेकानन्द बोस्टन चले गये।[8]

बोस्टन की रेलगाड़ी में मैसाचुसेट की एक धली सहयात्री महिला उनकी बातचीत से प्रभावित हुई। उसने उन्हें अपने घर आमंत्रित किया और ग्रीक सभ्यता के विद्वान, हार्वर्ड विश्वविद्यालय के प्रोफेसर जे.एच. राइट से उनका परिचय कराया।[9] धर्म महासभा की चर्चा छिड़ने पर विवेकानन्द ने अपनी कठिनाईयों का वर्णन किया। तो प्रो. राइट को आश्चर्य हुआ। उसी समय प्रो. राइट ने अपने मित्र मि. बनी के नाम एक पत्र लिखकर विवेकानन्द को दिया। अन्य बातों के साथ यह भी लिख दिया–

Here is a man who is more learned than all our learned professors put together.[10] (मेरा विश्वास है कि यह अज्ञात हिन्दू संन्यासी अकेला ही हमारे सभी पंडितो पर भारी पड़ेगा) इतना ही नही प्रो॰ राइट ने विवेकानन्द को शिकागों तक की यात्रा का रेल टिकट भी दिलाया और धर्म सम्मेलन के अधिकारियों को विवेकानन्द के रहने की व्यवस्था करने के लिए एक पत्र भी लिख संक्षेप में उनकी सारी कठिनाईयाँ दूर हो गई।[11] विवेकानन्द शिकागो आये। ट्रेन देर से पहुंची और समिति के कार्यालय का पता भी कहीं खो गया था। धर्म सभा के विशिष्ट संयोजक

 ISBN : 978-93-80216-07-2

डॉ॰ वैरोज साहब का ऑफिस ढूंढने में परेशानी होने लगी। उन्होंने लोगों से डॉ॰ वैराज का पता पूछा, परन्तु विवेकानन्द को नीग्रो समझकर वे लोग घृणा के साथ मुंह फेरकर आगे बढ़ गये, उन्हें रात्रिवास के लिए होटल भी नहीं मिला पाया। कहीं आश्रय न पाकर रेलवें स्टेशन के माल गोदाम के सामने पड़े हुए एक बड़े से पैकिंग बॉक्स (सन्दूक) में सम्पूर्ण रात्रि बितायी। शीतकाल की प्रखर वायु का तीव्र स्पर्श और पैकिंग बॉक्स के भीतर घोर अंधकार। असह्य शीत से शरीर रक्षा हेतु पर्याप्त वस्त्र भी नही थे।[12]

सारी रात के भूखे-प्यासे विवेकानन्द का शरीर साथ नही दे रहा थी। सन्यासी की तरह भिक्षा मांगी पर कई घरों से उन्हें अपमानित होकर लौटना पड़ा, कइयों ने दरवाजें ही बन्द कर दिये। काफी देर भटकने के बाद विवेकानन्द एक गली में बैठ गये। गली के सामने एक विशाल भवन था उसका द्वार खुला और एक महिला उनके पास आयी तथा उनसे पूछा कि महाशय, क्या आप धर्म-महासभा के प्रतिनिधि है? उन्होंने कहा कि हाँ, पर पता खो जाने के कारण बड़ी मुश्किल में हूँ। वह महिला उन्हें घर ले आयी और सेवकों को उनकी सेवा में लगाया। प्रातः भोजन के बाद वे स्वयं उन्हें लेकर धर्म-सभा कार्यालय में गयी। महिला का नाम था मिसेज जार्ज डब्लू॰ हैल। उनके प्रयत्न से वहाँ उन्हें सहर्ष प्रतिनिधि के रूप में स्वीकार किया गया और उन्हें अन्य प्राच्य प्रतिनिधियों के साथ ठहरा दिया गया।[13]

उनकी साहसिक यात्रा का दुःखमय अन्त होते-होते बचा। दुर्भाग्य अपना पूरा खेल दिखा चुका था। अब कर्म और दृढ़ संकल्प का समय आ गया था। कल का अजनबी भिखारी जिसके काले रंग के कारण संसार की दर्जनों जातियों के रक्त से बनी भीड़ उससे घृणा कर रही थी, आज वह प्रथम दृष्टि में अपनी सर्वोच्चतम प्रतिभा की धाक जमाना चाहता था।[14]

सोमवार 11 सितम्बर 1893 ई॰ को प्रातःकाल शिकागो आर्ट

इंस्टीट्यूट के हॉल ऑफ कोलम्बस में धर्म संसद का प्रथम अधिवेशन प्रारम्भ हुआ। ठीक 10 बजे वहाँ उपस्थित दस धर्म मतों के नाम पर दस बार घंटा ध्वनि हुई। सभापति बोनी के मतानुसार वे प्रमुख धर्म मत थे– यहूदी धर्म, इस्लाम धर्म, हिन्दू धर्म, बौद्ध धर्म ताओ धर्म, कनद्धयूशियस धर्म, शिन्तो धर्म, पारसी धर्म, कैथोलिक धर्म, ग्रीकचर्च धर्म और प्रोटेस्टेण्ट धर्म।[15]

मंच पर बीच में बैठे थे रोमन चर्च के उच्चतम अधिकारी कार्डिनल गिबन्स और उनके दाये एवं बाये दोनों ओर विराजमान थे विभिन्न प्राच्य धर्मो के प्रतिनिधिगण।[16] भारत से आये प्रतिनिधियों में ब्रह्म समाज की ओर से बंगाल के प्रतापचन्द्र मजूमदार और बम्बई के नागरकर, श्रीलंका के बौद्ध प्रतिनिधि धर्मपाल, जैन धर्मी वीरचन्द गांधी और ऐनी बेसेन्ट की थियोसोफिकल सोसाइटी के चक्रवर्ती थे।[17] इन सब के बीच विवेकानन्द बैठे थे जो किसी सम्प्रदाय विशेष के नही थे, वे तो समग्र भारतवर्ष के वैदिक धर्म के प्रतिनिधि के रूप में उपस्थित थे।[18]

अधिवेशन के प्रारम्भ में एक–एक का सभा को परिचय करा दिया गया। अपराह्न में चार और प्रतिनिधियों के लिखित भाषण हो जाने बाद विवेकानन्द को बुलाया गया। उन्होंने लिखा है– डॉ॰ बैराज ने मेरा परिचय दिया। मेरे गैरिक वस्त्रों के कारण श्रोताओ का ध्यान किंचित् आकृष्ट हुआ था, अमेरिकावासियों को धन्यवाद तथा और भी दो बातें कहकर मैंने एक छोटा सा व्याख्यान दिया जब मैंने अमेरिकावासी बहनों तथा भाईयों कहते हुए सभा को सम्बोधित किया, तो इसके साथ ही दो मिनट तक करतल ध्वनि हुई। और जब मैं अपना वक्तव्य समाप्त करके बैठा, तो भावावेश से मानो मैं अवश हो गया था। अगले दिन सभी समाचार पत्रों में छपा कि मेरा भाषण ही उस दिन सबसे अधिक मर्म स्पर्शी बन पड़ा था। अतः पूरा अमेरिका मुझे जान गया। टीकाकार श्रीधर ने सत्य ही लिखा है– मूक करोति वाचालं अर्थात् जिन प्रभु की कृपा गूँगे को भी धारा प्रवाह वक्ता बना देती है, उसकी जय हो! उसी दिन

 ISBN : 978-93-80216-07-2

से मैं विख्यात हो गया और जिस दिन मैंने हिन्दू धर्म पर अपनी वक्तव्यता पढ़ी, उस दिन तो हॉल में इतनी भीड़ हुई जितनी पहले कभी नही हुई थी।[19]

विवेकानन्द ने अपना भाषण हिन्दू धर्म से प्रारम्भ किया। उन्होंने हिन्दू धर्म को सभी धर्मो का जनक बताया क्योंकि इसी ने संसार को सहिष्णुता और सार्वभौमिकता का पाठ पढ़ाया है। हिन्दू धर्म की शिक्षा थी कि एक दूसरे को समझो और स्वीकार करो। अपने मत की पुष्टि के लिए उन्होंने गीता के पदो के उद्धरणों द्वारा यह सिद्ध कर दिया कि धर्म में साम्प्रदायिकता, संकीर्णता, धर्मान्धता आदि के लिए कोई स्थान नही है।[20]

अन्य सभी वक्ताओं ने अपने ईश्वर और अपने सम्प्रदाय बात की थी। सिर्फ विवेकानन्द ही एकमात्र ऐसे वक्ता थे जिन्होंने उन सबके ईश्वर की चर्चा की और उन सबको एक सार्वभौम सत्ता में आबद्ध कर दिया। धर्म सम्मेलन ने इस तरूण संन्यासी का अभिनन्दन किया। एक ही दिन में सारी अमेरिका में उनकी कीर्ति फैल गई।[21]

उन्होंने विभिन्न अवसरो पर जो व्याख्यान दिये, उनमें किसी भी निन्दा या समालोचना नही थी। उन्होंने किसी भी धर्म को छोटा नही कहा। उन्होंने यही कहा कि ईसाई को हिन्दू या बौद्ध तथा हिन्दू या बौद्ध को ईसाई बनने की कोई आवश्यकता नही। प्रत्येक को दूसरों की भावना आत्मसात करनी है और अपनी विशिष्टता को अक्षुण्ण रखते हुए अपने नियमों के अनुसार विकास करना है। सर्वधर्म सम्मेलन ने सिद्ध कर दिया कि धार्मिकता, पवित्रता, और उदारता किसी एक पंथ का विशेषाधिकार नही है और प्रत्येक व्यवस्था ने श्रेष्ठ चरित्र के महान नर नारी उत्पन्न किये है। प्रतिरोध के बावजूद अब प्रत्येक धर्म पताका पर अंकित होगा, ''सहायता दो, लड़ो नही, विनाश नही, सम्मिलन,'' विग्रह नही, मैत्री और शांति।[22]

अमेरिकी समाचार-पत्रों ने उन्हें सर्वधर्म सम्मेलन में महानतम व्यक्ति के रूप में स्वीकार किया। दि न्यूयार्क हेराल्ड नामक समाचार पत्रा ने लिखा था-विवेकानन्द निश्चित ही धर्ममहासभा के महानतम व्यक्ति है। उनका व्याख्यान सुनने के बाद हम यह अनुभव करते है कि भारत जैसे ज्ञानी राष्ट्र में मिशनरी भेजना कितनी मूर्खता है।[23]

एक बार रात्रि में दु:ख से वे अभिभूत हो उठे और पलंग से धरती पर लेट गये तथा रो-रोकर कहने लगे- माँ! मैं इस नाम यश को लेकर क्या करूँ? जबकि मेरे देशवासी घोर निर्धनता में डूबे हुए है। हम गरीब भारतवासी ऐसी बुरी दशा में पहुंच गए है कि मुट्ठी भर अन्न के अभाव में लाखों लोग प्राण त्याग देते है और यहाँ अमेरीका में लोग अपने व्यक्तिगत सुख-स्वाच्छन्द्य के लिए लाखों रुपये व्यय करते है। भारत की जनता को कौन उठायेगा? कौन उनके मुख में अन्न देगा? मैं उनकी किस प्रकार सेवा कर सकता हूँ? माँ मेरा पथ-प्रदर्शन करो।[24]

विवेकानन्द ने अमेरीकावासियों को हिन्दुओं के बारे में बताया कि हिन्दू लोग तुम्हें पापी कभी नही कहते। इस पृथ्वी पर पाप नाम की कोई चीज नही है। यदि कोई पाप है तो वह है मनुष्य को पापी कहना। तुम सर्व शक्तिमान आत्मा हो, शुद्ध, मुक्त, महान। उठो, जागो, और अपने स्वयं को प्रकट करने के लिए चेष्टा करो।[25]

इण्डियन मिरर पत्रिका में लिखा था-विवेकानन्द के बड़े-बड़े चित्र शिकागों नगर में रास्तों पर लटकाकर रखे गये और उनके नीचे लिखा था संन्यासी-विवेकानन्द। विभिन्न सम्प्रदायों के हजारों व्यक्ति इन चित्रों के प्रति भक्ति के साथ समान प्रदर्शित करते हुए चले जा रहे है।[26]

प्राय: डेढ़ सौ सालों से ईसाई धर्म प्रचारक संसार में हिन्दुत्व की जो निन्दा फैला रहे थे, उस पर विवेकानन्द के कृतित्व ने रोक लगा दी और जब भारतवासियों ने यह सुना कि सारा पश्चिमी जगत् विवेकानन्द के मुख से हिन्दुत्व का आख्यान सुनकर गदगद हो रहा है तब हिन्दू भी

 ISBN : 978-93-80216-07-2

अपने धर्म व संस्कृति के गौरव को अनुभव करने लगे। अंग्रेजी पढ़े बुद्धिवादियों ने जब देखा कि स्वयं यूरोप और अमेरिका के नर नारी विवेकानन्द के शिष्य बनकर हिन्दुत्व की सेवा में लगते जा रहे है, तब उनके भीतर भी ग्लालि की भावना जगी और बकवास छोड़कर वे भी स्थिर हो गए।[27]

भगिनी निवेदिता लिखती है– शिकागो धर्म–संसद में जब विवेकानन्द ने अपना भाषण आरम्भ किया, तो उनका विषय था हिन्दुओं के प्राचीन धार्मिक विचार, पर जब उनका भाषण समाप्त हुआ तो आधुनिक हिन्दू धर्म की प्रविष्टि हो चुकी थी।[28]

धर्म महासभा के विज्ञान विभाग के अध्यक्ष मि0 मर्विन मेरी स्नेल ने लिखा कि पार्लियामेन्ट पर एवं सामान्य तौर पर अमरिकी जनता पर जितना गहरा प्रभाव हिन्दू धर्म का पड़ा उतना किसी भी धर्म का नही। हिन्दू धर्म के सबसे महत्वपूर्ण एवं विशिष्ट प्रतिनिधि स्वामी विवेकानन्द, जो वास्तव में पार्लियामेन्ट में निःसंदिग्ध रूप से सर्वाधिक लोकप्रिय एवं प्रभावी व्यक्ति थे। सभी अवसरों पर, अन्य किसी भी ईसाई वक्ता की अपेक्षा उन्हें अधिक सम्मान और सराहना मिली। कट्टर से कट्टर ईसाई समर्थक ने उनके सम्बन्ध में यही कहा कि वे सचमुच मनुष्यों में राजा है।[29] गीता में भी श्रीभगवान् ने स्वयं को मनुष्यों में महाराजा कहा है– नराणां च नराधिपम्।[30]

27 सितम्बर 1893 को धर्म महासभा के अन्तिम दिन उन्होंने कहा कि इस धर्म महासभा ने यदि जगत को कुछ दिखया है तो वह यही कि पवित्रता, शुद्धता और दयाशीलता किसी एक विशेष सम्प्रदाय की सम्पत्ति नही है, तथा प्रत्येक धर्म में महान और सच्चरित्र नर नारियों का जन्म हुआ है। शीघ्र ही हम देखेंगे कि सारे प्रतिरोधों के बावजूद हर धर्म की पताका पर लिखा होगा– युद्ध नही– सहायता, विनाश नही– ग्रहण, मतभेद और कलह नही– मिलन और शान्ति। विवेकानन्द के इन वाक्यों का बड़ा ही महत्वपूर्ण परिणाम हुआ। उन्होंने वेदान्त की सार्वभौमिक

वाणी का प्रचार किया था। जिसके फलस्वरूप आर्य धर्म, आर्य जाति और आर्य भूमि संसार की नजरो में पूजनीय हो गयी। हिन्दू जाति पददलित है, पर घृणित नही, दीन–दु:खी होने पर भी बहुमुल्य पारमार्थिक सम्पत्ति की अधिकारिणी है और धर्म के क्षेत्रा में जगतगुरु होने के योग्य है। अनेक शताब्दियों के बाद विवेकानन्द ने हिन्दू जाति को अपनी मर्यादा का बोध कराया, हिन्दूधर्म को घृणा और अपमान के पंख से उबार कर उसे विश्व सभा में अति उच्च आसन पर विराजमान कराया।[31]

धर्म संसद में विवेकानन्द को देखकर जो प्रभाव ऐनी बेसेन्ट पर पड़ा, उसे व्यक्त करते हुए वे लिखती है, ''एक प्रभावी व्यक्तित्व पीले और नारंगी रंग के वस्त्रों मे सुशोभित शिकागो के बोझिल परिवेश में लोग उन्हें योद्धा संन्यासी कहते थे। भारत का यह दूत अपनी मातृभूमि का संदेश लेकर आया। एक व्यक्ति उस दिन बोल उठा– हम उस देश की जनता के लिए मिशनरी भेजते है, उचित तो यह होगा कि वे लोग हमारे पास अपने मिशनरी भेजे।''[32]

विवेकानन्द वर्ल्ड फेयर के उपलक्ष्य में आयोजित धर्म संसद में उपस्थित हुए और उन्होंने अपने सब धर्मो की एकता का संदेश और मानव सेवा ही ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ उपासना है, ऐसा अपनी सरल नैतिकता के द्वारा सभी को अपने वशीभूत कर लिया। भारत लौटकर उन्होंने अपने देशवासियों के सम्मुख ऐसे शक्तिसम्पन्न धर्म का उपदेश दिया, जैसा कि वैदिक काल से लेकर आजतक किसी ने उन्हें नही दिया था।[33]

विवेकानन्द की विजय पर सारे भारत में उल्लास की लहर फैल गयी। स्वामीजी की इस सफलता का प्रभाव हमारे प्रत्येक राष्ट्रीय उद्यम और कर्म पर पड़ा। केवल धर्म और आध्यात्म के में नहीं, वरन् आर्थिक और सामाजिक जीवन पर भी उसका प्रभाव बड़ा ही व्यापक हुआ था। और उसी दिन से हमारा राष्ट्र सर्वतोमुखी विकास के पथ पर आगे बढ़ चला।

 ISBN : 978-93-80216-07-2

सन्दर्भ

1. राजेन्द्र प्रसाद गुप्त : स्वामी विवेकानन्द व्यक्ति और विचार, पृ. 8, प्रकाशन राधा पब्लिकेशन, दरियागंज, नई दिल्ली- 110002, प्रथम संस्करण 1997
2. रोमां रोलां : विवेकानन्द की जीवनी, अनु.- डॉ॰ रघुराज गुप्त, पृ.16, प्रकाशक अद्वैत आश्रम प्रकाशन विभाग 5 डिही एण्टाली राड, कोलकाता
3. राजेन्द्र प्रसाद गुप्त : स्वामी विवेकानन्द- व्यक्ति और विचार, पृ. 9
4. वही, पृ. 9,
5. आचार्य डॉ॰ रमेश कृष्ण : ज्ञान पयोधि स्वामी विवेकानन्द, पृ. 55
6. ये शब्द स्वामी ज्ञानेश्वरानन्द द्वारा लिपिबद्ध किये गये तुरीयानन्द के संस्मरण से लिए गये है जो 31 जनवरी 1926 डवतदपदह ैजंत में प्रकशित हुए।
7. वमी अपूर्वानन्द : स्वामी विवेकानन्द संक्षिप्त जीवनी तथा उपदेश, पृष्ठ 43-44, प्रकाशत- स्वामी ब्रहमस्थानन्द अध्यक्ष, रामकृष्ण मठ रामकृष्ण आश्रम मार्ग, धन्तोली, नागपुर-440012
8. आचार्य डॉ॰ रमेश कृष्ण : ज्ञान पयोधि स्वामी विवेकानन्द, पृ. 56
9. रोमां रोलां :विवेकानन्द की जीवनी, अनु.- डॉ रघुराज गुप्त, पृ.30,
10. R.C. Majumdar : Swami Vivekananda Centenary Memorial Volume, P. 82, published by Swami Sambuddhananda General Secretary, Swami Vivekanand Centenary, 163, Lowar Cirular Road, Calcutta.
11. स्वामी अपूर्वानन्द : स्वामी विवेकानन्द संक्षिप्त जीवनी तथा उपदेश, पृ. 45
12. आचार्य डॉ॰ रमेश कृष्ण : ज्ञान पयोधि स्वामी विवेकानन्द , पृ. 60
13. R.C. Majumdar : Swami Vivekananda Centenary Memorial Volume, P. 83.
14. रोमां रोलां : विवेकानन्द की जीवनी, अनु.- डॉ॰ रघुराज गुप्त, पृ. 31,
15. आचार्य डॉ रमेश कृष्ण : ज्ञान पयोधि स्वामी विवेकानन्द, पृ. 62
16. स्वामी अपूर्वानन्द : स्वामी विवेकानन्द संक्षिप्त जीवनी तथा उपदेश, पृ. 47,
17. R.C. Majumdar : Swami Vivekananda Centenary Memorial Volume, P. 84
18. स्वामी अपूर्वानन्द : स्वामी विवेकानन्द संक्षिप्त जीवनी तथा उपदेश, पृ. 47
19. विवेकानन्द साहित्य खंड-2 पृ. 309-10
20. रोमां रोलां : विवेकानन्द की जीवनी, अनु.- डॉ॰ रघुराज गुप्त, पृ. 32,
21. स्वामी अपूर्वानन्द : स्वामी विवेकानन्द संक्षिप्त जीवनी तथा उपदेश, पृ. 49
22. रोमां रोलां : विवेकानन्द की जीवनी, अनु.- डॉ॰ रघुराज गुप्त, पृ. 33

23. R. C. Majumdar : Swami Vivekananda Centenary Memorial Volume, P. 83
24. Life of Swami Vivekananda published by the Advaita Ashram, Mayawati, 2nd edn. Vol-I. p. 383-84
25. सत्येन्द्रनाथ मजूमदार : विवेकानन्द चरित्, पृ. 230, प्रकाशन रामकृष्ण आश्रम, धन्तोली, नागपुर, 1977
26. वही, पृ. 232
27. रामधारी सिंह दिनकर : संस्कृति के चार अध्याय, पृ. 499
28. डॉ॰ ऐनी बेसेन्ट : दि लाइफ ऑफ स्वामी विवेकानन्द, पृ. 312, ईस्टर्न एंड वेस्टर्न डिसाइपिल्स, 1949
29. रामधारी सिंह दिनकर : संस्कृति के चार अध्याय, पृ. 316
30. गीता 10/27
31. स्वामी अपूर्वानन्द : स्वामी विवेकानन्द संक्षिप्त जीवनी तथा उपदेश, पृ. 50
32. डॉ॰ ऐनी बेसेन्ट : दि लाइफ ऑफ स्वामी विवेकानन्द, पृ. 312, ईस्टर्न एंड वेस्टर्न डिसाइपिल्स, पृ. 316-17
33. विल ड्यूरेन्ट : दि स्टोरी ऑफ सिविलाईजेशन, खंड-1, पृ. 618

 ISBN : 978-93-80216-07-2

स्वामी विवेकानन्द के जनसंस्कृति एवं दलित चेतना सम्बन्धी विचार : एक समग्र अवलोकन

डॉ॰ लक्ष्मीना भारती
असि. प्रो.-राजनीति शास्त्र
रा.म.महाविद्यालय, फतेहपुर

किसी भी समाज में लोक तत्वों की जितनी अधिक प्रमुखता होगी, वह उतना ही जनोन्मुखी और मानवीय मूल्यों के पैरोकार की पहचान वाला समाज कहा जायेगा। जनसंस्कृति या लोक संस्कृति से तात्पर्य उस संस्कृति से है जिसमें जीवन का सांगोपांग ढाँचा सन्निहित हो। समाज में रहने वाले सभी वर्गो की आशा-आकांक्षा और सुख-दुःख की भावना उस संस्कृति का आवश्यक ही नहीं अपितु नितांत जरूरी तत्व भी हो। वह बहुत स्पष्ट और खुले रूप में जन-गण-मन की सहज स्वीकृति तभी मानी जायेगी जब वह समाज के सबसे निचले पायदान पर बैठे उस व्यक्ति को भी समान रूप से अपने तात्विक वृत्त में शामिल करे जो कभी इस वृत्त के आस-पास आने की हिमाकत भी नहीं कर पाया है। हमारे भारतवर्श में धर्म और संस्कृति की प्रारम्भ से ही अलग-अलग अवधारणा रही है। किसी ने संस्कृति को केवल सभ्य लोगों की बपौती मानी तो किसी ने संस्कृति को अनेक विचारधाराओं, विश्वासों, अभ्यासों और ऐतिहासिक अनुभवों की संचित निधि कहा है। भारतेन्दु ने ''टका सेर भाजी, टका सेर खाजा'' कहकर जिस अविवेकपूर्ण बाजार व्यवस्था की ओर संकेत किया था आज तो चारों ओर उसकी मंडी सजी हुई है।

वर्तमान में किसी भी अंधकार में केवल विवेक और आदर्श ही हमें रोशनी और राह दिखा सकती है। वस्तुतः आध्यात्मिक समानता ही हमारे राष्ट्रीय जीवन के उज्जवल भविष्य का आधार स्तम्भ है। यहाँ सभी कौमों के लोग एक साथ मिलकर निवास करते हैं। भारत का जीवन दर्शन वेदांत के अद्वैत शब्द में समाया है तो उसका आधारभूत अर्थ गीता

के 'समम् सर्वेषु भूतेशु' शब्द में जीवमात्रा में एकत्व और ईश्वरत्व ही वेदांत की नींव है तब घृणा या द्वेष किसका? स्वामी विवेकानंद जी का कहना था कि, ''मेरे सपनों के हिन्दुस्तान की आत्मा वेदांत होगी, तो शरीर इस्लाम होगा। शरीर के बिना आत्मा के अस्तित्व का विचार कोई भी नहीं करेगा।'' उनके अनुसार मानव देह ही सर्वश्रेष्ठ देह है एवं मनुष्य ही सर्वोच्च प्राणी है, क्योंकि इस मानव देह तथा इस जन्म में ही हम इस सापेक्षित जगत से सम्पूर्णतया बाहर हो सकते हें। निश्चय ही मुक्ति की अवस्था प्राप्त कर सकते हैं और यह मुक्ति ही हमारा चरम लक्ष्य है। दरअसल स्वामी जी के मुक्ति का यह चरम लक्ष्य वैयक्तिक मुक्ति का नहीं बल्कि सामाजिक विभेद की मुक्ति से है। सामाजिक कुबंधनों की मुक्ति से है। सदियों की सामंती सोच और अहमन्यता से मुक्ति है। स्वामी विवेकानंद जी का मानना था कि हमने धर्म, संस्कृति और अध्यात्म की जो भेदजन्य सोच निर्मित कर ली है हमें उससे आगे बढ़कर जन कल्याण और समतामूलक समाज के निर्माण की चेष्टा करनी है। उनका मानना था कि श्रेष्ठ महापुरूष वही है जो श्रेष्ठ विचारों का चिंतन करते हुए जगत के लिए उपयोगी साबित होते हैं। उनका मानना है कि सही मायनों में आध्यात्मिक दृष्टि विकसित हो जाने पर किसी विशिष्ट धर्म संघ में बना रहना अवांछनीय हो जाता है। उससे बाहर निकलकर मुक्त वायु में विचरण करो, यहाँ भी मुक्ति का संदर्भ वही है कि संकीर्णताओं से मुक्ति। जातीय और धार्मिक विचारधाराओं से छुटकारा। उनका कहना है कि– ''मत भूलना कि नीच, अज्ञानी, दलित, मेहतर तुम्हारा रक्त और तुम्हारे भाई हैं। गर्व से बोलो कि मैं भारतवासी हूँ और प्रत्येक भारतवासी मेरा भाई है। बोलो कि अज्ञानी भारतवासी, ब्राह्मण भारतवासी, दलित भारतवासी सब मेरे भाई हैं।'' स्वामी विवेकानंद जी ने भारत में व्याप्त दो बुराइयों की ओर निंदा की, पहली महिलाओं पर अत्याचार और दूसरी जातिवादी चक्की में दलितों और गरीबों का शोषण। उन्होंने देखा कि कोई नियति के चक्र से एक बार निम्न जाति

 ISBN : 978-93-80216-07-2

में पैदा हो गया तो उसके उत्थान की कोई आभा नहीं रहती। उन्होंने यह बात उस समय कही जब निम्न जाति के लोग सड़क से गुजर भी नहीं सकते थें। स्वामी जी ने जाति आधारित इस भीषण दुर्दशा को देखकर अति स्वर में कहा था ''आह! यह कैसा धर्म है जो गरीबों के दु:ख दूर न कर सके बल्कि उन्हें अधिक दु:ख भोगने के लिए मजबूर कर दे। उन्होंने कहा पेड़ों और पौधों तक को जल देने वाले धर्म में जाति भेद का कोई स्थान नहीं हो सकता। यह विकृति धर्म की नहीं बल्कि हमारे स्वार्थों की हैं। उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा कि जाति प्रथा की आड़ में शोषण का चक्र चलाने वाले धर्म को बदनाम न करें। उन्होंने जातिवाद को समाप्त करने के लिए उपदेश देने के बजाय एक व्यावहारिक विचार रखा। उन्होंने कहा कि जाति भेद को दूर करने के लिए उच्च वर्गों को उदार बनकर नीचे उतरने का मैं कोई उपदेश देने को मैं व्यावहारिक नहीं मानता। मेरी मान्यता है कि उन्हें कोई उपदेश देने के बजाय यह उपयुक्त है कि निम्न जातियों के लोगों को इतना ऊँचा उठाओं कि वे उच्च वर्णों के बराबर खड़े हो जाएँ। उन्हें दया नहीं सामर्थ्य प्रदान करो। वास्तव में स्वामी जी के इन क्रांतिकारी विचारों को थोड़ा बहुत भी आगे बढ़ाया जाता तो आज समाज की तस्वीर ही कुछ और होती। स्वामी जी एक सुखी और समृद्ध भारत के निर्माण के लिए बेचैन थे और इसके लिए वे जाति भेद को सबसे बड़ा रोड़ा मानते थे। वे समाज में समता के पक्षधर तो थे ही इसके लिए जिम्मेदार लोगों के प्रति उनके मन में गहरा रोष भी था। उनका स्पष्ट उद्घोष था कि जब तक करोड़ो लोग गरीबी, भूखमरी और अज्ञानता का शिकार हो रहे हैं मैं हर उस व्यक्ति को शोषक मानता हूँ जो उसकी ओर जरा भी ध्यान नहीं दे रहा है। स्वामी जी के मन में समात के लिए वर्तमान समाजवाद की अवधारणा से भी अधिक आग्रह था। उनका कहना था कि ''समता का विचार सभी समाजों का आदर्श रहा है। यह सारी मानवता का भी आदर्ष है। सम्पूर्ण प्राणीमात्रा के विरुद्ध उठाया गया कोई भी कदम एक भयानक भूल है

और ऐसी किसी भी जाति, राष्ट्र या समाज का अस्तित्व कायम नहीं रह सकता जो इसके आदर्शों को स्वीकार कर लेता। अज्ञान, विषमता और महत्वाकांक्षा ये तीन बुराइयाँ हैं जो मानव के दुःखों की कारक हैं।''

11 सितम्बर 1893 को शिकागो में आयोजित विश्व धर्म सम्मेलन में उन्होंने तत्कालीन भारत के उपेक्षित प्रश्नों को उठाया तथा दुनिया में भारतीय संस्कृति की ध्वजाशत्रुता या विजय की भावना से नहीं बल्कि विश्व बंधुत्व और समानता के आधार पर फहराने की वकालत की। उन्होंने सभी तरह की वर्जनाओं और कुण्ठाओं को छोड़कर निर्णायक रूप से उस आधुनिक समाज की कल्पना की जहाँ किसी प्रकार का भेदभाव न हो तथा सभी को समान अधिकार प्राप्त हो। स्वामी विवेकानंद एक ऐसे विचारक और दार्शनिक थे जिन्होंने आधुनिक समाज की समाजशास्त्रीय व्याख्या बिल्कुल नये तरीके से की जो परम्परागत सोच से भिन्न थी। यह महज संयोग नहीं था कि भारत से अत्यधिक प्रेम करने वाले उस साहसी संत ने अमेरिका की यात्रा केवल इसलिए नहीं की कि उन्हें धर्म संसद में धार्मिक कर्मकाण्डों की व्याख्या करनी थी बल्कि वे संसार की उस गरीब और लाचार, असहाय जनता की समस्याओं के समाधनपरक हल की खोज और एक लक्ष्योन्मुखी सामाजिक विचार दुनिया के सामने रखने गये थे जो भले ही उस समय अव्यवहारिक लगता हो किन्तु भविष्य के गर्भ में किसी न किसी रूप में उसका बीजारोपण हो गया था। समाज में फैली तमाम कुरीतियों और बुराइयों को, जिनमें जातिवाद प्रमुख था को वे मानवता और धर्म के घोर विरोधी कहते थे।

आज हम जिस दलित उत्थान की बात करते हैं उसकी बुनियाद को विवेकानंद बहुत पहले ही अपने विचारों के इस्पात से मजबूती प्रदान कर चुके थे। वास्तव में भारतीय राष्ट्रवाद के प्रवाह में बढ़ते हुए विवेकानंद एक प्रतिधारा की तरह हैं क्योंकि वे प्रचलित पारम्परिक और ऐतिहासिक विचारधाराओं के खिलाफ संघर्ष के लिए भी तैयार रहते थे।

 ISBN : 978-93-80216-07-2

स्वामी विवेकानंद के विचार में भारत आदर्श और व्यवहार की विसंगति का देष भी रहा है। इसलिए वे अस्पृश्यता जैसी घातक अन्यायपूर्ण अर्थहीन प्रथा के प्रति असहिष्णु थे क्योंकि भारतीय समाज के इन लक्षणों ने ही सदियों से भारत के सामाजिक इतिहास को कलंकित करने का काम किया है। उनका कहना था कि क्या तुम समझते हो कि मैं जातिबद्ध, रूढ़िग्रस्त, करुणाहीन, पाखण्डी, कायरों में से एक इकाई की तरह पैदा होकर मर जाने के लिए हूँ, जिन्हें तुम केवल शिक्षित हिन्दुओं में पाते हो। पुरातनपंथी, रूढ़िग्रस्त समझ पर कटाक्ष करते हुए उन्होंने कहा, ''भारत का धर्म हो गया है ''मतहुओवाद।'' उन्होंने अस्पृश्यता को हिन्दुत्व के पतन की पराकाष्ठा के रूप में देखा है। अपने युग में वक्त से पहले कह पाने का साहस उस कथन की भविष्यता को भी उकेरता है। स्वामी विवेकानंद समाज विरत साधु नहीं थे बल्कि वे वास्तव में समाज साधक संत थे। दलित समाज की पीड़ा और उसके प्रति उनका विद्रोह उनकी प्राथमिक करुणा का तार्किक दर्द था। इसलिए वे बार-बार यह भी कहते हैं कि ''मतहुओवाद'' एक मानसिक व्याधि है। सदियों से चली आ रही एक परम्परा के विरोध में इस तरह की साहसिक स्थापना कई मायनों में खतरनाक भी थी। इसलिए विवेकानंद कहते हैं- ''ऐसी प्रथा को लात मारकर बाहर निकालो।'' वे जाति व्यवस्था के घिनौनेपन के खिलाफ जीवन भर संघर्ष करते रहे। विवेकानंद ने स्पष्ट कहा था कि दलित और आदिवासी अपने राजनैतिक अधिकार माँगेंगे नहीं, छिनकर लेंगे। उनका रास्ता हिंसक नहीं, वैचारिक क्रांति का होगा। उन्हें सत्ता और हुकुमत उच्च वर्गो द्वारा दी नहीं जायेगी, बल्कि वे स्वयं अधिकार सहित हासिल कर लेंगे। स्वामी विवेकानंद जी के विचार आज भी उस प्रकाश स्तम्भ की तरह हैं जो त्रासद स्थितियों के खिलाफ निरंतर रोशनी की एक राह दिखा रहा है। विवेकानंद ब्राह्मणवाद, धार्मिक आडम्बर कठमुल्लापन और रूढ़ियों के सख्त खिलाफ थे। उन्होंने धर्म को मनुष्य की सेवा के केन्द्र में रखकर ही आध्यात्मिक चिंतन किया

था। उन्होंने यहाँ तक कह दिया था कि इस देश के 33 करोड़ भूखे, दरिद्र और वंचित लोगों को देवी–देवताओं की तरह मंदिरों में स्थापित कर दिया जाय। एक बार स्वामी विवेकानंद ने जोर देकर कहा था– ''जब तक कि करोड़ो व्यक्ति भूखे और अशिक्षित हैं तब तक मैं उस प्रत्येक व्यक्ति देशद्रोही मानता हूँ जो उनके ही धन से पढ़कर उनकी ओर कोई ध्यान नहीं देता।''

आज के संदर्भ में स्वार्थ केन्द्रित व्यक्तिवाद के स्थान पर व्यक्ति के विकास और समूह के विकास के नये सृजनात्मक सामंजस्य को प्रोत्साहित करने वाले स्वामी विवेकानंद के उस जीवन दर्शन को साथ लेकर चलने वाला है। सुमित्रानंदन पंत ने एक जगह लिखा है कि ''यदि मुझे सामंतीयुग की संस्कृति के पुनर्जागरण पर विश्वास होता तो जनता के संस्कारों के प्रति मेरी हार्दिक सहानुभूति भी होती। तब मैं लिखता इस तालाब में काई लग गई है, इसे हटाना भर है। इसके अंदर का जल अभी निर्मल है, जो पुनर्जागरण की ओर इंगित करता है। पर मैंने लिखा है इस तालाब का पानी सड़ गया है, इस गंदगीपूर्ण जल से काम नहीं चलेगा। उसके भविष्य के लिए उपयोगी नया जल भरना पड़ेगा। जो सांस्कृतिक क्रांति की ओर लक्ष्य करता है। विवेकानंद जी ने शोषित वर्ग में आत्मबल जागृत करने पर जोर दिया था क्योंकि आत्मबल से विश्वास की भावना व्यक्ति में निहित होगी। वह अपना तथा राष्ट्र का उत्थान कर सकेगा।

आज भारत जैसे तमाम देशों को ऐसे विचारकों, चिंतकों और समाज विज्ञानियों की जरूरत है जो नये युग की चुनौतियों को परिभाषित कर सकें। वास्तव में जिस तेजी से पुरानी अवधारणाएँ टूटती हैं उस तेजी से नई अवधारणाओं का सृजन नहीं हो पाता। आज जरूरत है कि जो भी नवीन सकारात्मक विचार उभर कर आ रहे हैं उन्हें बिना किसी पूर्वाग्रह के ग्रहण करें और ऐसा ही स्वामी विवेकानंद जी मानते थे। इस नई संस्कृति की तलाश में हमें सभी प्रकार की संकीर्णताओं से ऊपर उठना

 ISBN : 978-93-80216-07-2

होगा और ऐसे संकीर्ण राष्ट्रवाद या पुनरुत्थानवाद से भी हमें मुक्त होना होगा जो पूर्व और पश्चिम की 'डाइकोटॉमी' या विभेद को अति कट्टर रूप में देखता है। यह संकीर्ण राष्ट्रवादी दृष्टिकोण नैतिक बल या साहस से नहीं उपजा है, यह अपनी हीनता की प्रवृति से जन्मी आत्मरक्षात्मक प्रतिक्रिया का फल है। वह उतना ही खतरनाक और हानिकारक है जितना 'सर्वदेशीयता' या 'कॉस्मोपोलिटेनिज्म' का छिछला सिद्धान्त। जो अपनी देशीय या जातीय जड़ों को काटकर एक ऐसी साजिश में भागीदार हो जाता है जहाँ विचारों का आदान-प्रदान नहीं, दो तरफा संवाद नहीं, एक दूसरे के लिए सम्मान नहीं, स्वीकार की तत्परता के साथ-साथ अस्वीकार का साहस नहीं और जहाँ सांस्कृतिक सहयोग वास्तव में सक्षम द्वारा अक्षम को अपने त्यागे हुए वस्त्रों से सँवारने और अपने उच्छिष्ट तत्वों को पिछड़े लोगों के योग्य मानसिक भोजन के रूप में प्रस्तुत करने का दुस्साहस या कुप्रयास मात्रा है। संस्कृति और धर्म को सामयिक संदर्भों में परिभाषित कर नये संगमों तक ले जाना होगा। जो वास्तव में विवेकानंद जी चाहते थे। स्वामी जी ने एक ऐसे समाज की कल्पना की जहाँ विषमताओं का अभाव हो और रूढ़ियों से मुक्त परम्परा और संस्कृति हो।

संदर्भ

1. डॉ॰ वर्मा, वी.पी. : आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल प्रकाशक, 1971
2. टण्डन, एस.सी. : भारत के गौरव रत्न, पलक प्रकाशन, इलाहाबाद, 2007
3. डॉ॰ सिंह यादव, वीरेन्द्र : स्वामी विवेकानंद तेजस्वी विचारों के शिखर पुरुष
4. कुमार, अनिल : स्वामी विवेकानंद, किताब घर, दिल्ली, 1975
5. जैन, यशपाल : राष्ट्र की विभूतियाँ, रसभारती प्रकाशन, मुरादाबाद, 1977
6. डॉ॰ मिश्र, आर.डी. : नव वेदांत और स्वामी विवेकानंद, विश्वविद्यालय प्रकाशन, सागर, 2005

विवेकानन्द : एक वैचारिक व्यक्तित्व

शिखा गोयल
शोध छात्रा

एस. डी. कॉलेज गाजियाबाद

भारत को पुण्यभूमि पर डेढ़ शताब्दी पूर्व कोलकाता में एक बालक का जन्म हुआ जिसने अपने दिव्य प्रतिभा से भारत भूमि को आलोकित कर दिया। कालान्तर में आध्यात्मिक राष्ट्रवाद की महान विभूति देश प्रेम का पुंज यह बालक स्वामी विवेकानन्द के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

स्वामी विवेकानन्द भारतीय इतिहास का एक ऐसा विलक्षण व्यक्तितव थे जिन्होंने राष्ट्र जीवन की विभिन्न दिशाओं के असंख्य लोगों को प्रेरित अथवा प्रभावित किया और आज भी कर रहे है। स्वामी विवेकानन्द के आध्यात्मिक आचार्य तथा दिव्य व्यक्तित्व स्वामी रामकृष्ण परमहंस ने उनके विषय में पूर्व में ही भविष्यवाणी कर दी थी कि **''नरेन्द्र अपनी आध्यात्मिक एवं बौद्धिक प्रतिभा से विश्व की मौलिक आधारशिला को स्पंदित कर देगा''।।**

आचार्य स्वामी रामकृष्णा परमहंस के सानिध्य में एक आध्यात्मिक मनीषी के रूप में विकसित वह जन्मजात प्रतिभा सदैव अपनी मातृभूमि भारत से प्रेम व अनुराग के बंधन में बँधकर उसके प्रति सदैव श्रद्धावनत रहा। अपनी मातृभूमि से उसका तादात्म्य सम्पूर्ण था और उसके कण-कण में समाहित था। वे स्वयं को ''धनीभूत भारत'' कहते थे। स्वामी जी की दैदीप्यमान शिष्या निवेदिता ने अपनी मातृभूमि से उनके सम्मिलन को इस प्रकार व्यक्त किया है-

''भारत स्वामी जी का गहनतम अनुराग रहा है, भारत उनके वक्ष पर धड़कता है, भारत उनकी नसों से स्पंदन करता है, भारत उनका दिवास्वप्न है, भारत उनका निशाकल्प है, वे भारत का रक्तमज्जा से निर्मित साक्षात शरीर रूप है वे स्वयं ही भारत हैं।''

 ISBN : 978-93-80216-07-2

स्वामी विवेकानन्द ने मानव सेवा को ही सच्ची ईश्वर सेवा माना। उन्होंने अपने गुरू स्वामी रामकृष्ण के संदेश ''मानव सेवा ही भगवान की सेवा'' की उद्घोषणा की। वे कहते हैं–

''परोपकार और मन की शुद्धता भगवान की पूजा का सारांश है जो निर्धन में, कमजोर में और रोगी में शिव के दर्शन करता है, वो वास्तव में शिव आराधना करता है और केवल शिव की कल्पना करता है उसकी पूजा केवल प्रारंभिका अवस्था है जिसने जाति, मत, प्रजाति, अथवा अन्य कुछ देखें बिना निर्धन में शिव के दर्शन कर उसकी सेवा–सहायता की है। उससे शिव अपेक्षाकृत अधिक प्रसन्न होते है न कि उससे जो केवल मंदिर में उनके दर्शन करता है'' (समग्र कार्यखण्ड–3)

''हम सौभाग्यशाली है कि हमें उसकी सहायता का नहीं उसकी सेवा करने का अवसर मिला है, मन से सहायता का शब्द निकाल दो, आप किसी की सहायता नहीं कर सकते, यह केवल ईश निंदा है। आप स्वयं ही उस प्रभु की अनुकंपा से हों। तुम सोचते हो तुमने किसी की सहायता की है तो वह उपासना है? जब तुम किसी कुत्ते को एक रोटी का टुकड़ा देते हो तो उसे भगवान् मान कर उसकी सेवा करते हो, वह कुत्ता ही भगवान है, सब कुछ है।''(समग्र कार्यखण्ड–5)

स्वामी जी ने दरिद्र को ''दरिद्र नारायण'' कहा। वे कहते है ''आप अपना शरीर मन, वचन सब कुछ परोपकार में लगा दो। तुमका पता है ''मातृ देवो भव, पितृ देवो भव'' लेकिन मैं कहता हूँ ''दरिद्र देवो भव, मूर्ख देवो भव'' और अनपढ़ नादान पीड़ित को अपना भगवान मानों और जानों कि इन सबकी सेवा करना ही सबसे बड़ा धर्म है।'' (समग्र कार्यखण्ड–6)

मानवता के सत्य को पहचानना ही वास्तव में वेदांत है। यही वेदांत का संदेश है कि यदि आप अपने बान्धवों अर्थात् साक्षात ईश्वर की पूजा नहीं कर सकते तो उस ईश्वर की पूजा कैसे करोगे, जो निराकार है''

(समग्र कार्यखण्ड–2)

स्वामी रामकृष्ण ने जबसे नरेन्द्र को अद्वैत वेदांत का ज्ञान दिया वो निरंतर परमसत्य की खोज में थे नरेन्द्र उपनिषदों के मूल सत्य की अनुभूति करना चहाते थे और अपने प्रत्यक्ष अनुभव के आधार पर ''अहं ब्रह्मास्मि'' अर्थात् ''मैं ब्रह्म हूँ'' के आधार पर।

नरेन्द्र के जीवन पर किसी व्यक्तित्व का सबसे अधिक प्रभाव पड़ा तो वे थे स्वामी रामकृष्ण परमहंस। इसका प्रमाण नरेन्द्र के इन भावुकतापूर्ण शब्दों से मिलता है–

''भाइयों आपने मेरे हृदय में एक और धारा को स्पर्श किया है, सबसे अथाह गहरी और वह है मेरे आचार्य, मेरे स्वामी, मेरे नायक, मेरे आदर्श, मेरे जीवन में प्रभु स्वामी रामकृष्ण परमहंस का 'प्रतिरूप'। यदि मैंने विचारों शब्दों कृत्यों के रूप में कुछ भी पाया है या मेरे मुंह से निकले एक भी शब्दों ने किसी पर उपकार किया है, वह कुछ भी मेरा नहीं है, वह सब तो मेरे स्वामी का ही है और जो कुछ भी कमी है वो केवल मेरी है और जो प्राणदायक शक्तिदायक, शुद्ध और पवित्र है वो उनकी प्रेरणा, उनके वचन और वे स्वयं हैं।'' (समग्र कार्यखण्ड–3)

स्वामी जी ने कन्याकुमारी में भारत के जनमानस की कठिनाईयों के बारे में महीनों तक विचार मंथन किया। वह इसका हल ढूढ़ने के लिए लालायित थे कि कैसे उन पर हुए अन्यायों का उपसंहार किया जाये।

शिकागों की धर्म संसद के प्रबोधन के बाद स्वामी ने सम्पूर्ण विश्व पटल पर अपरिवर्तनीय ख्याति प्राप्त कर ली थी और जन सामान्य के लिए उनकी लक्ष्य साधना प्रारंभ हो चुकी थी। परन्तु वे अपने प्रति संतुष्ट नहीं थे। बल्कि उनका हृदय भारत के लिए द्रवित हो रहा था। भारत की गरीबी और अमेरिकी की विपुल समृद्धि की भयानक तुलना ने उन्हें उत्पीड़ित किया। वे भारत की दुर्दशा के विषय में ही सोचते रहें।

''ओ माँ! मैं कैसे नाम और यश की चिंता करूँ जब मेरी मातृभूमि

 ISBN : 978-93-80216-07-2

भयंकर गरीबी में डूबी है, हम गरीब भारतवासियों पर यह दुःखद प्रहार कैसा है कि हममे से लाखों लोग एक मुट्ठी अनाज के अभाव में मर रहे हैं और दूसरी और लोग यहाँ लाखों रुपये अपनी सुख–सुविधाओं पर खर्च कर रहें है। भारत की जनता का भला कौन करेगा, कौन उन्हें रोटी देगा, मुझे रास्ता दिखाओ माँ। मैं कैसे उनकी सहायता करूँ।'' (जीवन यात्रा खण्ड–1)

उस समय स्वामी जी के भाषणों में उनकी देशभक्ति, एक उल्लेखनीय विशेषता थी जिसका उल्लेख अमेरिकी समाचार पत्रों ने भी किया। एक समाचार पत्र ने लिखा **उनकी देशभक्ति ओजस्वितापूर्ण थी, जिस प्रकार वो मेरा देश पुकारते है वह बहुत मर्मस्पर्शी एवं हृदयस्पर्शी होता है।** ये शब्द उन्हें केवल संन्यासी ही नहीं अपितु लोगों का ''अपना'' व्यक्ति सिद्ध करते है।

शिकागो से भारत वापस लौटने पर जैसे ही उन्होंने धरती को स्पर्श किया उन्होंने अपनी मातृभूमि को प्रणाम किया और मुट्ठी भर रेत उठाकर, उसे अपने शरीर पर छिड़क लिया। इसका कारण भी उन्होंने स्वयं बताया कि चार वर्षों से मैं भोग विलासी पश्चिम में था, मुझे नहीं मालूम मुझमें और मेरे शरीर में कितने विकार आ गये होंगे। मेरे मातृभूमि की मिट्टी मुझे पवित्र कर देगी इससे पहले कि मैं मातृभूमि को स्पर्श करूँ।''

1897 में लाहौर में रहते हुए वहाँ स्वामी जी के तीन संभाषण हुए उनमें पहला था ''हिन्दुत्व के समान आधार तत्व'' उन्होंने कहा–''हम हिन्दू है, मैं हिन्दू शब्द का उपयोग किसी निकृष्ट भाव से नहीं कर रहा हूँ और न ही उनसे सहमत हूँ जो सोचते है कि हिन्दू शब्द में कोई दूषित भाव है। यह हम पर निर्भर करता है कि हिन्दू के भाव को महिमा पूर्ण और आध्यात्मिक अर्थ में ही स्वीकार किया जायें। आज अगर हिन्दू का अर्थ किसी गलत भाव में लिया जाता है तो चिंता मत करो अपने कार्य व्यवहार से यह दिखलाने के लिए उद्यत रहो कि यह एक ऐसा उत्कृष्ट

शब्द है जो किसी भी भाषा में उपलब्ध है।'' (समग्र कार्यखण्ड–3)

उनका कहना था कि–

''भारतीय मानस पहले धार्मिक है फिर कुछ और है, यह इसका राष्ट्रीय लक्षण है जिसे कोई प्रभावित नहीं कर सकता। धर्म राष्ट्र की आत्मा होती है क्योंकि कोई उसका विनाश नहीं कर सकता, इसीलिए हिन्दू राष्ट्र आज भी जीवित है।'' (समग्र कार्यखण्ड–3)

उन्होंने भारतीयों को संदेश दिया कि वे वे पाश्चात्य संस्कृति एवं सभ्यता का सम्मोहन त्याग दें व उसका अंधानुकरण छोड़े। उठो! जागो! कमजोरी के सम्मोहन से मुक्त हो जाओ।

''ओ भारत! यह तुम्हारी भयंकर विडम्बना है। पश्चिम के अंधानुकरण का यह सम्मोहन हम पर इतना हावी है कि अच्छे और बुरे का निर्णय किसी मूल्यांकन, कारण पक्षपात या शास्त्र शिक्षा के आधार पर नहीं होता बल्कि जिस विचार और व्यवहार की गोरे लोग प्रशंसा करते है वो हमें अच्छा लगता है और जिन चीजों को वो नापसंद या जिनकी वे निंदा करते है, उनका हम भी तिरस्कार करते है। काश! हमारी मूर्खता का इससे अधिक ठोस कोई प्रमाण होता। (समग्र कार्यखण्ड–4)

उन्होंने भारतीयों को अपनी आन्तरिक दिव्यता को जागृत करने का संदेश दिया और कहा कि इससे सब कुछ सुसंगत ढंग से तुम्हारे चारों ओर रूपान्तरित हो जायेगा। प्रत्येक भारतीय के अन्दर अनन्त ऊर्जा शक्ति है इस ऊर्जा शक्ति से वह भारत के कोने–कोने को प्रकाशित कर सकता है। उनके अनुसार–''भारत का राष्ट्रीय आदर्श आत्मा, त्याग और सेवा है। इस आदर्श को सभी के हृदयों में नसों में प्रवाहित कर दों, बाकि सब कुछ अपने आप संभव हो जायेगा। (समग्र कार्यखण्ड–5)

स्वामी जी ने व्यक्तित्व निर्माण को अपने जीवन का शाश्वत लक्ष्य माना। उन्होंने शिक्षा को व्यक्तित्व निर्माण से जोड़ते हुए कहा कि ''राष्ट्रीय शिक्षा पर हमारा नियंत्रण होना चाहिए वह आध्यात्मिक हो या

 ISBN : 978-93-80216-07-2

सांसारिक हो...जब तक कि सम्पूर्ण जाति का उद्धार न हो जाये। आज जो शिक्षा दी जा रही है....प्रथमतया वह व्यक्तितत्व निर्माण करने वाली नहीं हैं। वह केवल और पूर्णतया नकारात्मक शिक्षा है। ऐसी शिक्षा मृत्यु से भी अधिक विकृतिकारक है। (विवेकानन्द मानव निर्माण के सिद्धांत')

गुरुदेव रविन्द्र ठाकुर लिखते हैं –''अगर आप भारत को जानना चाहते है तो विवेकानंद का अध्यन कीजिए उनके विचारों में सब कुछ सकारात्मक है और नकारात्मक कुछ भी नहीं...।''

नेता जी सुभाषचन्द्र बोस कहते है ''स्वामी विवेकानन्द को आधुनिक राष्ट्रवादी आंदोलन का आध्यात्मिक जनक कहा जा सकता है। स्वामी जी के शरीर का कण–कण संघर्षशील था और उनका व्यक्तित्व पुरुषत्व के लहु से भरा था। निष्कर्षत: वे शक्ति के पुजारी थे जिन्होंने देशवासियों के उत्थान के लिए वेदांत को नयी व्यवहारिक परिभाषा प्रदान की। उपनिषदों में चरित्र बल को शक्ति कहा गया है और स्वामी जी सदैव इसकी उद्घोषणा करते थे। आज अगर वो जीवित होते तो मैं उनके चरणों में बैठता...।''

दुर्भाग्यवश 40 वर्ष की अल्पायु में ही 1902 में स्वामी विवेकानन्द जी का स्वर्गवास हो गया। उन्होंने स्वयं ही कहा था कि –'''**कोई अन्य विवेकानन्द ही समझ पायेगा कि मैंने क्या किया हैं।**'' उन्होंने विशेष रूप से देश के युवाओं को आह्वान किया कि वे आगे आए और मातृभूमि के उत्थान के लिए कार्य करें। जिसे वे मनोभाव से प्यार करते है और इसकी आराधना करते हैं।

आइए हम सब प्रार्थना करें कि हम उनके आशीर्वाद से अपने आपको सामर्थ्यशाली बनाएँ ताकि उनके सपनों और आकांक्षाओं को कोई किसी सीमा तक अपनी प्रवीणता से पूरा करें।

अन्त में हम यही कह सकते है– **''उठो! जागों! और लक्ष्य प्राप्ति तक रूको मत!**

विवेकानन्द के चिंतन में 'माँ' मातृत्व और नारीत्व

अरूण कुमार
एन.ए.एस. (पी.जी.) कालेज
मेरठ

आशु तोमर (जे.आर.एफ.)
अर्थशास्त्र विभाग
शोभित विश्वविद्यालय, मेरठ

मातृ देवो भव, पितृ देवो भव, आचार्य देवो भव, अतिथि देवो भव, की भावना भारतीय संस्कृति का प्राण तत्व रही है।[1] इसके अनुसार सन्तति से यह कामना की गई है कि वह माता में देव बुद्धि करने वाले पिता को देवरूप समझने वाले, गुरु (आचार्य, शिक्षक) को देवरूप समझने वाले, तथा अतिथि को देवतुल्य समझे।[2]

मनुष्य जन्म से मृत्यु पर्यन्त परिवार में रहकर जीवन व्यतीत करता है। इसीलिए परिवार को नागरिकता की प्रथम पाठशाला कहा गया है। माता–पिता को ही प्रथम गुरु कहा गया। शिशु के पालन पोषण से लेकर उसमें नैकि एवं चारित्रिक गुणों का विकास और तदनुरूप शिक्षा–दीक्षा प्रदान करना 'माता' के ही हाथों में होता है।

वैदिक और पौराणिक साहित्य से लेकर आधुनिक काल तक का इतिहास ऐसी नीति कथाओं और उदाहरणों से परिपूर्ण है। राम, कृष्ण, ध्रुव, प्रहलाद, बुद्ध शिवाजी, गाँधी, रामकृष्ण परमहंस, विवेकानन्द जैसे महापुरुषों और भारतीय संस्कृति के उन्नायकों की सफलता में इनकी माताओं की ही महत्त्वपूर्ण भूमिका रही हैं।

जिस प्रकार एक कुशल कुम्हार मिट्टी के बर्तन बनाते समय जो आकृति, कलाकृति बना देता है, वह बर्तन के टूटन तक अमिट रहती है। उसी प्रकार 'माँ' की शिक्षाओं का भी व्यक्ति के निमाण पर व्यापक प्रभाव पड़ता है। माँ के द्वारा प्रदन्त 'संस्कार' और कुसंस्कार ही व्यक्ति में दैवी या आसुरी प्रवृत्तियों के नियामक बनते हैं। इसीलिए वेदों में 'मनुष्य' अर्थात मानव बनने की बात कही गई है।[3] मनुस्मृति में भी माता को सर्वोच्च स्थान पर प्रतिष्ठित किया गया है–

 ISBN : 978-93-80216-07-2

उपाध्यायान दशाचार्य, आचार्याणां शतं पिता,
सहस्त्रं तु पितृन, माता गौरवेणातिरिच्यते।[4]

अर्थात् उपाध्याय से आचार्य का दस गुना, आचार्य से पिता का सौ गुना और पिता से माता का स्थान हजार गुना ऊँचा है।

केनोपनिषद् में महाविदुषी तथा आत्म तत्व की व्याख्याता मदालसा की कथा में वर्णन आता है कि मदालसा चाहती है, कि उसका पुत्र ब्रहाज्ञानी बने, क्योंकि मानव जीवन का परम लक्ष्य यही है। यदि उसने इस लक्ष्य (ईश्वर) को पहचान लिया, तो उसका जन्म लेना साथक हो जाएगा, नहीं तो उसका सर्वनाश हो जाएगा।[5]

जब जन्म लेते ही, मदालतसा के पुत्र से रोना शुरू किया, तो मदालस नवजात पुत्र से कहती है। हे! पुत्र तुम शुद्ध हो अर्थात् माया से निलिप्त आत्मा हो, तुम रोते क्यों हों, क्योंकि रोना आत्मा का धर्म नहीं हैं रोना तो शरीर का धर्म है।[6]

यही तो भारतीय संस्कृति का उत्कृष्ट परम्परा रही है जिसने बसुधैव कुटुम्बकम का पाठ पढ़ाया है।

विवेकानन्द के चिंतन में मातृत्वः

वात्सल्यमयी 'माँ' की कृपा जिन महापुरुषों पर विशेष रूप से रही, उनमें स्वामी विवेकानन्द सर्वप्रमुख हैं। उनके गहन चिंतन में 'माँ' के स्वरूप की चरम परिणति दृष्टिगोचर होती है, क्योंकि उनकी दृष्टि में मातृत्व या मातृ पूजा स्वयं में एक विशिष्ट दर्शन है।[7] जिसमें 'शक्ति' को प्रमुख स्थान दिया गया है। जो पग–पग पर हर मनुष्य से टकराती है। हमें जिस आन्तरिक शक्ति की अनुभूति होती है, वह आत्मा है, और हम जो बाहर अनुभव करते है, वह प्रकृति है, इन दोनों के बीच चलने वाले संघर्ष के परिणामस्वरूप ही मनुष्य के जीवन का निर्माण होता है। सब कुछ केवल इन दोनों शक्तियों आत्मा और प्रकृति के संघर्ष का ही परिणाम है।[8]

जब मनुष्य के चितन किया कि सूर्य अच्छे और बुरे दोनों को ही एक समान प्रकाश देता है, तो ईश्वर के सम्बन्ध में विश्वव्यापी शक्ति के रूप में मातृ–अस्तित्व की अवधारणा ने जन्म लिया। सांख्य दर्शन भी मानता है कि क्रियाशील रहना प्रकृति का धर्म है। पुरुष अथवा आत्मा का नहीं।[9]

भारतीय संदर्भ में यदि विचार किया जाए तो यहाँ स्त्री के जितने रूप प्रचलित हैं, 'माँ' उनमें सर्वोच्च पद पर आसीन है।[10] क्योंकि 'माँ' हर परिस्थिति तथा हर मोड़ पर अपनी संतान के साथ दिखाई पड़ती है। पत्नी, पुत्र और पुत्री व्यक्ति को अपने स्वार्थ पूर्ति में बाधक बनने पर त्याग सकते है, परन्तु 'माँ' कभी इसकी कल्पना भी नहीं कर सकती। क्योंकि वह निष्पक्ष शक्ति है, जो निस्वार्थ प्रेम के कारण बदले में कुछ भी नहीं माँगती। वह अपनी संतान के दुर्गुणों की चिंता किये बिना उसको ज्यादा से ज्यादा 'प्रेम' और स्नेह प्रदान करती है। यही प्रमुख कारण है कि हिन्दू–समाज के सभी उच्च वर्णो में मातृ पूजा का प्रचलन अति प्राचीन काल से चला आ रहा है।[11]

स्वामी विवेकानन्द की दिव्य दृष्टि में भारत मे 'माँ' का वह स्वरूप उभरा दिखाई पड़ता है। जिसके विषय में पश्चिम के लोग तो कभी कल्पना नहीं कर सकते। भारत में स्त्री–जीवन के आदर्श का आरम्भ और अंत ही 'मातृत्व' से होता है। हर हिन्दू के मानस पटल पर 'स्त्री' शब्द के उच्चारण मात्र से ही 'मातृत्व–बोध' जाग्रत हो उठता है, क्योंकि हमारी संस्कृति में 'ईश्वर' को 'माँ' कहा गया है।[12] हिन्दू धर्मशास्त्रों में ईश्वर कर स्वरूप, सगुण दोनों ही मिलते हैं, निर्गुण रूप में वह पुरूष है तो सगुण रूप में नारी स्वरूप है।

अर्थात् र्अश्वर की प्रथम अभिव्यक्ति माँ के वात्सल्य से परिपूर्ण वे हाथ हैं जो पालन में झोढ़ा देकर शिशु सुलाते हैं।

भारत में 'माँ' परिवार का न केवल केन्द्र है बल्कि हमारे लिए उच्चादर्श रूप में प्रतिष्ठित है।[13] वह 'ईश्वर' की सच्ची प्रतिनिधि है,

 ISBN : 978-93-80216-07-2

क्योंकि ईश्वर सकल ब्रह्मांड की 'माँ' है। सर्वप्रथम एक नारी-ऋषि ने ही ईश्वर की एकता को प्राप्त किया और इस सिद्धान्त को वेदो की प्रथम ऋचाओं में उद्घोषित किया गया।

विवेकानन्द के विचार में पश्चिम में 'स्त्री' पत्नी है, क्योंकि वहाँ सतीत्व का भाव पत्नी के रूप में केन्द्रित होकर रह गया है। जबकि भारत में जन-मानस समस्त स्त्रीत्व को मातृत्व में केन्द्रीभूत स्वीकार करता है। पाश्चात्य संस्कृति में घर की स्वामिनी और शासिका पत्नी है, जबकि भारतीय संस्कृति में 'माँ' गृहस्वामिनी और शासिका दोनों होती है[15] पश्चिमी देशों में यदि 'माँ' हो तो उसे भी उसे पत्नी के अधीन रहना पड़ता है, क्योंकि घर की स्वामिनी पत्नी है।[16] जबकि भारत की परिवारिक स्थिति इससे सर्वथा भिन्न है, हमारे घर में माता सदैव रहती है, और पत्नी को उसके अधीन अनिवार्य रूप से रहना होता है। हर भारतीय में यह तथ्य भी दृढ़ता के साथ स्थापित रहता है, कि मैं जो कुछ भी हूँ उस माँ की कृपा की बदौलत हूँ, क्योंकि मेरी 'माँ' शुद्ध और पवित्र थी। इसलिए हम उसके ऋणी है। विवेकानन्द इसे जाति का रहस्य अर्थात् नारीत्व के रूप में विश्लेषित करते है। उनके इन नारी विषयक विचारों का अमेरिका-प्रवास के दौरान खुलकर स्वागत किया गया और वे अमेरिकी-मीडिया की सुर्खियाँ बने।[17]

विवेकानन्द के दर्शन में 'माँ' का प्रतिरूप स्त्री-रूप का परमादर्श रहा है। यही कारण है कि भगवान की मातृ रूप तथा 'प्रेम'के चरमोत्कर्ष रूप में उनकी पूजा और आराधना को 'हिन्दू' दक्षिणाचार या दक्षिण मार्ग कहते है। उसके भीषण रूप अर्थात् 'रुद्र' स्वरूप की उपासना को वामाचार या वाब मार्ग कहा गया। सामान्य रूप में इस उपासना से भौतिक प्रगति तो होती है किंतु आध्यात्मिक उन्नति विशेषतः नहीं हो पाती। शनैः शनैः इस की नियति का सामना करना पड़ता

इस रहस्य को स्पष्ट करते हुए वे कहते है, कि जननी ही 'शक्ति' का प्रथम विकसित स्वरूप है। जिसके कारण पितृभाव की अपेक्षा

मातृभाव को प्रधानता दी गई है। 'माँ' के नाम के स्मरण मात्र से 'शक्ति' का भाव सर्वशक्ति सम्पन्न्ता और दैवी शक्ति का भाव आ जाता है। जैसे अबोध शिशु अपनी 'माँ' की सर्वशक्ति सम्पन्न समझता है ठीक उसी तरह जगत जननी जगदम्बा ही हमारी आन्तरिक चेतना को जाग्रत करने वालीहै। जिनकी उपासना के बिना हम स्वयं को नहीं पहचान सकते। सर्वशक्ति, सर्वव्यापक और अनन्तहया उन्हीं जगदम्बा भगवती वात्सल्यमयी 'माँ' के गुण हैं। संपूर्ण संसार में शक्ति की समस्त अभिव्यक्तियाँ 'माँ' ही निहित है।[19] वही जगत जननी प्राण रूप, बुद्धिरूप, प्रेमरूप, श्रद्धारूप में समस्त विश्व में स्थित है तथापि सम्पूर्ण जगत से प्रथम है। वे मानव रूप है–उनको जाना जा सकता है, देखा जा सकता है। वे जब चाहें उस स्वरूप में हमें साक्षात दर्शन देने में सामर्थ है। इनके नाम और रूप दोनों हो सकते है, अथवा रूप के न रहने पर सिर्फ नाम ही शेष रह सकता है। यदि हम निष्काम भाव से इनके इन रूपी की उपासना करते है, तो ऐसी अवस्था में भी पहुँच सकते है। जहाँ नाम और रूप कुछ भी नहीं बचता केवल विशुद्ध 'सत्ता' ही बचती है।[21]

विवेकानन्द ने अपनी चिंतन में मातृत्व के सिद्धान्त की मीमांसा में कहा कि हर हिन्दू को मातृत्व के सिद्धान्त की उपासना की शिक्षा दी जाती है, क्योंकि माता–पत्नी से भी बढ़कर होती है। 'माँ' पवित्र होती है, उसके मन में ईश्वर के प्रति पितृभाव की अपेक्षा मातृभाव अधिक होता है। इसी कारण यहाँ एक राजकुमार भी स्त्री को सम्मान के साथ रास्ता देता है, क्योंकि हमारा भाग्य समस्त संसार के भाग्य के समान सिर्फ विधि निर्माताओं पर निर्भर नहीं है वरन स्त्रियों की गरिमा और सम्मान पर निर्भर करता है।[22] मनु स्मृति में भी ऐसा ही उल्लेख प्राप्त होता है।[23]

विवेकानन्द की दृष्टि में नारीत्व का महानतम आदर्श भी भारत की उस आर्य जाति में केन्द्रित है।[24] जो विश्व–इतिहास में प्राचीनतम है, क्योंकि आर्य कालीन संस्कृति में स्त्री और पुरुष समान रूप से न केवल

 ISBN : 978-93-80216-07-2

सहधर्मी थे, वरन् पुरोहित भी थे। 'स्त्री' और पुरुष एक दूसरे के पूरक बन गए थे, यह भावना यही तक विकसित हो गई थी कि अकेला पुरुष किसी भी धार्मिक कृत्य में भाग नहीं ले सकता था। ऐसा माना जाता था कि विवाह के बिना वह अधूरा है और इसीलिए उसे पुरोहित के रूप में भी स्वीकार नहीं किया जाता था। यह तथ्य न केवल भारतीय संस्कृति पर लागू होता है, बल्कि प्राचीन रोम और यूनान के विषय में भी बहुत कुछ साम्य दिखाई पड़ता है।[25]

मगर एक विशेष पुरोहित वर्ग के उदय के साथ इस सभी देशों में स्त्री को पुरोहित के रूप धार्मिक कृत्यों को सम्पन्न कराने से रोक दिया गया। जिसकी पृष्ठभूमि में सेमेटिक रक्त-वाली असीरियन जाति की प्रमुख भूमिका रही, जिससे यह सिद्धान्त गढ़ा कि बालिकाओं को शादी हो जाने के बाद भी कोई हक और हकूक प्राप्त नहीं है।

बेविलोनिया से यह विचारधारा ईरान पहुँची तथा उनसे रोम और यूनान तक फैल गई, परिणामस्वरूप नारी की दशा इन सभी देशों में पतनोन्मुख होती चली गई।[26] जबकि भारत वर्ष ने अपनी प्राचीन परम्परा को कुछ हद तक बनाए रखा।

विवेकानन्द इस ह्रास का एक अन्य प्रमुख कारण विवाह-प्रणाली में परिवर्तन होना भी मानते थे, क्योंकि प्राचीनतम वैवाहिक-प्रणाली में केन्द्र बिन्दु 'माँ' रही, जिसके परिणामस्वरूप 'माँ' का पद लड़कियों को मिलने लगा, किंतु इसका दुष्परिणाम बहुपतित्व की प्रथा के रूप में सामने आया। वेदों में भी नियोग प्रथा के संकेत मिलते है। आगे आने वाले समय में विधवा पुनर्विवाह की अनुमति तो मिली, किंतु आधुनिक विचारों से पर्याप्त समर्थन नहीं मिल सका।[27]

इन अवधारणाओं का बल मिलने के उपरांत भी भारत में वैयक्तिकपवित्रता का विचार बड़ी तेजी से अस्तित्व में आया। क्योंकि 'वेद' ने हर स्थान पर वैयक्तिक-पवित्रता का उद्घोष किया।[28]

बौद्ध युग के उदय के साथ सम्पूर्ण भारतवर्ष विशाल मठ के रूप में परिवर्तित दिखा, जिसका उद्देश्य था पवित्र बने रहना परिणामस्वरूप समस्त बुराईयाँ नारी पर आरोपित की गई, कही उसे नरक का द्वार तो कहीं बंधनों की श्रंखला की संज्ञा दी गई। पूर्व ही नहीं पश्चिम भी इससे अछूता नहीं रहा। किंतु मठों की व्यवस्था का सुदृढ़ आधार नारी शक्ति की अवहेलना ही रहा।[29]

कोई भी सामाजिक–व्यवस्था पूर्णकालिक स्थायी नहीं होती। समय के साथ इसे भी परिवर्तन का सामना करना पड़ा। इस दौरान 'माँ' मातृत्व और नारीत्व का जो सशक्त स्वरूप उभर कर आया, पश्चिमी सभ्यता में उसे पत्नी और भारत में 'माँ' के रूप में मिला। जिसके पीछे पुरोहितो की नहीं बल्कि उन पाश्चात्य विचारकों, क्रान्तिकारी फ्रांसीसी दार्शनिकों थी महत्वपूर्ण भूमिका रही है, जिन्होंने इस तथ्य के रहस्य को समझा था।[30]

इसी कारण वे अमेरिकी प्रवास के दौरान वहाँ की स्त्रियों से कहते है कि 'माँ' का वह रूप जो भारतवर्ष में दिखाई पड़ता है, यहाँ कैसे मिल सकेगा। स्वामी विवेकानन्द का मानना था कि क्या केवल भौतिक शरीर को ही 'स्त्री' की संज्ञा देना उचित है? जहाँ हिन्दू मनः स्थिति इस सिद्धान्त के प्रति शंकित हो कि मांस को मासं से ही संलग्न रहना चाहिए। जबकि अखिल ब्रह्मण्ड में 'माँ' जैसा पवित्र और शुद्ध अन्य कोई दूसरा विकल्प है ही नहीं वासना जिसके निकट आ ही नहीं सकती[31]

विवेकानन्द के गंभीर चिंतन में 'माँ' ममत्व, और नारीत्व की जो व्याख्या हमें मिलती है, उसने सम्पूर्ण विश्व में 'माँ को उस दिव्य–स्थान पर प्रतिष्ठित करने में सफलता प्राप्त की है, जिसकी आवश्यकता हर देश काल में महसूस होती है। विवेकानन्द के दर्शन से ओत–प्रोत 'माँ' की प्रतिमा त्याग, तपस्या, सम्पूर्ण शुचिता, पवित्रता और शक्ति का अज्रस स्रोत है, जो सदैव आशीवादी की मुद्रा में वात्सल्य और प्रेम की वर्षा करती है।

 ISBN : 978-93-80216-07-2

विवेकानन्द के दर्शन और चिंतन की मीमांसा करना तो सूर्य को दीपक दिखाने जैसा होगा, किंतु उसका सीधा सादा अर्थ है कि 'माँ' के प्रति सम्पूर्ण ही हमें शान्ति प्रदान कर सकता। जब हम श्रद्धा से भय और लाभ के भावों को त्यागकर 'माँ' से माँ के निमित ही सच्चा प्रेम करेंगे, तो निश्चित ही वही 'माँ' हमारे सम्मुख खड़ी होगी, जिसकी प्रतिमा विवेकानन्द ने गढ़ी थी। यदि दुखों से पीछा छुड़ाना है, हमें केवल और माँ की गोद में ही आश्रय लेना होगा।

संदर्भ

1. तैतिरियोपनिषद्-वल्ली।, अनुवाक्य-।।
2. सर्व तीर्थमयी माता, सर्वदेवमयः पिता।
   मातरं पितरं तस्मात्सर्वयत्नेन पूजयेत।। (पद्मपुराण सृ 52/999)
3. नैनं तपांसि न ब्रह्म नाग्निहोत्रं न दक्षिणाः।
   हिनाचारमितो भ्रष्टं तारयन्ति कथञ्चन।। (वसिष्ठ स्मृति 6/2)
4. मनुस्मृति (2/145)
   मनुस्मृति (3/56)
   वही (3/57)
5. इह चेदवेदीदथ सत्यमस्ति
   न चेदिहावेदीन्महती विनष्टिः (केनोपनिषद् 2/5)
6. शुद्धोऽसि रे तात न तोऽस्ति नाम
   कृतं हि ते कल्पनया धुनैव।
   पंचात्मकं देहमिंद न तेऽस्ति
   नैवास्य त्वं रोदसि कस्य हे तोः।। (केनोपनिषद 2/6) (मार्कण्डेय पुराण-25/11)
7. विवेकानन्द साहित्य खण्ड-3 (जन्मशती संस्करण), अद्वैत आश्रम 5 डिही एण्टाली रोड, कलकत्ता-14 1963 प्र.-208
8. विवेकानन्द साहित्य खण्ड-3 प्र.-210
9. वही-प्र.-210
10. वही-प्र.-211
11. वही-प्र.-208
12. वही-प्र.-210-12
13. वही-प्र.-208
14. वृहदारण्यक उपनिषद् (2/45 4/5) तार्दनं दुर्दिनंमन्ये मेघाच्छन्नं न दुर्दिनम।
    या दिनं हरि संलाप कथा पीयूष वर्जितम।।

15. विवेकानन्द साहित्य खण्ड-दस-पृ. 263
16. वही पृ. 300
17. वही पृ., 301
18. वही पृ. 41-42
19. विवेकानन्द साहित्य खण्ड-तीन-पृ. 210-12
20. विवेकानन्द साहित्य खण्ड-सात-पृ. 35-36
21. विवेकानन्द साहित्य खण्ड-तीन-पृ. 267
22. मनुस्मृति-3/56
23. विवेकानन्द साहित्य खण्ड-दस-पृ. 300
24. वही पृ. 63-65
25. विवेकानन्द साहित्य खण्ड-दस-पृ. 30
26. वही
27. वही
28. वही पृ. 263
29. वही
30. विवेकानन्द साहित्य खण्ड-तीन 208-11
31. वही पृ. 208-9

 ISBN : 978-93-80216-07-2

आधुनिक भारत में युवाओं के प्रेरणा स्त्रोत स्वामी विवेकानंद

योगेश कुमार
एम.ए. बी.एड., पी.एचडी.

जीवन में हमेशा अच्छे आदर्शों को चुनो और उसी पर अमल करो, समुद्र को देखो ना कि उसकी लहरों को.....–स्वामी विवेकानंद

स्वामी विवेकानंद आधुनिक भारत के एक क्रांतिकारी विचारक माने जाते हैं। 12 जनवरी 1863 को कलकत्ता में जन्मे स्वामी विवेकानंद के बचपन का नाम नरेंन्द्र नाथ था। इन्होंने अपने बचपन में ही परमात्मा का ेजानने की तीव्र जिज्ञासावश तलाश आरंभ कर दी। इसी क्रम में उन्होंने सन् 1881 में पहली बार रामकृष्ण परमहंस से भेंट की और उन्हें अपना गुरु स्वीकार कर लिया तथा अध्यात्म–यात्रा पर चल पड़े। काली मां के अनन्य स्वामी विवेकानंद ने आगे चलकर अद्वैत वेदांत के आधार पर सारे जगत को आत्म–रूप बताया और कहा कि आत्मा को हम देख नहीं सकते किंतु अनुभव कर सकते हैं। यह आत्मा जगत के सर्वांश में व्याप्त है, सारे जगत का जन्म उसी से होता है, फिर वह उसी में विलीन हो जाता है, उन्होंने धर्म को मनुष्य, समाज और राष्ट्र निर्माण के लिए स्वीकार किया और कहा कि धर्म मनुष्य के लिए है, मनुष्य धर्म के लिए नहीं।

भारतीय जन के लिए, विशेषकर युवाओं के लिए उन का नारा था– "उठो, जागो और लक्ष्य की प्राप्ति होने तक रुको मत।"

स्वामी विवेकानंद जी आधुनिक भारत के एक महान चिंतक, महान देशभक्त, दार्शनिक, युवा सन्यासी, युवाओं के प्रेरणास्रोत और एक आदर्श व्यक्तित्व के धनी थे। भारतीय नवजागरण का अग्रदूत यदि स्वामी विवेकानंद को कहा जाय, तो यह अतिशयोक्ति नहीं होगी। विवेकानंद दो शब्दों द्वारा बना है। विवेक+आनंद। विवेक संस्कृत मूल

का शब्द है। विवेक का अर्थ होता है बुद्धि और आनंद का शाब्दिक अर्थ होता है–खुशियां।

31 मई 1893 को वह अमेरिका गए। 11 सितम्बर 1893 में शिकागो के विश्व धर्म सम्मेलन में उपस्थित होकर अपने संबोधन में सबको भाइयों और बहनों कह कर संबोधित किया। इस आत्मीय संबोधन पर मुग्ध होकर सब बड़ी देर तक तालियां बजाते रहे, वहीं उन्होंने शून्य को ब्रह्म सिद्ध किया और भारतीय धर्मदर्शन अद्वैत वेदांत की श्रेष्ठता का डंका बजाया। उनका कहना था कि आत्मा से पृथक करके जब हम किसी व्यक्ति या वस्तु से प्रेम करते हैं, तो उसका फल शोक या दुख होता है, अतः हमें सभी वस्तुओं का उपयोग उन्हें आत्मा के अंतर्गत मान कर करना चाहिए या आत्म-स्वरूप मान कर करना चाहिए ताकि हमें कष्ट या दुख न हो। 'अध्यात्म-विद्या और भारतीय दर्शन के बिना विश्व अनाथ हो जाएगा' यह स्वामी विवेकानंदजी का दृढ़ विश्वास था। अमेरिका में उन्होंने रामकृष्ण मिशन की अनेक शाखाएं स्थापित की अनेक अमेरिकन विद्वानों ने उनका शिष्यत्व ग्रहण किया।

स्वामी विवेकानंद ने अपनी ओजपूर्ण वाणी से हमेशा भारतीय युवाओं को उत्साहित किया है। विवेकानंद के जीवन और शिक्षाओं वर्तमान पीढ़ी के युवाओं के लिए प्रासंगिक है। उनके उपदेश आज भी संपूर्ण मानव जाति में शक्ति का संचार करते है। उनके अनुसार, किसी भी इंसान को असफलताओं को धूल के समान झटक कर फेंक देना चाहिए, तभी सफलता उनके करीब आती है। स्वामी जी के शब्दों में 'हमें किसी भी परिस्थिति में अपने लक्ष्य से भटकना नहीं चाहिए।'

आज देश में युवाओं की भागीदारी को लेकर बहस छिड़ी हुई है। हर तरफ यही सवाल है कि आखिर हम युवाओं को किस तरह विकास की राह में अपना सारथी बना पाएंगे। इस सवाल का एक जवाब हो सकता है कि युवा अपना आदर्श ऐसे लोगों को बनाएं जो वाकई जमीनी स्तर पर युवाओं के लिए कर्तव्यबद्ध होते हैं, ऐसे ही एक अहम आदर्श

 ISBN : 978-93-80216-07-2

हैं स्वामी विवेकानंद। उनके अनुसार एकाग्रता सीखो, और जिस ओर इच्छा हो, उसका प्रयाग करो। ऐसा करने पर तुम्हें कुछ खोना नहीं पड़ेगा। जो समस्त को प्राप्त करता है, वह विकास करो और उसका संयम करो, उसके बाद जहाँ इच्छा हो, वहाँ इसका प्रयोग करो–उससे अति शीघ्र अंश को भी प्राप्त कर सकते हो।

स्वामी विवेकानंद शिक्षा के बारे में कहा "शिक्षा मनुष्य में पहले से निहित पूर्णता की अभिव्यक्ति है।" वह उसे आत्म विश्वास और आत्म-सम्मान सिखाना नहीं है, अपने पैरों पर खड़ा करने के लिए एक व्यक्ति को सक्षम नहीं करता है, जो कि शिक्षा बेकार है। शिक्षा मानव-निर्माण, जीवन दे रही है और चरित्र निर्माण होना चाहिए। उन्होंने यह भी कहा है कि वे आत्म विश्वास और आत्म सम्मान हासिल तक नई चीजें सीखने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए यानि बच्चों, "सकारात्मक शिक्षा" दी जानी चाहिए।

उन्होंने कहा था कि मुझे बहुत से युवा सन्यासी चाहिये जो भारत के ग्रामों में फैलकर देशवासियों की सेवा में खप जायें। उनका यह सपना पूरा नहीं हुआ। विवेकानन्द पुरोहितवाद, धार्मिक आडम्बरों, कठमुल्लापन और रूढ़ियों के सख्त खिलाफ थे। उन्होंने धर्म को मनुष्य की सेवा के केन्द्र में रखकर ही आध्यात्मिक चिंतन किया था। उनका हिन्दू धर्म अटपटा, लिजलिजा और अमानवीय नहीं था। उन्होंने यह विद्रोही बयान दिया था कि इस देश के तैंतीस करोड़ भूखे, दरिद्र और कुपोषण के शिकार लोगों को देवी देवताओं की तरह मन्दिरों में स्थापित कर दिया जाये और मन्दिरों से देवी देवताओं की मूर्तियों को हटा दिया जाये।

स्वामी विवेकानंद ने अशिक्षा, अज्ञान, गरीबी तथा भूख से लड़ने के लिए अपने समाज को तैयार किया और साथ ही उन्होंने राष्ट्रीय चेतना जगाने, सांप्रदायिकता मिटाने, मानवतावादी संदेवनशील समाज बनाने के लिए एक आध्यात्मिक नायक की भूमिका भी निभाई। 4 जुलाई 1902

को कुल 39 वर्ष की आयु में विवेकानंद जी का निधन हो गया। इतनी कम उम्र में भी उन्होंने अपने जीवन को उस श्रेणी में ला खड़ा किया जहां वह मरकर भी अमर हो गए स्वामी विवेकानंद के यही आदर्श आध्यात्मिक हस्ती होने के बावजूद युवाओं के लिए एक बेहतरीन प्रेरणास्रोत साबित करते हैं।

आज भी कई ऐसे लोग हैं, जो केवल उनके सिद्धांतों को ही अपना मार्गदर्शक मानते हैं। उन्तालीस वर्ष के संक्षिप्त जीवनकाल में स्वामी विवेकानन्द जो काम कर गये वे आने वाले अनेक शताब्दियों तक पीढ़ियों का मार्गदर्शन करते रहेंगे।

गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने एक बार कहा था–

"यदि आप भारत को जानना चाहते हैं तो विवेकानन्द को पढ़िए। उनमें आप सब कुछ सकारात्मक ही पायेंगे, नकारात्मक कुछ भी नहीं।"

जब-जब मानवता निराश एवं हताश होगी, तब-तब स्वामी विवेकानंद के उत्साही, ओजस्वी एवं अनंत ऊर्जा से भरपूर विचार जन-जन को प्रेरणा देते रहेंगे और कहते रहेंगे–

"उठो जागो और अपने लक्ष्य की प्राप्ति से पूर्व मत रुको।"

संदर्भ :

1. स्वामी विवेकानन्द, भारत जागरण, रामकृष्ण मिशन, नई दिल्ली 2011
2. स्वामी विवेकानन्द, व्यक्तित्व का विकास, रामकृष्ण मठ नागपुर, 2014
3. राजेन्द्र प्रसादगुप्ता, स्वामी विवेकानन्द, व्यक्ति और विचार, राधापब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1997

 ISBN : 978-93-80216-07-2

भारतीय समाज में विवेकानन्द का योगदान

सुरेन्द्र पार्चा
वक्ता, समाजशास्त्र विभाग
एस.एस.वी. (पी.जी.) कॉलिज, हापुड़

उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वाह्न में जब भारतीय समाज के रंगमंच पर स्वामी विवेकानन्द का आविर्भाव हुआ, उस समय पश्चिमी देशों में भारत एक अशिक्षित, अविकसित, कुसंस्कारग्रस्त, हत्-गौरव तथा दास जाति के देश के रूप में जाना जाता था। भारतीय समाज की प्राचीन गौरवमयी धार्मिक और सांस्कृतिक परम्पराओं की महानता से पश्चिमी जगत के लोग अपरिचित थे। फलतः भारत की इस तथाकथित हीन दशा का लाभ उठाकर ईसाई धर्म प्रचारक, अपने धर्म प्रचार-प्रसार हेतु धार्मिक विद्वेष का जहर उगलते हुए अपने धर्म की श्रेष्ठता और हिन्दू धर्म की हीनता को स्थापित और सिद्ध करके भारतीय जन मानस को अपने धर्म की ओर आकृष्ट करने का घनघोर प्रयत्न कर रहे थे विदेशी शासन का राज्यश्रय प्राप्त होने के कारण उनके लिए यह कार्य अति सरल ओर सहज हो गया था। हिन्दू धर्म की हर प्रकार से निन्दा करके वे उसे एक अनैतिक धर्म सिद्ध करने में प्राण-पण से जुटे हुए थे, ताकि आधिकारिक लोग ईसाई धर्म के प्रति आकर्षित होकर उसे अंगीकार करने हेतु स्वेच्छा से तैयार हो सके।

जीवन परिचय–

विवेकानन्द का नाम नरेन्द्रनाथ दत्त था। जन्म 12 जनवरी, 1863 को कोलकाता के एक प्रतिष्ठित कायस्थ परिवार में हुआ था। विवेकानन्द नाम तो उन्होंने संन्यास ग्रहण करने के उपरान्त शिकागो (अमेरिका) में धर्म सम्मेलन में भाग लेने लिए मुम्बई में प्रस्थान करते समय ग्रहण किया। विवेकानन्द पर अपनी माता के सद्गुणों का विशेष प्रभाव पड़ा। उनके पितामह ने 25 वर्ष की अल्प आयु में ही समस्त धन-दौलत का

त्याग कर संन्यास ग्रहण कर लिया था, किन्तु इन पारिवारिक प्रभावों से भी बढ़कर स्वामी विवेकानन्द को सर्वाधिक प्रभावित करने वाला कारण उनका श्री रामकृष्ण परमहंस का शिष्यत्व था। बंगाल के इस महान सन्त का शिष्यत्व प्राप्त कर नरेन्द्रनाथ दत्त–स्वामी विवेकानन्द बन गये। नवम्बर 1881 में स्वामी रामकृष्ण परमहंस से उनकी भेंट उनके जीवन में एक क्रान्तिकारी मोड़ लायी। "थोड़े दिनों तक मानसिक प्रतिरोध की स्थिति के बाद उन्होंने गुरु के आगे पूरी तरह समर्पण कर दिया" और अगस्त 1886 में रामकृष्ण की मृत्यु के समय विवेकानन्द ही उनके सर्वप्रमुख शिष्य थे। इस समय लगभग 24 वर्ष की आयु में ही उन्होंने प्रण किया कि वे अपना सारा जीवन गुरु के सन्देश के प्रचार में लगा देंगे। विवेकानन्द ने अब गृहस्थाश्रम का त्याग कर दिया और परिव्राजक बनकर हिमालय के जंगलों में साधना करने लगे। छः साल तक वे बहुत कड़े संयम में रहे, परिव्राजक रूप में उन्होंने भारत का जो भ्रमण किया उससे उन्हें साधारण जनता के कष्टों और तकलीफों को समझने का अवसर मिला। के. दामोदरन लिखते हैं, "रामकृष्ण परमहंस की मृत्यु के बाद विवेकानन्द ने पांच वर्ष तक समूचे देश का भ्रमण किया और जनता से प्राप्त भिक्षा पर गुजारा किया। इस अनुभव के फलस्वरूप उन्हें भारत में व्याप्त आश्चर्यचकित करने वाली विविधता के पीछे अन्तर्निहित एकता का ज्ञान हुआ। उन्होंने भारतीय जनता की शक्ति को और उनकी कमजोरियों को समझा...।" 1893 में वे अमेरिका गये जहाँ शिकागो में उन्होंने सर्वधर्म सम्मेलन में भाग लिया। शिकागों धर्म सम्मेलन से पूर्व उनकी भेंट हार्वर्ड यूनिवर्सिटी के विख्यात प्रोफेसर जॉन हेनरी राइट से हुई। डॉ॰ राइट ने स्वामीजी को धर्मसम्मेलन के सभापति के नाम एक परिचय पत्र दिया। इस पत्र में डॉ॰ राइट ने यह लिखा था, "यहाँ एक ऐसा व्यक्ति है जो अपने यहाँ के सारे विद्वान प्रोफेसरों की इकट्ठी विद्वत्ता से भी कहीं अधिक विद्वान है।" उनका भाषण भारत की सार्वदेशिकता और विशाल हृदयता से ओत–प्रोत था जिसने वहाँ के हर

 ISBN : 978-93-80216-07-2

श्रोता को मुग्ध कर दिया। शिकागो धर्म सम्मेलन में स्वामीजी ने इन शब्दों से अमेरिका के उस अतुल जनसमुदाय को सम्बोधित किया 'अमेरिका निवासी भगिनी एवं भ्रातृगण!' ऐसा सम्बोधन तो वहाँ की जनता के लिए दिव्य था–फलतः ऐसी तुमुल हर्ष-ध्वनि हुई कि वह लगातार 2 मिनिट तक जारी रहीं स्वामी के इन दो सरल शब्दों में निहित तीव्र आन्तरिक भावना, स्वामीजी का महान व्यक्तित्व, उनका तेजस्वी मुखमण्डल, उनके गेरुआ वस्त्र आदि का इतना भव्य प्रभाव हुआ कि दूसरे ही दिन समाचार पत्रों ने उन्हें उस पूरे धर्मसम्मेलन में सर्वश्रेष्ठ एवं महानतम व्यक्ति कहकर वर्णित किया। सम्मेलन में आए हुए अन्य प्रतिनिधियों ने केवल अपने-अपने धर्म की ही दुहाई दी, स्वामीजी का भाषण उस धर्म पर हुआ जो आकाश के समान विशाल एवं समुद्र जैसा गहन है। 16 दिसम्बर, 1895 को विवेकानन्द स्वदेश लौट आए। 1898 में कोलकाता के पास वैलूर में उन्होंने विख्यात रामकृष्ण मिशन स्थापित किया। देश के विभिन्न भागों में मिशन की अनेक शाखाएं थीं और स्कूलों, अस्पतालों और दवाखानों, अनाथालयों, पुस्तकालयों आदि की स्थापना द्वारा उसने समाज सेवा की। इस प्रकार मिशन ने व्यक्तिगत मुक्ति पर नहीं बल्कि सामाजिक भलाई या सामाजिक सेवा पर जोर दिया। 1989 में उन्होंने पश्चिम की दूसरी यात्रा की, सेनफ्रांसिस्कों में 'शान्ति आश्रम' और 'वेदान्त सोसाइटी' की स्थापना की और पेरिस में आयोजित धार्मिक इतिहास परिषद में भाग लिया। 4 जुलाई, 1902 को केवल 39 वर्ष की अल्पायु में उनका देहावसान हो गया।

विवेकानन्द के सामाजिक विचार–

मूल रूप से एक धार्मिक चिन्तक और सुधारवादी होते हुए भी धर्म सुधार के लक्ष्य की प्राप्ति हेतु उन्होंने समाज सुधार पर जोर ही नहीं दिया, उसे अनिवार्य भी बताया। रामकृष्ण मिशन की स्थापना के अवसर पर उन्होंने इस बात पर पूरा जोर दिया कि सामाजिक सेवा और सुधार कार्यों को धर्म तथा आध्यात्मिक साधना के एक महत्वपूर्ण अंग के रूप

में अंगीकार किया जाना चाहिए, तभी धर्म सुधार आन्दोलन के लक्ष्यों को प्राप्त करने में सफलता प्राप्त की जा सकती है। अतः उनके द्वारा धर्म सुधार एवं पुनरुत्थानवादी आन्दोलन, अनिवार्य रूप से समाज सुधार तथा उसके पुनरुतथानवादी आन्दोलन से जुड़ा हुआ है तथा वह उसकी पृष्ठभूमि का निर्वाह करता हुआ दिखाई देता है। उन्होंने उसके माध्यम से हर उस सामाजिक कुरीति और बुराई का विरोध करते हुए उस पर प्रहार किया जो मनुष्य के नैतिक और आध्यात्मिक विकास में उन्हें अवरोधस्वरूप दिखाई दी।

स्वामी विवेकानन्द ने इस दृष्टि से तत्कालीन समाज में व्याप्त रूढ़िवादिता तथा अस्पृश्यता आदि पर प्रहार करते हुए उसे एक गड्ढ़े में भरे हुए दुर्गन्धित जल के समाज की जीवन्तता को नष्ट कर उसकी मृत्यु का कारण सिद्ध हो रहा है। इस हेतु उन्होंने पंडे-पुजारियों के रूप में प्रतिष्ठित समाज के तथाकथित ठेकेदारों पर आक्रमण करते हुए कहा कि ये लोग समाज में अपना प्रभुत्व बनाये रखने के लिए उसमें तरह-तरह के अंधविश्वासों का प्रचार-प्रसार करते हैं और इस तरह रूढ़िवाद और अस्पृश्यता को जीवित रखने में उसके एक प्रमुख स्तम्भ की भाँति कार्य करते हैं। वर्तमान सामाजिक पतन के लिए यही लोग प्रमुख उत्तरदायी हैं। अतः समाज से ऐसे अनुदारवादी दकियानूस कठमुल्लाओं के प्रभुत्व को समाप्त किया जाना जरूरी है तथा जितनी शीघ्रता से यह कार्य हो सके, उतना वह समाज के लिए लाभदायक सिद्ध होगा। इस दृष्टि से उन्होंने समाज में व्याप्त निम्नलिखित कुरीतियों और बुराइयों का विरोध ही नहीं किया, उनके उन्मूलन पर भी जोर दिया।

1. जाति-व्यवस्था एवं ब्राह्मण प्रभुत्व का विरोध-

स्वामी विवेकानन्द ने भारत में विद्यमान जाति-व्यवस्था की कटु आलोचना करते हुए उसके अनुदारवादी एवं प्रगति-विरोधी रूप पर प्रहार किया तथा उसके उन्मूलन की आवश्यकता पर बल दिया। उनके

 ISBN : 978-93-80216-07-2

मतानुसार यह एक ऐसी व्यवस्था है जो अपने कठोर बन्धनों के कारण मनुष्य को ऊपर उठने के अवसर और साधन प्रदान नहीं करती है लेकिन एक यथार्थवादी चिन्तक होने के नाते विवेकानन्द यह अच्छी तरह से समझते थे कि यह व्यवस्था लम्बे समय तक कायम रहने के कारण भारत में इतनी रूढ़ हो चुकी है कि इसका पूर्णतः उन्मूलन व्यावहारिक दृष्टि से सम्भव नहीं है। अतः जातिगत संकीर्ण रूढ़िवादी भेदभावों को मिटाने के लिए तथा जातीय समानता स्थापित करने की दृष्टि से उन्होंने यह उचित समझा कि उच्च को निम्न स्तर तक लाने के बजाय निम्न को उच्च स्तर तक ले जाना ही उचित और तर्कसम्मत होगा। इस हेतु उन्होंने मूल कर्म–आधारित चतुर्वर्ण–व्यवस्था को पुनर्जीवित कर जन्म–आधारित जाति–व्यवस्था का इस प्रकार सुधार किया जाये कि जिससे कर्म में परिवर्तन कर निम्न वर्णों के लोगों को उठाकर उच्च वर्णों के समान स्तर तक लाया जा सके। इस आधार पर उनकी मान्यता थी कि ब्राह्मणों को निम्न स्तर पर लाने के स्थान पर निम्न स्तर के शूद्र वर्ण के लोगों को शिक्षा तथा संस्कृति के विकास के माध्यम से उनके स्तर तक ले आना चाहिए। उच्चतर को निम्नतर के स्तर तक लाने में कोई विशेष लाभ नहीं होगा इस उद्देश्य को ध्यान में रखकर उन्होंने कहा कि "एक ओर आदर्श है ब्राह्मण तथा दूसरी ओर, आदर्शहीन है चाण्डाल। अतः चाण्डाल को उठाकर ब्राह्मण स्तर तक लाना ही जाति–व्यवस्था से उत्पन्न असमानता रूपी बुराई के उन्मूलन का कारगर उपचार है।"

2. तत्कालीन शिक्षा पद्धति का विरोध–

स्वामी विवेकानन्द शिक्षा को सामाजिक और वैयक्तिक विकास का प्रमुख साधन मानते थे तथा इसी आधार पर वे तत्कालीन शिक्षा व्यवस्था का विरोध करते थे। उनके अनुसार शिक्षा का लक्ष्य मनुष्य–मस्तिष्क में विभिन्न तरह का ज्ञान और सूचनाओं को ठूँसना नहीं वरन् उसे ऐसा ज्ञान प्रदान जिसका उपयोग करके वह स्वयं का रचनात्मक आधार पर जीवन

और चरित्र निर्माण कर सके और वह वास्तविक दृष्टि से एक मनुष्य बन सके लेकिन उनका कहना था कि वर्तमान शिक्षा प्रणाली इसे दृष्टि से शून्य है। उन्होंने बहुत मार्मिक शब्दों में इस दृष्टि से अपने दु:ख को अभिव्यक्त करते हुए कहा कि हमारी शिक्षा की दृष्टि से इस समय स्थिति एकदम पशु समान है तथा समाज का चाबुक ही हमारा नियन्त्रक है। यदि पुलिस के रूप में वह समाज में विद्यमान न हो तो सम्भवत: ऐसा कोई पाप और कुकर्म नहीं है जिसे करने के लिए हम तैयार न हों। वर्तमान में शिक्षा नहीं, भय ही हमारा जीवन नियन्त्रक है इसलिए यह सच्ची शिक्षा नहीं है।

शिक्षा की दृष्टि से वे प्राचीन गुरुकुल प्रणाली के समर्थक थे तथा गुरु-शिष्य परम्परा को पुनर्जीवित करना चाहते थे। शिक्षा के पाठ्यक्रम का इस भाँति निर्धारण करना चाहते थे जिससे कि विद्यार्थी अपने प्राचीन ग्रन्थों का अध्ययन कर उनके माध्यम से अपनी प्राचीन गौरव से परिचित हो सके तथा उसी के अनुरूप अपने चरित्र तथा जीवन का निर्माण कर सके। इस दृष्टि से वे अंग्रेजी शिक्षा के विरोधी थे लेकिन अंग्रेजी भाषा के अध्ययन के विरोधी नहीं थे इस दृष्टि से वे चाहते थे कि भारतीय आंग्ल-भाषा का अध्ययन करें ताकि वे उसके माध्यम से वर्तमान में ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में होने वाली प्रगति से अवगत ही नहीं हो सकें वरन् उसका उपयोग स्वयं के तथा समाज के उत्थान हेतु भी कर सके।

3. पश्चिमी अंधानुकरण का विरोध–

विवेकानन्द हृदय से चाहते थे कि भारतीय लोग पुरानी अनुदार कुरीतियों और रूढ़ियों से मुक्त होकर जीवन के हर क्षेत्र में उन्नति करें और अपने व्यक्तित्व के सर्वांगीण लक्ष्य को प्राप्त करें लेकिन वे इस हेतु पश्चिम के अंधानुकरण के विरूद्ध थे। उनके अनुसार विकास की यह पृष्ठभूमि अनिवार्य रूप से भारतीय होनी चाहिए। इसी ओर संकेत करते हुए उन्होंने एक बार कहा कि :–

 ISBN : 978-93-80216-07-2

"हमें अपने प्राकृतिक स्वभाव के अनुसार विकास करना चाहिए। इस दृष्टि से विदेशी समाजों की कार्य-प्रणालियों को अपनाना व्यर्थ है। मैं इस हेतु दूसरी जातियों की संस्थाओं की आलोचना नहीं करता हूँ। वे उनके लिए कल्याणकारी हैं लेकिन हमारे लिए नहीं। हम पश्चिमी लोगों की तरह नहीं हो सकते, अतः उनकी नकल व्यर्थ है। जिस दिन आप विकास की दृष्टि से पश्चिम का अंधानुकरण करेंगे, उस दिन आप नष्ट हो जायेंगे। आपके जीवन में कोई प्रकाश नहीं होगा। भारत का पश्चिमीकरण एक असम्भव ही नहीं मूर्खतापूर्ण कार्य भी है।"

विवेकानन्द द्वारा इस पश्चिमी अंधानुकरण का विरोध किए जाने का यह अर्थ नहीं है कि पश्चिम को पूर्णतः बुरा और अपने प्रतिकूल समझते थे। उनका विरोध उसके बुरे पक्ष तक ही सीमित था जिसका अनुकरण हमारे विकास पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकता था अन्यथा वे पश्चिम की बहुत-सी उपयोगी ओर लाभदायक अवधारणाओं को जो हमारे लिए उपयोगी हो सकती हैं और समाज के नव उदाहरणस्वरूप हम उनके मानव मात्र की समानता, स्वतन्त्रता तथा समाजवाद की उपयोगिता में विश्वास को ले सकतें हैं। भारतीय समाज में इस दृष्टि से व्याप्त कुरीतियों ओर अंधविश्वासों के उन्मूलन के लिए उन्होंने इन पश्चिमी अवधारणाओं के अनुकरण का खुला समर्थन किया तथा उनका कार्यान्वयन उसके विकास की दृष्टि से अवाश्यक बताया।

4. मूर्ति-पूजा का समर्थन–

पश्चिमी प्रभाव के कारण देश में और मुख्यतः बंगाल में मूर्ति-पूजा का विरोध का एक आम प्रचलन की बात हो गया था। ब्रह्म समाज और आर्य समाज दोनों इसके विरोधी थे। विवेकानन्द ने मूर्ति-पूजा के विरुद्ध उनके इस मत की चिन्ता नहीं करते हुए मूर्ति-पूजा का इस रूप में समर्थन किया कि वह मनुष्य-मन को ईश्वरीय-अनुभूति के लिए तैयारी करती है। उन्होंने यह माना कि मूर्ति ईश्वर नहीं है लेकिन वह अपनी पूजा के द्वारा हमें ईश्वर के निकट ले जाती हैं। अतः वह हमारे आत्मिक

विकास की दृष्टि से उसकी प्रारम्भिक अवस्था है तथा आत्मिक दृष्टि से इतने विकसित नहीं हैं कि वे निराकार ईश्वर की सफल उपासना कर सकें, उनके लिए वह ईश्वरीय अनुभूति का अनुभव करने का एक सबल साधन है। उनके अनुसार मूर्ति-पूजा ठीक वैसी महत्पूर्ण है जैसी बाल्यावस्था वृद्धावस्था की परिपक्व बुद्धि के लिए अतः अपनी इस मान्यता को स्पष्ट करते हुए उन्होंने ने कहा कि–

"बन्धुओं, यदि आप किसी बाह्य सहायता के बिना ही निराकार परमात्मा की उपासना करने में समर्थ हैं तो ऐसा ही करें लेकिन आप लोग उन दूसरे लोगों की निन्दा क्यों करते हैं जो ऐसा नहीं कर सकते।"

अतः इस आधार पर मूर्ति-पूजा का समर्थन करते हुए उन्होंने आगे लिखा कि "आजकल यह सामान्य बात हो गयी है कि अधिकांश लोग इस बात को स्वीकार करते हैं कि मूर्ति-पूजा उचित नहीं है। मैं भी कभी ऐसा ही कहता और सोचता था फलस्वरूप दण्ड के रूप में मुझे एक ऐसे पुरुष के चरणों में बैठकर शिक्षा ग्रहण करनी पड़ी जिसने मूर्ति-पूजा के माध्यम से ही सब कुछ प्राप्त किया था। मैं स्वामी रामकृष्ण परमहंस ही बात कर रहा हूँ यदि मूर्ति-पूजा के द्वारा स्वामी रामकृष्ण परमहंस जैसे उच्च कोटि के संत-पुरुषों का निर्माण हो सकता हे तो फिर मेरा कहना है कि आप एक नहीं अनेक मूर्तियों की पूजा करें।"

स्वामी विवेकानन्द की मूर्ति-पूजा के सम्बन्ध में इस अवधारणा के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि वे मूर्ति-पूजा के मनुष्य द्वारा ईश्वरीय–अनुभूति करने हेतु एक अन्तिम नहीं वरन् सहायक तत्व मानते थे जो उसके लिए प्रारम्भिक अवस्था के लिए आवश्यक था। वास्तविक उपासना तो ईश्वर के निराकार स्वरूप की ही की जानी चाहिए लेकिन मनुष्य जब तक उसके लिए आवश्यक आत्मिक उत्थान नहीं कर लेता, तब तक मूर्ति-पूजा उसका इस दृष्टि से एक अवलम्बन हो सकता है। अतः मूर्ति-पूजा की उपयोगिता को इसी रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए।

 ISBN : 978-93-80216-07-2

5. सार्वभौम धर्म का सन्देश–

सामाजिक दृष्टि से स्वामी विवेकानन्द ने धार्मिक सहिष्णुता का उपेदश दिया। इस दृष्टि से उन्होंने विभिन्न धर्मों को ईश्वरीय–उपासना का साधन घोषित करते हुए उनके सह–अस्तित्व पर जोर दिया। उन्होंने यह प्रतिपादित किया कि एक मनुष्य हिन्दू, मुसलमान, ईसाई या बौद्ध होते हुए भी धार्मिक दृष्टि से पूर्ण पुरुष हो सकता है। इस आधार पर उन्होंने सार्वभौम धर्म की अवधारणा प्रतिपादन करते हुए उसका स्वरूप निर्माणात्मक बताया, विध्वंसात्मक नहीं। उनके अनुसार धार्मिक निष्ठाएँ स्वैच्छिक होनी चाहिए। वे किसी पर जबरदस्ती लादी नहीं जानी चाहिए। इस तरह धर्म के नाम पर धर्म परिवर्तन हेतु प्रयुक्त हिंसा को उन्होंने एक धर्म–विरोधी कर्म घोषित किया और धार्मिक सहिष्णुता के आधार पर मानव–समाज को उससे बचने का उपदेश दिया।

6. अधिकार नहीं, कर्तव्य पर जोर–

स्वामी विवेकानन्द कर्मवादी थे। भगवत् गीता द्वारा दिए गए कर्म के उपदेश में वे पूर्ण आस्था रखते थे और इसे ही वेदान्त का सार मानते थे। उनके अनुसार मुक्ति हेतु संसार–त्याग और कर्तव्य– विमुख होना महान अपराध था। संसार में रहकर कर्तव्यों का निर्वाह करना ही वे सच्ची मुक्ति या धर्म मानते थे। इसे दृष्टि से जो लोग कर्तव्यों का निर्वाह नहीं करते हुए अधिकारों की माँग करते थे, उनकी भर्त्सना करते तथा कर्तव्य–निर्वाह का उपदेश देते हुए उन्होंने कहा कि "तुम ईश्वर की खोज में कहाँ जाना चाहते हो? क्या निर्धन, निर्बल और दीन–हीन ईश्वर का रूप नहीं है? तुम पहले इनकी पूजा क्यों नहीं करते? गंगा–किनारे कुआँ खोदने क्यों जाते हों? इन लोगों को अपना ईश्वर समझो। इनकी भलाई के लिए प्रयत्न करो। मैं उस व्यक्ति को महात्मा कहता हूँ जिसका हृदय दरिद्र के लिए द्रवित होता है अन्यथा वह दुरात्मा है।"

इस प्रकार स्वामी विवेकानन्द ने कर्तव्य–बोध के द्वारा दीन–दरिद्र

की सेवा ही मनुष्य का सच्चा कर्म घोषित किया और कहा कि इसी में उसके सारे अविष्कार निहित हैं। सेवा भाव से किया गया कर्तव्य निर्वाह ही उनके अनुसार मनुष्य के सम्पूर्ण अधिकारों का स्रोत है। इस आधार पर जो अपने कर्तव्यों का निर्वाह करता है, उसे अधिकार स्वतः प्राप्त हो जाते हैं। अतः व्यक्ति को अपने कर्तव्यों को भूलकर अधिकारों की बात नहीं करनी चाहिए।

ऐसे लोगों के प्रति उन्होंने क्षोभ प्रकट किया और दीन-दुखियों की सेवा करना ही परम कर्तव्य बताया। उन्होंने कहा कि अपने कर्तव्य-निर्वाह की दृष्टि से मनुष्य को सदा जागरुक रहना चाहिए। इस दृष्टि से स्वयं सन्यासी होते हुए भी विवेकानन्द ने उस व्यक्ति को सन्यासी से श्रेष्ठ घोषित किया जो गृहस्थ होते हुए भी निस्वार्थ भाव से अपने कर्तव्यों का निर्वाह करता है। कर्तव्य-निर्वाह ही अधिकारों की जननी है, स्वामी विवेकानन्द का यह दृढ़ मत था जिस पर उन्होंने सर्वाधिक बल दिया।

7. क्रान्तिकारी नहीं, शान्ति पूर्ण साधनों से सामाजिक परिवर्तन का सन्देश–

स्वामी विवेकानन्द समाज सुधार हेतु क्रान्तिकारी हिंसक साधनों के प्रयोग के समर्थक नहीं थे। उनकी मान्यता थी कि सामजिक कुरीतियों, बुराईयों और असंगतियों का उन्मूलन विध्वंसात्मक साधनों से नहीं, शान्तिपूर्ण रचनात्मक साधनों के प्रयोग के माध्यम से होना चाहिए। यही मार्ग स्थायी परिवर्तन का मार्ग है। अपनी इस मान्यता का समर्थन करते हुए उन्होंने कहा कि "विश्व-इतिहास हमें शिक्षा देता है कि जहाँ कहीं भी कट्टरता के साथ सुधार किए गए, वहाँ उनका एकमात्र परिणाम यह निकला है कि उन्होंने उसी उद्देश्य को पराजित कर दिया है जिस उद्देश्य को लेकर उन्हें कार्यान्वित किया गया था।" उनके इस कथन से स्पष्ट है कि स्वामी विवेकानन्द सामाजिक सुधार हेतु क्रान्तिकारी तरीकों के पक्ष में नहीं थे वे इस हेतु क्रमिक और शान्तिपूर्ण तरीकों से किए गए सामाजिक परिवर्तन के समर्थक थे। वे इस तरीके को ही समाज और

 ISBN : 978-93-80216-07-2

व्यक्ति दोनों के लिए हितकर और कल्याणकारी मानते थे तथा इसके माध्यम से किए गए सुधारों को स्थायी समझते थे क्योंकि उनके पीछे जन-समर्थन रूपी शक्ति होती है तथा वे समाज के अधिकांश भाग को स्वीकार्य होते हैं।

स्वामी विवेकानन्द द्वारा शान्तिपूर्ण तरीकों से किए जाने वाले सामाजिक परिवर्तन का समर्थन इसलिए किया गया था कि पहले तो वे पश्चिम में हिंसात्मक तरीकों से किए गए सामाजिक परिवर्तनों को हश्र देख चुके थे। उनके पीछे की हिंसक शक्ति के समाप्त होते ही उनका अस्तित्व ही नष्ट हो गया और समाज में पुनः वे ही बुराईयाँ घर कर गयी जिनके उन्मूलन के लिए हिंसक तरीके अपनाकर उन्हें अंजाम दिया गया था। इस कारण के अतिरिक्त जो दूसरा प्रबल कारण शान्तिपूर्ण तरीकों के उनके द्वारा समर्थन किए जाने का था, वह था भारतीय समाज की अहिंसक, शान्तिप्रिय और शनैः-शनैः सुधार में आस्था और उसकी प्रकृति। उनकी इस अवधारणा के अनुसार भारतीय समाज एक धर्म-परायण समाज होने के नाते हमेशा क्रान्तिकारी ओर हिंसक सामाजिक परिवर्तनों का नहीं वरन् अहिंसक शान्तिपूर्ण सामाजिक परिवर्तन के तरीकों का आस्थावान् समर्थन कर रहा है क्योंकि ऐसे तरीके अपनाकर उसने अपनी उस धार्मिक-सांस्कृतिक पृष्ठभूमि को बनाए ही नहीं रखा है वरन् उसे पुष्ट भी किया है। स्वाधीनता आन्दोलन के सर्वोपरि नेता महात्मा गाँधी ने भी इस बात का अनुभव कर देश की स्वतन्त्रता के लिए चलाए जाने वाले आन्दोलन के अहिंसक रूप पर पर्याप्त जोर दिया तथा जहाँ तक उनका वश चला, उसे अहिंसक प्रकृति का ही रखा।

भारतीय समाज की इस धार्मिक-अहिंसक प्रकृति से प्रभावित होकर स्वामी विवेकानन्द ने शान्ति पूर्ण सामाजिक परिवर्तनों का समर्थन किया तथा उनको स्थायी चरित्र का घोषित करते हुए देश के लिए हितकारी बताया। इस तरह वे शान्ति पूर्ण रचनात्मक तरीकों से श्रेष्ठ ही नहीं समझते थे वरन् उनके माध्यम से किए गए सामाजिक परिवर्तनों को

स्थायी तथा कल्याणकारी भी मानते थे।

विवेकानन्द का योगदान–

स्वामी विवेकानन्द के संक्षिप्त लेकिन कर्मठ और तेजस्वी जीवन के अध्ययन से हम स्वाभाविक रूप से उनके योगदान की दृष्टि से इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि उन्होंने न सिर्फ देशवासियों को अभय और शक्ति का सन्देश दिया वरन् अपने गहन वेदान्त ज्ञान से भारतीय सभ्यता के प्राचीन गौरव तथा उसकी श्रेष्ठता से भी विश्व को परिचित कराया। उनके इस महान कार्य से जहाँ एक ओर देशवासियों में अपने प्राचीन सांस्कृतिक गौरव और महानता के प्रति जागृति उत्पन्न की तथा उनमें स्वाभिमान भाव उत्पन्न कर उन्हें अपने हीन भाव से मुक्त होने में सहायता प्रदान की, वहीं दूसरी ओर, विश्व और मुख्यत: पश्चिमी देशों को उसका परिचय देकर भारत को सांस्कृतिक दृष्टि से हीन समझने की भावना को त्याग करने के लिए बाध्य किया। सन् 1893 में अमेरिकी नगर शिकागों में आयोजित सर्वधर्म सम्मेलन में इस दृष्टि से दिया गया उनका प्रवचन आज भी सिर्फ देश में ही नहीं, विदेशों में भी बड़े गर्व और सम्मान के साथ याद किया जाता है। दरअसल वे इस दृष्टि से भारतीय धर्म और संस्कृति की महानता से विश्व को परिचित कराने वाले सन्देशवाहक या अग्रदूत थे।

इसके साथ ही उन्होंने अपने संदेशों और उपदेशों तथा उनके कार्य रूप में परिणित करने वाले संगठन रामकृष्ण मिशन की स्थापना कर उसके माध्यम से इस बात पर अपना पूर्ण बल देकर यह सिद्ध किया कि जब तक देश के अधिकांश लोग भूख और अभावों से पीड़ित हैं तथा अज्ञान के अंधकार से ग्रस्त हैं, तब तक न तो देश के स्वतन्त्र होने की और न उसकी प्रगति की किसी तरह की कल्पना की जा सकती है। राष्ट्रोत्थान और उसकी स्वतन्त्रता के लिए उसका इन रोगों से उद्धार आवश्यक है। जब तक उसका इन रोगों से पुख्ता उपचार नहीं किया जाता और उसे इनसे मुक्त नहीं किया जा सकता, तब तक भारतीय

 ISBN : 978-93-80216-07-2

समाज और राष्ट्र किसी तरह की उन्नति के सोपानों का स्पर्श नहीं कर सकता। दलितों द्वारा उनके चिन्तन और कर्म की एक प्रमुख विशेषता थी जिसे सर्वत्र स्वीकार किया गया तथा उनके बाद में विकसित होने वाले राष्ट्रीय आन्दोलन का वह एक प्रमुख उद्देश्य और आधार बना। यह विवेकानन्द की दूरदर्शिता का ही परिणाम था कि उन्होंने भारत की इस समस्या को एक ज्वलन्त समस्या के रूप में प्रस्तुत किया जिसका तुरन्त उपचार राष्ट्रीय विकास के लिए आवश्यक था। विवेकानन्द ने इसी आवश्यकता पर अत्यधिक जोर देकर उसके महत्व से भी सभी को परिचित कराया। यह उनका राष्ट्रोत्थान की दृष्टि से एक बहुत बड़ा योगदान था।

उन्होंने समाज में फैली बुराइयों जैसे–जाति प्रथा, अशिक्षा, पश्चिमी अंधानुकरण, विविध तरह के अनुष्ठान ओर कर्मकांड, पाखंड आदि का विरोध कर प्रत्येक व्यक्ति की भौतिक, नैतिक और आत्मिक उन्नति हेतु वेदान्त–आधारित जो सन्देश दिया, वह अपने आप में महत्वपूर्ण ही नहीं वरन् इन बुराइयों और कुरीतियों के उन्मूलन में भी सहायक सिद्ध हुआ। इस दृष्टि से भारतीय पुनर्जागरण आन्दोलन में स्वामी विवेकानन्द ने एक अग्रणी और महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर अपने बाद में आने वाले लोगों का मार्ग प्रशस्त ही नहीं किया वरन् उन्हें किस दिशा में चलाना है, इस ओर भी सशक्त संकेत दिया।

उन्होंने देशवासियों को शक्ति और निर्भीकता का सन्देश देकर उनके आत्म–बल का विकास ही नहीं किया वरन् यह भी सिद्ध किया कि वे शक्तिशाली बनकर ही विदेशी दासता से संघर्ष कर उससे मुक्ति प्राप्त करने में सफल हो सकते हैं। सक्रिय राजनेता नहीं होते हुए भी इस दृष्टि से उनके द्वारा दिए गये सन्देश, उपदेश ओर देशवासियों का उनके अनुसरण का आह्वान बहुत महत्व रखते हैं सुसुप्त भारत की आत्मा को जाग्रत करने उसे स्वयं पर आत्म– विश्वास करने और उसे मुक्ति का मार्ग दिखाने की दृष्टि से विवेकानन्द का योगदान चिरस्मरणीय है तथा

इतिहास में स्वर्णाक्षरों में उल्लेख किया जाने के योग्य है। विवेकानन्द देश के सच्चे सपूत थे जिन्होंने अपनी अमरवाणी और ओजस्वी कर्म से न सिर्फ भारतीय जनता को वरन् विश्व जन-समुदाय को भी उनके रोगों से परिचित कराने में ही महान योगदान दिया तथा उन्हें उनसे मुक्ति का मार्ग दिखाकर उनका चिर-उपकार किया हैं। निसन्देह विवेकानन्द भारतीय होते हुए भी भारत के ही नहीं विश्व के एक उद्धारक थे जिन्होंने सर्वधर्म समभाव का सन्देश देकर एक नए सुखी और समृद्ध विश्व की स्थापना में नेतृत्व प्रदान करने वाले की भूमिका का बखूबी निर्वाह किया तथा विभाजित विश्व को एकताबद्ध होने की प्रेरणा तथा सन्देश प्रदान किया। इसी में भारत का ही नहीं, विश्व का कल्याण निहित है, इसे सिद्ध करने में उन्होंने अपना संक्षिप्त, पर सम्पूर्ण जीवन समर्पित कर दिया। इस दृष्टि से भारत ही नहीं, सम्पूर्ण विश्व उनका चिरऋणी है और अनन्त काल तक रहेगा।

सन्दर्भ सूची–

1. शिकागो वक्तृता: स्वामी विवेकानन्द, श्री रामकृष्ण आश्रम, नागपुर, पृष्ठ 10-12
2. डॉ॰ वी.पी. वर्मा 'आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तन', पृष्ठ–138
3. द कम्पलीट वर्क्स ऑफ स्वामी विवेकानन्द, खंड–3 पृष्ठ–190
4. रोमां रोलां, विवेकानन्द की जीवनी, अद्वैत आश्रम, कलकत्ता।
5. एम. कुमार, दीप्ति शर्मा, 'स्वामी विवेकानन्द' अर्जुन पब्लिकेशन हाऊस नई दिल्ली।
6. 'स्वामी विवेकानन्द जीवनी और व्याख्यान', रवि पब्लिकेशन, मेरठ।
7. डा. बी.एल. फड़िया 'आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तक' साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, पृष्ठ 47-55
8. जीवत मेहता 'भारतीय राजनीतिक चिन्तक एस.बी.पी.डी. पब्लिकेशन हाऊस आगरा।'

 ISBN : 978-93-80216-07-2

मां सरस्वती के सम्मुख दीप प्रज्ज्वलित कर संगोष्ठी
का शुभारम्भ करते हुए माननीय मुख्य अतिथि महोदय

माननीय मुख्य अतिथि डॉ॰ अरूण मोहन शैरी को पुष्प गुच्छ
भेंट कर उनका स्वागत करती हुई प्राचार्या महोदया

संगोष्ठी के उद्घाटन सत्र का संचालन करती हुई डॉ॰ दिव्यानाथ

संगोष्ठी में उपस्थित विद्वत्जन परिचर्चा का आनंद लेते हुए

उद्घाटन सत्र के अतिथियों का अपने वक्तव्य द्वारा
स्वागत करती हुई प्राचार्या जी

विषय प्रवर्तन करते हुए संगोष्ठी संयोजक डॉ॰ किशोर कुमार

मुख्य वक्ता प्रो॰ संजीव कुमार शर्मा अपना उद्बोधन देते हुए

अध्यक्षीय वक्तव्य देते हुए मुख्य अतिथि डॉ॰ अरूण मोहन शैरी

संगोष्ठी में उपस्थित विद्वत् मण्डल

डॉ॰ वी॰ के॰ शनवाल को पुष्प गुच्छ प्रदान करती हुई
डॉ॰ अर्चना सिंह

द्वितीय तकनीकी सत्र का संचालन करती हुई डॉ॰ सुशीला

द्वितीय तकनीकी सत्र में शोधपत्र प्रस्तुत करती हुई प्रतिभागी

द्वितीय तकनीकी सत्र में शोधपत्र प्रस्तुत करती हुई डॉ॰ अपर्णा शर्मा

द्वितीय तकनीकी सत्र में शोधपत्र प्रस्तुत करती हुई
डॉ॰ कनकलता यादव

तकनीकी सत्र के अवसर पर परिचर्चा का आनंद लेती हुई
प्राचार्या महोदया एवं अन्य विद्वत्जन

तकनीकी सत्र में मंचासीन डॉ॰ लक्ष्मी प्रकाश,
डॉ॰ विनोद कुमार शनवाल एवं डॉ॰ अनीता रानी राठौर

मुख्य वक्ता प्रो॰ संजीव शर्मा को स्मृति चिह्न भेंट करती हुई प्राचार्या महोदया

डॉ॰ राजेश कुमार का तकनीकी सत्र में पुष्प गुच्छ भेंट कर स्वागत करती हुई डॉ॰ दिव्या नाथ

डॉ॰ दिनेश चहल को पुष्प गुच्छ प्रदान कर स्वागत करते हुए डॉ॰ सत्यन्त कुमार

तकनीकी सत्र का अध्यक्षीय भाषण देते हुए डॉ॰ राजेश कुमार

अपना वक्तव्य प्रदान करते हुए प्रथम तकनीकी सत्र के अतिथि वक्ता डॉ॰ दिनेश चहल

प्रथम तकनीकी सत्र का मंच संचालन करती हुई डॉ॰ दीप्ति वाजपेयी

तकनीकी सत्र में सम्भाषण करते हुए डॉ॰ अजय चतुर्वेदी

शोध पत्र प्रस्तुत करती हुई प्रतिभागी

समापन सत्र का मंच संचालन करती हुई डॉ॰ अर्चना सिंह

समापन सत्र के अतिथि वक्ता डॉ॰ राजेश कुमार का
पुष्प गुच्छ भेंट कर स्वागत करती हुई डॉ॰ दीप्ति वाजपेयी

संगोष्ठी के समापन सत्र के विशिष्ट अतिथि श्री हीरालाल यादव
का पुष्प गुच्छ द्वारा स्वागत करते हुए डॉ॰ किशोर कुमार

संगोष्ठी के समापन सत्र में अपना प्रभावशाली उद्बोधन
देते हुए श्री हीरालाल यादव

संगोष्ठी की आख्या प्रस्तुत करती हुई संगोष्ठी आयोजन सचिव
डॉ॰ मोनिका सिंह

धन्यवाद ज्ञापन करते हुए संगोष्ठी संयोजक
डॉ॰ दिनेश चन्द शर्मा

समापन सत्र की मुख्य अतिथि माननीय प्राचार्या महोदया को
स्मृति चिह्न प्रदान करते हुए संगोष्ठी संयोजक डॉ॰ किशोर कुमार

संगोष्ठी के समापन अवसर पर उपस्थित श्री हीरालाल यादव
एवं महाविद्यालय परिवार

National Advisory Board

- **Dr. Ashwani Kumar Goyal,** Joint Secretary, Deptt. of Higher Education, U.P. Government, Lucknow
- **Prof. R. K. Barik,** Deptt. of Public Administration, Indian Institute of Public Administration, New Delhi
- **Prof. Arun Mohan Sherry,** Chief Academic Officer, BRIDGE School of Management, NOIDA
- **Prof. Sanjeev Sharma,** Deptt. of Political Science, C.C.S. University, Meerut
- **Dr. Rajesh Kumar,** Associate Professor, Deptt. of History, Aryabhatta College, Delhi University, Delhi
- **Dr. Anand Singh,** Associate Professor, School of Buddhist Studies and Civilization, G.B.U, Greater Noida
- **Dr. Ajay Chaturvedi,** Associate Professor, Deptt. of History, Vardhman College, Bijnore, U.P.
- **Dr. Vinod Kumar Shanwal,** Head of Deptt. of Education and Training, School of Humanities and Social Science, Gautambuddh Nagar
- **Dr. Molik Gadani,** Associate Professor, Deptt. of Botany, St. Xavier College, Ahmedabad
- **Dr. A. K. Ranjit Singh,** Deptt. of Zoology, Rajsunakhala College, Rajsunakhala Nayagarh, Orissa
- **Dr. V. K. Singh,** Deptt. of Zoology, Agra College, Agra
- **Sh. Vikram Bhardwaj,** Deptt. of History, Govt. College, Karsog, Distt. Mandi, Himachal Pradesh

National Seminar Committees

Chief Patron	:	**Dr. Mahendra Ram** **Director- Higher Education, U.P.**
Patron	:	**Dr. Jyotsna Garg, Principal,** **K.M.G.G.P.G. College, Badalpur**
Conveners	:	**Dr. Kishor Kumar, Dr. Dinesh C. Sharma**
Organizing Secretaries	:	**Dr. Monika Singh, Dr. Anita Rani Rathore**

Advisory Board
Ms. Ranjana Jain
Dr. Sangita Gupta
Sh. J.P. Singh
Dr. Asha Rani
Dr. Jeet Singh
Dr. Harindra Kumar

Organizing Committee
Dr. Divya Nath
Dr. Deepti Bajpai
Dr. Anita Singh
Dr. Satyant Kumar
Sh. Sanjeev Kumar
Dr. Vineeta Singh

Treasurer
Dr. Arvind Yadav

Welcome Committee
Ms .Ranjana Jain
Dr. Archana Verma
Dr. Monika Singh
Dr. Sangita Gupta
Dr. Divya Nath
Sh. J. P. Singh
Dr. Anita Rani Rathore
Dr. Anita Singh

Master of Ceremoney
Dr. Divya Nath
Dr. Kishor Kumar
Dr. Deepti Bajpai
Dr. Archana Singh
Dr. Sushila

Editorial Board
Dr. Kishor Kumar
Dr. Divya Nath
Dr. Anita Rani Rathore
Dr. Deepti Bajpai
Dr. Vineeta Singh

Registration Committee
Dr. Nidhi Raizada
Sh. Sanjeev Kumar
Dr. Seema Devi
Dr. Kanaklata Yadav

Stage Decoration Committee
Dr. Shivani Verma
Ms. Shilpi
Ms. Nisha Yadav
Dr. Vineeta Singh
Dr. Sunita Sharma

Seating Arrangement Committee
Sh. Dheeraj Kumar
Dr. Pankaj Chaudhary
Sh. Pramod Mishra
Mohd. Waqar Raza

 ISBN : 978-93-80216-07-2

Sh. Chandra Prakash
Sh. Rajkumar

Sound Committee
Dr. Harindra Kumar
Dr. Dheeraj Kumar
Sh. Kanak Kumar
Sh. Mukesh Sharma

Beautification of College Premise
Dr. Sushila
Sh. Dheeraj Kumar
Ms. Pawan
Dr. Neelam Sharma
Dr. Rajesh Kumar Yadav
Dr. Vandana Sharma

Purchase Committee
Dr. Monika Singh
Dr. Divya Nath
Dr. Anita Rani Rathore
Dr. Dinesh C. Sharma
Dr. Kishor Kumar

Photography Committee
Dr. Anita Singh
Ms. Neha Tripathi
Dr. Pratibha Tomar

Travel Allowance & Finance Committee
Dr. Arvind Kumar Yadav
Dr. Harindra Kumar
Sh. Mahesh Bhati

Certificate Writing Committee
Dr. Kanak Kumar
Dr. Bhawana Yadav
Dr. Diksha
Dr. Mintu

Press and Publicity
Dr. Dinesh C. Sharma
Dr. Kishor Kumar
Dr. Jeet Singh
Dr. Satyant Kumar

Cultural Committee
Dr. Babli Arun
Dr. Sonam Sharma

Refreshment Committee
Dr. Asha Rani
Ms. Shilpi
Dr. Richa
Dr. Neelam Sharma

Lunch & Decoration Committee
Dr. Satyant Kumar
Dr. Pankaj Chaudhary
Dr. Rajesh Yadav
Sh. Pramod Mishra

Stationary, Banner and Folder Committee
Dr. Dinesh C. Sharma
Dr. Kishor Kumar

Disciplinary Committee
Ms. Ranjana Jain
Dr. Deepa Chand
Dr. Archana Singh
Dr. Jeet Singh
Dr. Satyant Kumar
Mohd. Waqar Raza
Sh. Pramod Kumar Mishra

The youth of India is excelling in practically all spheres of life the world over. More than three-fourths of our population is less than 40 years old, and if only we can harness the potential energy of these millions of young Indians, we could face any challenge as a nation. While it does make us feel good about the youth of India, we also have to consider the flip side of it, which is, the decline in the value-system of the youth today. One look at them and it makes us wonder, if making wealth is the only value that drives our young generation these days. The problem that technological advancement and globalisation in all fields has brought about in recent years is, how to get our young, whose role models and icons are mostly from the economic, technology, music, cinema and sports arenas, to consider nation-building as an important facet of our productive lives. The answer lies in making the modern youth understand and imbibe the teachings of Swami Vivekanand, given more than a hundred years ago. All that he wanted our youth to have, was the ability to 'feel', along with following the ideals of 'tyaga' and 'seva'. They were also supposed to build their physical and mental energies, and take concrete action based on the potent mantra of the three P's-Purity, Patience, and Perseverance. If the youth adhered to the above and also undertook physical, intellectual, and spiritual service to the society, it would in turn, also have benefits for their own spiritual growth. Thus Vivekanand's teachings and the message contained therein, if followed by the modern youth, could solve many problems that India is facing today. This could not only help the youth engage in nobler ventures, but also solve their inner conflicts and dilemmas.

SWAMI VIVEKANAND STUDY CENTRE
Km. MAYAWATI GOVT. GIRLS POST GRADUATE COLLEGE
Badalpur (Gautambudh Nagar) U.P. - 203207
Website : www.kmgcbadalpur.org
E-mail : principal@kmgcbadalpur.org

ISBN : 978-93-80216-07-2